# प्रस्तावना.

आज काल दुनियामां बहुधा जनस्वभावनुं वलण संस्कृत अने मागधी भाषामां लखायेला कठीन शास्त्रीय विषयो तरफ न दोरातां स्वभाषामां लखायेला सरल विषयो तरफ दोरावा लाग्युं छेः तेथी करीने दिवसे दिवसे शास्त्र संबंधी उच्च ज्ञान हीन, हीनतर थतुं जाय छे. ज्यांसुधी गुजराती भाषामां अनेक ग्रंथो बहार पडया नहोता, त्यांसुधी उच्च तत्वज्ञान मास करवानी उमेद धरावनाराओ संस्कृत तथा प्राकृत भाषाओनो अभ्यास करी ते द्वारा उच्च ज्ञान मेळवता हता पण तेवा मनुष्यो संख्यामां थोडा अने कोइक ठेकाणे जोवामां आवता. ज्यारे गुजराति भाषामां कथारूपे, नाटकरूपे, के तत्वज्ञानरूपे अनेक ग्रंथो बहार पडया, त्यारे लोकोनुं शास्त्रीय कठीन भाषा तरफ दुर्लक्ष थयुं अने तेथी ते द्वारा उच्च तत्वज्ञान मळतुं हतुं ते बंध थयुं. तेथी शास्त्र संबंधी गूढ रहस्योने स्वभाषामां बहार पाडवा जरूर जणाइ. वांचवानो शोख वधतो गयो तेम तेम भिन्न भिन्न विषयोना पुस्तको बहार पडता गया. पण तेमां धर्मनुं स्वरूप समजाववाने योग्य ग्रंथो घणुज थोडा छे. तेथी अमाराने अनुसरती भाषामां धर्मार्थ पुस्तको बहार पडवानी आवश्यकता जणायाथी अमारा तथा बीजा सज्जनोना आग्रहथी मुनि महाराज श्री वृद्धिचंद्रजीना शिष्य शांतमुर्ति मुनिमहाराज श्री कर्पुरविजयजीए परपम तथा कनिष्ट पंतिना अभ्यासीयोने अल्प श्रमे धर्म तत्वनो

बोध थाय एवा हेतुथी जैन हितोपदेश नामना पुस्तकनी रचना सरल अने रसीली भाषामां करीछे. जेनो पहेलो भाग अमारा तरफथी अगाउ प्रसिद्ध करवामां आव्योछे. ते पुस्तक विशेष प्रकारे जन प्रिय थइ पडयुं छेः जेना परिणामे, आ बीजा तथा त्रीजा भागनुं पुस्तक अमारा वाचक वर्ग समक्ष मूकता अमो भाग्यशाली थया छीए.

आ जैन हितोपदेशनुं पुस्तक पोताना नाम प्रमाणे पोतानुं गांभीर्य महत्व अने बोधकत्व जणावे छे वळी आ पुस्तकनो क्रम एवीतो सरळतार्थी गोठववामां आव्यो छे के जेथी उत्तम, मध्यम अने कनिष्ट ए त्रणे वर्गना वाचक अधिकारीओ स्वस्व बुद्धि अनुसारे निःशंकपणे तेनो लाभ लइ शकशे ए निर्विवाद छे; सिद्धांतरूप समुद्रने पार पामवा माटे नौका तुल्य आ ग्रंथ रत्ननुं एकवार अवलोकन करवाथी तेनी खरी उपयोगीता सज्जनो सहेजे समजी शकशे.

श्री जैन हितोपदेश भाग २ जानी शरूआतमां मंगलाचरणरूपे महाविदेहक्षेत्रमां विचरता श्री सीमंधर जिननी स्तुति कठिण शब्दनी फुटनोट साथे आप्या बाद श्री गणेंद्र मुनि विरचित सुभाषित रत्नावळी [illegible] धर्म नीति अने शुभ व्यवहारने उपयोगी पुरा गुण ४५ विषयो उपर स्फुटपणे विवेचन कर्युं छे. उक्त विषयोनुं अत्र दिग्दर्शन करवा करतां सहज पतन तेने वांची मनन करवानुं काम अमो वांचकवर्गनेज सोंपीए छीए. त्यार पछी ज्ञान अने चारित्र साधना सुस्थापक वैराग्यमां [illegible] चारित्र धारीने पंच महाव्रतमां पुनः स्थिर करवा माटे बांधी रचित बोध नोंधवामां आवेल छे. पछी 'धर्मनी पूर्वे' ए विषयनी [illegible] श्रावक जीवना ३५ गुणोनुं प्रथम सामान्यथी अने पछी विशेषथी विवेचन आप्युं छे अने अंतमां [illegible] [illegible] अने [illegible] प्रमाद आपवामां आवी छे.

श्री जैन हितोपदेश भाग त्रीजामां श्रीमद् हेमचंद्राचार्य विरचित शासन नायक वीराधिवीर श्री वर्द्धमान जीनना स्तोत्रनो सारांश, मंगळाचरणरुपे आपीने प्रथम ज्ञानसार सूत्र (अष्टकजी)ना मूळ श्लोको तेना रहस्यार्थ साथे आपेल छे जे एवी तो सरलताथी स्फुटपणे लखायेल छे के साधारण ज्ञानवाळाने पण ते सहज रीते समजमां आवी शके तेम छे पछी वैराग्यसार अने उपदेश रहस्य ए नामना विषयमां वैराग्य अने उपदेशमय बाबतनो सारो समावेश करवामां आव्यो छे. त्यारपछी आध्यात्मिक विषयनी पुष्टीकारक अध्यात्म गीता, संयम, बत्रीशी, अने क्षमा छत्रीशी कठीन शब्दनी फुटनोट साथे आपी ग्रंथनी समाप्ती करवामां आवी छे.

दरेक जैनशाळाना बाळकोने क्रमसर वांचनमाळा चलाववानी आवश्यकता आपणी कोन्फरन्स तरफथी जे स्वीकारवामां आवी छे ते वांचनमाळानी गरज आ पुस्तकनो पहेलेथी क्रमसर अभ्यास करवाथी केटलाक अंशे सरशे–एम अमारु निष्पक्षपातपणे मानवुं छे. तेथी तेनो घटतो उपयोग करवा अमे सद्गु सज्जनोने साग्रह विज्ञप्ति करीए छीए.

पुज्य मुनिश्रीना प्रयास माटे अमे अंतःकरणथी आभार मानवा साथे उक्त ग्रंथरत्ननो लाभ लेइ तेओ साहेबना परिश्रमने सर्व भव्यात्माओ सार्थक करो एम इच्छी अत्र विरमीए छीए.

आ ग्रंथ छपाववाने आश्रयदाता, सद्गृहस्थोनो अंतःकरणथी आभार मानी तेमनुं अनुकरण करवा अन्य धनिकोने नम्रविज्ञप्ती करीए छीए. इतिशम्.

प्रसिद्ध कर्त्ता.

# अनुक्रमणिका.

## श्री जैनहितोपदेश भाग २ जो.

## श्री जैनहितोपदेश भाग ३ जो.

# मंगलाचरणरूप.

## श्री सीमंधर[1] जिन—स्तुति.

बहु काळ हुं निगोदमां[2], भम्यो त्रिभुवन भाण;
बादर स्थावरमां[3] दुःख, दुःख बहु सुणवी त्राण जिनजी
विनती छे एह. १

बहु जीव जीवन भवमां, बहु तुज जीवन प्राण;
तारे दर्शने सुख लहुं, तुंहि जगत स्थिति जाण. जि० २
तुज विना हुं बहु भव भम्यो, धर्यां वेश अनेक;
निज भावने परभावनो, जाण्यो नहीं सुविवेक. जि० ३
धन्य नर जे नित्य सदाये[4], देखे जे जिन मुख चंद;
तुज वाणी अमृत रस लही, पामे ते परमानंद. जि० ४
एक वचन श्री जिनराजनो, नयगम[5] भंग प्रमाण;
जे गुणे सधिथी ते लहे, निज तत्त्व सिद्धि अमान. जि० ५
जे सेव विघटी आपनी, ते सेव अति गुणगम्य[6];
तुज विरह जे क्षण जाय छे, ते मानीये अकयम्य[7]. जि० ६
श्री वीतराग दर्शन विना, वीत्यो जे काळ अतीत[8];
ते अफळ मिथ्या दुकडं, त्रिविधे त्रिविधनी रीत. जि० ७

---

१ महाविदेह क्षेत्रमां विचरता जिनवर. २ अनंत लोकमां. ३ [illegible] तरंगमां [illegible]. ४ प्रभात. सवारे. ५ नैगमादिक प्रमाण नयो. ६ ईश्वर, भगवानथी. ७ अहमार्थ—विरुद्ध. ८ गयेलो काळ.

प्रभु वात मुज मननी सहु, जाणोछो जिनराज;
स्थिर भाव जो तुमचो[१] लहुं, तो मिले[२] शिवपुर साथ[३]. जि० ८
प्रभु मिळे हुं स्थिरता लहुं, तुज विरह चंचळ भाव;
एकवार जो तन्मय[४] रमुं, तो करुं अचल स्वभाव. जि० ९
प्रभु अछो क्षेत्र विदेहमां, हुं रहुं भरत मझार;
तोपण प्रभुना गुण विषे, राखुं स्वचेतन सार. जि० १०
जो क्षेत्र भेद टळे प्रभु, तो सरे सघळां काज;
सन्मुख भाव अभेदता, करी वरुं आतमराज. जि० ११
पर पुंठ इहां जेहनी, एवडी जे छे स्वाम[५];
हाजर हजूरी ते मळे, नीपजे ते केटलो काम. जि० १२
इंद्र चंद्र नरेंद्रनो, पद न मांगुं तिल मात्र;
मांगुं प्रभु मुज मनथकी, न वीसरो क्षण मात्र. जि० १३
ज्यां पूर्ण सिद्ध स्वभावनी, नवी करी शकुं निज रिद्ध[६];
त्यां चरण शरण तुमारडो, एहिज मुज नवनिध[७]. जि० १४
म्हारी पूर्व विराधना[८], योगे पडयो ए भेद;
पण वस्तु धर्म विचारतां, तुज मुज नहि छे भेद. जि० १५
प्रभु ध्यान रंग अभेदथी, करी आत्मभाव अभेद;
छेदी विभाव[९] अनादिनो, अनुभवुं स्वसंवेद[१०]. जि० १६

---

१ समाणो–समाणी जेवो. २ मळे–प्राप्त थाय. ३ मोक्ष संघाते, अने साथे. ४ वैरभाव रहित. ५ स्वामी. ६ सिद्धि. ७ विधि. ८ केवळ. ९ विभाव, विषय कषायादि. १० स्वसंवेद–आत्मस्वभाव, आत्म दर्शन–आत्मसाक्षात्कार.

विनतुं अनुभव मित्रने, तु न करीश पर रस चाह[१];
शुद्धात्म रस रंगी[२] थइ, करी पूर्ण शक्ति अबाह[३]. जि० १७
जिनराज सीमंधर प्रभु, तें लह्यो कारण शुद्ध;
हवे आत्म सिद्धि निपाववो, शी ढील करीए बुद्ध. जि० १८
कारणे कार्य सिद्धिनो, करवो घटे न विलंब;
साधवी पूर्णानंदता[४], निज कर्तृता अविलंब. जि० १९
निज शक्ति प्रभु गुणमां रमे, ते करे पूर्णानंद;
गुणगुणी भाव अभेदथी, पीजीये शम-मकरंद[५]. जि० २०
प्रभु सिद्ध बुद्ध महोदयी[६], ध्याने थइ लयलीन[७];
निज देवचंद्र पद आदरे, नित्यात्म रस सुख पीन[८]. जि. २१

इति.

---

१. थांइनी अभिलाषा. २ निर्मळ स्वभावमां थिर. ३ [illegible] निर्विघ्न.
३ अंतराय-विघ्न रहित. ४ स्वभावे पूर्णता. ६ [illegible]. ६ [illegible].
७ [illegible]. ८ [illegible]. ९ [illegible].

# सुभाषित रत्नावली.

## प्रस्तावना.

विदीत थायके 'सुभाषित रत्नावली' नामनो एक संग्रह पद्यात्मक ग्रंथ श्री गणेंद्र कृत प्रथम मारा जोवामां आव्यो. तेनी फक्त एकज प्रत मळवाथी अने ते पण अत्यंत अशुद्ध होवाथी उक्त ग्रंथन मूळ साथे तेनुं भाषांतर करवा जे प्रथम विचार प्रभव्यो हतो तेवा रूपमां अमलमां मूकी शक्यो नहि. परंतु तेनी शरुआतमां सा रुपे जे श्लोको दाखल कर्या छे ते साथे थोडाक बीजा श्लोको भाषांतर आदिमां कायम राखीने बाकीना विषयोनुं विवेचन करव स्वतंत्र रीते स्वक्षयोपशमानुसारे करवुं दुरस्त धारी उक्त ग्रंथमां कहेवा धारेला विषयो पैकी घनी ख़रा तेटला लगभग ४९ विषयो दाखल करवामां आव्या छे. वर्तमान समयने अनुसारे जिज्ञासु भाइ ब्हेनोने उक्त विषयो संबंधी संक्षेपथी बोध पूर्वक शुभ क्रिया रुचिनी वृद्धि थाय अने एम यथाशक्ति ज्ञान अने क्रियाना संमेलनथी वीत-राग प्रभुनी पवित्र आज्ञानुसार स्वहित आचरवा तेओ समर्थ थाय एवी सद्बुद्धिथी प्रेराइने आ प्रस्तुत प्रयत्न करवामां आव्यो छे. आवा शुभाशययुक्त प्रयत्ननी सार्थकता करवा भव्य भाइ ब्हेनोने कंइक साग्रह भलामण करुं तो ते कंइ खोटुं कहेवाशे नहि. वर्तमानकाळे कंइक जाग्रत थती जिज्ञासा स्वक्षयोपशमानुसार लखी ते जिज्ञासु वर्ग समक्ष मूकवाने जेम हुं स्वकर्तव्य समजुं छुं तेम तेनो यथाशक्ति आदर करवा रुप निज कर्तव्य करवाने कृतज्ञ भाइ ब्हेनो चूकशे नहि एम समजीने प्रस्तुत ग्रंथ संबंधी प्रस्तावना पूर्ण करुं छुं.

शुभं स्यात् सर्वे सत्त्वानाम्. सन्मित्र कर्पूरविजयजी.

## श्री जैनहितोपदेश भाग ३

## सद्भापितावली.

श्री गणेन्द्रे विरचिता पीठिका.

जिनाधीशं नमस्कृत्य, संसारांबुधितारकं ॥
स्वान्यस्य हित मुद्दिश्य, वक्ष्ये सद्भापितावलीम् ॥१॥
धर्मतत्वं कुरु दुस्त्यजं, त्यज महापापं बुधै निंदितं,
सम्यक्त्वं भज धर्मदं, त्यज महामिथ्यात्व मूलंच वै ॥
सच्छास्त्रं पठ वृत्त-माचर, जयं पंचेन्द्रियाणां च भो,
नारी संगमपि स्वयं त्यज, सदा कामं कलंकास्पदम् ॥२॥
दृष्ट्वा स्त्री सुशरीर रूपमतुलं मध्ये विचारं कुरु,
श्री तीर्थेश्वर पाद सत्कमलयोः सेवां सदा सद्गुरो ॥
बाह्याभ्यंतर सत्तपः कुरु सदा जिह्वां वशे चानय,
ज्ञान स्त्वं त्यज द्वेष राग सहितान् सर्वान् कपायांश्च वै ॥३॥

तर्वेषु जीवेषु दयां कुरुत्वं, सत्यंवचोब्रूहि धनं परेषां ॥
ाऽब्रह्म सेवां त्यज सर्वकालं, परिग्रहं मुंच कुयोनिबीजं ४
िराग्य सारं सज सर्वकालं, निर्ग्रंथ संगं कुरु मुक्ति बीजं॥
वेमुच्य संगं कुजने पुमित्र, देवार्चनं त्वं कुरु वीतरागे।५।
ानं त्वं कुरु पात्रसारमुनय चैत्यालयं भावनां,
ात्रौ भोजनवर्जनं त्यजमहागार्हस्थ्यभावंसुहृद् ॥
हं त्वं त्यज भोग सारमपि वै संसार पारं व्रज,
ोरत्वंकुरु मुंच शोकमशुभं शौचं च नीरंविना ॥६॥
ारं त्वं कुरु देहमेव सफलं धृत्वाव्रतं मा त्यज,
न्यासे मरणं च भोगविषये चाशामिहाऽमुत्र च ॥
ध्यस्थं हितमेव जाप्य जपनं रोगस्य निर्नाशनं,
ीविस्या शरणं चलंच विभवं सारं विवेकं भज ॥ ७॥
नलं कुरु वै धर्मं, मानुष्यं दुर्लभं भवेत् ॥
ायोग्यं च परित्यज्य, मुक्ति योग्यं समाचर ॥ ८ ॥

॥ इति पीठिका ॥

---

## सुभाषित रत्नावली मुख प्रवेश.

संसार समुद्रथी तारणहार श्री जिनेश्वर देवने नमस्कार करी स्वपरना हितने माटे हुं सुभाषित रत्नावलीनी व्याख्या करुंछुं १

भोभद्र! तुं धर्म आचरण कर, ज्ञानीए निंदेलां महापापनो त्याग कर, सुखदायी समकीतनुं सेवन कर, महा दुःखदायी मिथ्यात्वनो त्याग कर, उत्तम ज्ञाननो अभ्यास कर, व्रतनुं सेवन कर अने पांचे इंद्रियोनुं दमन कर, स्त्रीना संगनो पण त्याग कर, तेमज सदोष काम सेवानो सर्वदा त्याग कर. २

स्त्री संबंधी सुंदर देहनु अतुल रुप देखीने भोभद्र! तुं मनमां निर्दोष विचार कर. श्री तीर्थंकर देवनां चरण कमळनी सेवा कर, सद्गुरुनी सदा भक्ति कर. बन्ने प्रकारना शुद्ध तपनुं सेवन कर. अने जीभने वश कर, तेमज हे भाइ! राग द्वेष सहित सर्व कषायनो तुं (काळजीथी) त्याग कर. ३.

हे भद्र! तुं सर्व जीवोमां दया भाव राख्य, सत्य वाणी वद, परधन अने अब्रह्म सेवानो सर्वथा त्याग कर, तेमज दुर्गतिदायक परिग्रह मूर्च्छाने त्यज. ४

सर्वदा श्रेष्ठ वैराग्यने भज; मुक्तिदायक निर्ग्रंथ मुनिनो संग कर, अने दुर्जनोनो संग त्यजी दे; हे मित्र! तुं वीतराग देवनी भावथी भक्ति कर. ५.

वळी पात्रापात्रनो विवेक राखीने तुं दानदे, जिन चैत्य करावं, रुडी भावना भाव, रात्रिभोजननो त्याग कर, तेमज हे मित्र तुं संसारिक मोहने त्यजी दे; केवळ भोगना साधनरुप एवा देहनी मूर्च्छा त्यज, अने संसारनो पार पाम. तेमज धीरपणुं धारणकर दुःखदायी शोकने त्यज अने मननो मेल दूर कर. ६

श्रेष्ठ एवो मानव देह पामीने सारां व्रत नियम पाळी तेने सफळ करवो, व्रत भंग नहि करवो; समाधिवाळुं मरण करवुं, आ भव परभव संबंधी भोगाशंसा तजी देवी; मध्यस्थ रही स्वपर हित साधवुं, परमेष्ठिनो जाप जपवो; धर्म रसायण सेववुं वैराग्य भावना भाववी, लक्ष्मी विगेरे क्षणिक वस्तु उपरथी मोह त्यजी देवो अने सारभूत एवा विवेकने भजवो. ७

हे सुभग ! तुं धर्मरुपी संबल ( भातुं ) साथे लइले, फरी फरी मनुष्य भव पामवो दुर्लभ छे, माटे अयोग्य आचरण त्यजी दइ जेथी जन्म मरणनो अंत आवे एवुं योग्य आचरण सेवीले. ८

"इति प्रस्तावना."

---

धर्मं कुरु.

धर्मं करोति यो नित्यं, स पूज्य स्त्रिदशेश्वरैः॥
लक्ष्मीस्तं स्वयमायाति, भुवन त्रय संस्थिता.॥१॥

धर्मवतोहि जीवस्य, भूरः कल्पद्रुमो भवेत् ॥
चिंतामणिः कर्म करः, कामधेनुश्च किंकरी. ॥१०॥
धर्मेण पुत्र पौत्रादि, सर्व संपद्यते नृणां ॥
गृह वाहन वस्तूनि, राज्यालंकरणानि च. ॥ ११ ॥
वरं मुहूर्त मेकंच, धर्म युक्तस्य जीवितं ॥
तद्धीनस्य वृथा वर्ष, कोटा कोटि विशेषतः ॥ १२ ॥
यम दम समयातं, सर्व कल्याण बीजं ।
सुगति गमन हेतु, तीर्थनाथैः प्रणीतं ॥
भवजलनिधिपोतं, सार पाथेय मुच्चैः,
त्यज सकल विकारं, धर्ममाराधय त्वम्. ॥ १३ ॥

पापंत्यज.

पापं शत्रुं परं विद्धि, श्वभ्र तिर्यग्गतिप्रदं ॥
रोग क्लेशादि भांडारं, सर्व दुखाकरं नृणाम् ॥ १४ ॥
जीवंतोऽपि मृता ज्ञेया, धर्म हीनाहि मानवाः ॥
मृता धर्मेण संयुक्ता, इहा मुत्र च जीविताः ॥१५॥
पापवतां हि नास्त्यस्य, धन धान्यं गृहादिकं ॥

वस्त्रालंकार सद्वस्तु, दुःख क्लेशानि संति च ॥ १६॥
मित्रं शत्रु च विज्ञेयो, पुण्य पापे शरीरिणां ॥
जीवेन भजतः सार्धं, सुखदुःखफलप्रदम् ॥ १७ ॥
सकल भव निदानं, रोग शोकादि बीजं ॥
नरक गमन हेतु सर्व दारिद्र मुलम् ॥
इह परभव शत्रुं, दुःख दानैक दक्षं ॥
त्यजं मुनिवर निन्द्यं पाप बीजं समस्तम् ॥ १८ ॥

---

## १ शिष्ट सेवित सन्मार्गनुं सेवन कर.

जे नित्य स्वकर्तव्य समजीने सन्मार्गनुं सेवन करे छे ते इंद्रोने पण मान्य थाय छे, अने सकल लक्ष्मी तेने स्वयं आवी मळे छे. पुन्यशाळीने पगले पगले निधान छे. ९ सन्मार्गगामी–धर्मी जीवने कल्पवृक्ष सेवक थइने रहे छे, चिंतामणि रत्न तेनुं चिंतित कार्य साधी आपे छे, अने कामधेनु तेना सकल मनोरथ पूरे छे. १० धर्म सेवनवडे प्राणीओने पुत्र पौत्रादिक प्राप्त थाय छे तेमज राज्यना अलंकारभूत एवां घर वाहन विगेरे वस्तुओ पण सहजे मळे छे. ११ धर्म करीने युक्त एवा जीवनुं बे घडी जेटलुं पण जीवतर लेखे छे, अने धर्महीन जीवनुं तो कोटा कोटी कल्प सुधीनुं पण जीवित

नकामुं छे. १२ ते माटे हे भव्य! यम-महाव्रतादि अने दम-इंद्रिय-दमन आदिथी युक्त, सर्व कल्याणनुं मूळ कारण, सद्गति गमननुं हेतु, भव समुद्रथी पार पमाडवाने प्रवहण तुल्य अने भवान्तरमां सार शंबलरुप एवा ऋषभादिक तीर्थनाथोए प्रगट करेला धर्मनुं तुं सर्वविकार रहितपणे सेवन कर. १३

## २ शिष्ट निंदित पाप कार्यनो परिहार कर.

प्राणीयोने नर्क तिर्यंच गति आपनार, रोग शोकादि दुःखना निधान, अने सकल क्लेशनां स्थानरुप पापने तुं परम शत्रु समज. १४ धर्महीन मानवोने जीवता छतां पण मूआ मानवा, अने धर्मे करी युक्त मानवो मूआ छतां आलोक अने परलोकमां जीवताज जाणवा. १५ पापरत प्राणीने धन धान्य गृहादिक तथा वस्त्र अलंकारादिक शुभवस्तु प्राप्त थइ शकती नथी, तेने तो केवळ दुःख अने क्लेशज प्राप्त थाय छे. १६ पुण्य अने पाप प्राणीयोना मित्र अने शत्रु छे, एम जाणवुं, केमके सुख दुःख फळने आपनारा ते बंने प्राणीनी साथेज जाय छे. १७ भव भ्रमणना निदानरुप अने रोग शोकादिकना बीज रुप नर्क गमनना हेतु रुप अने सर्व दारिद्रना मूळरुप आ भव अने परभवना शत्रुरुप अने दुःख देवावाळा एवां समस्त पापनां निंद्य कारणोने हे सुमत! तुं तजीदे. समस्त पापकार्यथी तद्दन अलगा रहेवुं एज सार छे. १८ ...

सम्यक्त्वं भजः

सम्यग् दर्शन संशुद्धः सत्य मानुच्यते बुधैः ॥
सम्यक्त्वेन विना जीवः पशुरेव न संशयः ॥ १९ ॥
सम्यक्त्व युक्त जीवस्य, हस्ते चिंतामणिर्भवेत् ॥
कल्पवृक्षो गृहे तस्य, कामगव्यनु गामिनी ॥ २० ॥
सम्यक्त्वाऽलंकृतो यस्तु, मुक्ति श्री स्तं वरिष्यति ॥
स्वर्गश्रीः स्वय मायाति, राज लक्ष्मी सुखी भवेत् ।२१।
यत्र कुत्रापि सद् दृष्टिः पूज्यः स्याद्भुवनैरपि ॥
सम्यक्त्वेन विना साधुः निन्दनीयः पदे पदे ॥ २२॥
सकल सुख निधानं, धर्म वृक्षस्य बीजं ॥
जनन जलधि पोतं, भव्य सत्त्वैकपात्रं ॥
दुरित तरु कुठारं ज्ञान चारित्र मूलं ॥
त्यज सकल कुधर्मं, दर्शनं त्वं भजस्व ॥ २३ ॥
भाषा बुद्धि विवेक वाक्य कुशलः शंकादि दोषोज्झितः।
गांभीरः प्रशमश्रिया परिगतो वश्येन्द्रियो धैर्यवान् ॥

..........निश्चयो विरतितो, भक्तिश्च देवे गुरा,
वौचित्यादि गुणैरलंकृत तनुः सम्यक्त्व योग्यो भवेत

---

## २ निर्मळ श्रधानकर.

तत्त्व श्रद्धाथी संस्कार पामेला जीवोज साचा गणाय एम स
मपना जाण कहे छे. शुद्ध श्रद्धा विनाना जीव तो केवळ पशु स
छे. एमां संशय नथी. समकितवंत जीवना हाथमांज चिंतामणि र
छे, तेना आंगणामांज कल्पवृक्ष उग्यो छे. अने कामधेनु तो तेन
सहचारिणीज छे. जे सम्यक्त्व भूषणथी भूषित छे तेनेज मुक्ति कन्य
वरनारी छे. स्वर्ग लक्ष्मी तो तेने स्वयं आवी मळे छे. अने राजल
क्ष्मीनुं तो कहेवुंज शुं? समकीतवंत जीव सर्व रीते सुखीज था
छे. समकित दृष्टि जीव त्रणे भुवनमां गमे त्यां पूजनिक थाय छे अ
समकित गुण विनानो ते पगले पगले निंदापात्र बने छे. २२

“वीतराग प्रभुनां एकांत हितकारी वचननुं सावधानपणे श्र-
वण करीने तेमां कल्पाकल्प, खाद्याखाद्य अने हिताहितनो निर्णय
पूर्वक श्रद्धा-आस्ता बेसवी तेनुं नाम समकित छे.” शंका, कांक्षा,
फळ संदेह, मिथ्यात्विनी प्रशंसा, अने तेनो परिचय ए पांच दूषणो
समकितवंतने दूर करवानां छे. अने शुद्ध देवगुरु तथा धर्म-तीर्थनी

भक्ति प्रभावनादिक उत्तम भूषणो तेणे यत्नथी धारण करवानां छे. शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा अने, आस्तिकता रुप पांच लक्षण पण समकितवंत जीवमां अवश्य होवां जोइये. एटले के अपराधि उपर पण क्षमा, अविकारी एवा मोक्ष सुखनी अभिलाषा; संसारथी विरक्तता, दुःखी उपर दया अने वीतरागना वचननी पूर्ण प्रतीति एथी समकीत ओळखाय छे." एम समजीने हे भद्र! तुं सकल सुखनुं निधान, धर्मतरुनु बीज, भवनिधि पार पमाडनारुं पोत, भव्यतावंतनेज प्राप्त थनारुं, पाप तरुनु उच्छेदनारुं अने ज्ञान-चारित्रनु मूळ एवुं समकित सकल कुधर्मना त्याग पूर्वक तुं अंगीकार कर. २३.

भाषा, बुद्धि, विवेक अने वाक्यमां कुशळ, शंकादि दोषरहित, गंभीर, समतावंत, जितेन्द्रिय, धैर्यवान्, तत्त्वग्राही, देव-गुरु भक्त, अने उचितता विगेरे गुणोथी भूषित एवो भव्य आत्माज समकित पामवाने अधिकारी छे. २४

---

## ४ मिथ्यात्वनो त्याग कर.

अज्ञानथी अथवा सम्यग् ज्ञाननी खामीथी सत्यासत्य या तत्त्वातत्त्व संबंधी शुद्ध समज विनानी अथवा कदाग्रहवाळी विपरीत बुद्धिनुं नाम मिथ्यात्व छे, तेथी जीव सत्य मार्गने तजी असत्य मार्गे दोरवाइ जाय छे. अथवा सत्य मार्गने सारी रीते समजी शकतो नथी, तेमज कठिन गाढ मिथ्यात्व योगे सन्मार्गने तजी असत् मार्गनु,

स्थापन करवा भारे परिश्रम करी अनेक भोळा जीवोने उन्मार्गे खेंची जाय छे. सत्य मार्गमां खोटी शंकाओ करवाथी अथवा मिथ्यात्विओनो परिचय करी तेदना परस्पर असंबद्ध वचन सांभळवाथी या तेमनी प्रशंसा करवाथी समकितवंत जीवने पण उक्त महा दोषनी प्राप्ति थइ जाय छे, के जेने पछीथी टाळवी काढवा भारे परिश्रम करवानी ख्याम जरुर पडे छे. उक्त मिथ्यात्व योगे जीवो भिन्न भिन्न विपरीत करणी करवामां प्रवर्ते छे. तेथी उक्त दोषना प्रकार तथा तेना स्वामीने जाणवानी जरुर छे.

## मिथ्यात्वना प्रकार तथा उक्त दोषने सेवनारनां नाम.

१ आभिग्रहिक–परीक्षा रहित केवळ स्वसंप्रदाय प्रमाणे एकांत वादी दर्शनो.

२ अनभिग्रहिक–विवेक शून्यपणे सत्यासत्यने समज्या विना सर्व दर्शनने समान समजनार.

३ सांशयिक–सत्य सर्वज्ञ वचनमां ( न्याय विरुद्ध ) शंका पामनार महात्मा.

४ अनाभोगिक–उपयोग शून्यपणे मूर्छित दशामां वर्तनार एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय विगेरे.

५ आभिनिवेशिक—जाणी जोईने हठ कदाग्रहथी सत्य वस्तुनो अनादर करीने असत्य वस्तु (धर्म) नो स्वीकार करी तेनुंज स्थापन करनार निन्हवो विगेरे.

उक्त मिथ्यात्व महा दोषथी भरेला जीवो सत्य धर्मने सेवी शकता नथी. जेम ज्वरातुर जीवने दूध साकर भावतां नथी तेम मिथ्यामतिने सत्य धर्म रुचतो नथी. जेम रोगीने कुपथ्य व्हालुं लागे छे तेम तेने कुधर्म प्रिय लागे छे, छतां परोपकारैकनिष्ट सद्वैद्य समान सद्गुरु मिथ्यामतिने वारवा अने शुभ मतिने धारवा भव्य जीवोने नीचे मुजब हितोपदेश आपे छे—हे भव्यो! सकल पापनुं मूळ, दुःख वृक्षनुं बीज, नर्कगृहनुं द्वार, स्वर्ग, अपवर्गनुं भारे विघ्न, परम पुरुष निंद्य, अने मूढ लोकोए सेवित एवा सकळ असार मिथ्यात्व बीजनो तमे त्याग करो के जेथी समकित अमृतनुं सेवन करी तमे अक्षय सुखना अधिकारी थाओ."

---

## सम्यग् ज्ञाननुं सेवन कर.

जेना वडे (आत्म) वस्तु धर्मनुं यथार्थ भान थाय अने अज्ञान अंधकार दूर थाय तेमज जेथी तत्काळ मिथ्यात्व भ्रमने दूर करनार समकित गुण प्रगट थाय तेने ज्ञानी पुरुषो सम्यग् ज्ञान कहे छे.

सम्यग् ज्ञानीने गमे तेवुं शास्त्र समपणे परिणमे छे. गमे तेमा-

थी ते सार मात्र ग्रही शके छे. टुंकाणमां मात्र परमार्थथी ते सुखे स्वपर हित साधी शके छे. अज्ञानी या शुष्कज्ञानी तेम कदापि करी शकतो नथी.

सम्यग् ज्ञानीने सम्यग् ज्ञानना बळथी समजायेला राग द्वेषादिक अंतरंग शत्रुवर्गने दमवा मुख्य लक्ष रहे छे. तेनी सफल करणी तेवा मुख्य लक्षथीज प्रवर्ते छे. तेथी तेने आ दृश्य दुनीया केवळ स्वार्थमय भासे छे. जे एक वस्तुने संपूर्ण जाणे छे ते सर्व वस्तुने संपूर्ण जाणे छे, एटले के जे सर्व भावने सर्वथा जाणे छे. तेज एक भावने संपूर्ण जाणी शके छे. आ बाबतनी खात्री सम्यग् ज्ञानथी सारी रीते थइ शके छे. माटेज सत्समागम करीने या परोपकारशील महा पुरुष प्रणीत परमागमनी सहाय मेळवीने सम्यग् ज्ञाननो खप कर्या करवो योग्य छे. एवा खपी पुरुषोज परम पदना अधिकारी थइ शके छे. जेम पूर्वे एक पण पदनुं सम्यग् रीत्या श्रवण, मनन अने निदिध्यासन करवाथी कइक भाग्यवंत भव्योनुं कल्याण थयुं छे, तेम सर्वकाळे थइ शके तेम छे. ज्यारे एक पण पद संबंधी सम्यग् ज्ञाननो आवो अपूर्व महिमा छे तो पछी तेवां अनेक पदवाळा सम्यग् ज्ञाननुं तो कहेवुंज शुं ?

ज्ञानी पुरुषो सम्यग् ज्ञानने अपूर्व अमृत, अपूर्व रसायण अने अपूर्व ऐश्वर्य कहिने बोलावे छे. अने ते यथार्थ छे, केमके तेवीज

आत्मा परमपदनो भोगी थइ शके छे.

सम्यग् ज्ञानयुक्त आत्माज स्वर्ग अने मोक्ष संबंधी लक्ष्मीनो अधिकारी थाय छे. पण अज्ञान अने अविवेकात्मातो दुःखमय संसार सागरमांज भ्रमण करे छे.

ज्ञानवंत–विवेकी गमे त्यां कर्म–मुक्त थाय छे, त्यारे अज्ञानी प्राणी ज्यां त्यां कर्मथी बंधाय छे.

ज्ञानहीन प्राणी पुन्य, पाप, गुण अवगुण, तथा त्याज्यात्याज्य विगेरेना विवेकने जाणी शकता नथी. जेम जन्मांध जीव सूर्यना स्वरूपने जाणी शकता नथी तेम अज्ञानी अविवेकी जीव पण हिताहित, उचितानुचित, तेमज भक्ष्याभक्ष्य पेयापेय संबंधी गुणदोषनुं यथार्थ स्वरूप समजवाने समर्थ थइ शकतो नथी.

उक्त हेतु माटे सम्यग् ज्ञाननुं जेम बने तेम आराधन करवा शास्त्रकार आपणुं लक्ष खेंचवा भार दइने कहे छे के—

"हे भव्यो ! निर्मळ गुणनुं निधान, समस्त विज्ञाननुं बीज मुमुक्षुजनोए सेववा योग्य, सर्व तत्त्वप्रकाशक, पापतरुनुं निकंदक अने मनरूप मदोन्मत्त हाथीनो गर्व गाळवाने केसरी सिंह समान, सर्वज्ञ भाषित सम्यग् ज्ञाननुं तमे जरूर यथाशक्ति आराधन करो. तेनुं विराधन तो तमे कदापि करशो नहि.

---

## ६ सदाचारनुं सेवन कर.

आचारनी शुद्धि करवी, सदाचरणनुं सेवन करवुं एज सम्यग् ज्ञान-दर्शननुं फळ छे. सम्यग् ज्ञान-दर्शन छतां सदाचार (सम्यक् चारित्र गुण) प्राप्त थयो नहि तो वांझीया वृक्षनी पेरे ते ज्ञान-दर्शनने अध्यात्मी पुरुषो नकामां कहे छे, एम समजी जेम बने तेम सद्गुणो सेववा आत्मार्थी जनोए अहोनिश उजमाळ रहेवुंज योग्य छे. दश दृष्टांतथी दुर्लभ मनुष्यदेह पाम्यानुं खरुं फळ एजछे.

शुद्ध चारित्र युक्त एक दिवसनुं पण जीवित लेखे छे, परंतु चारित्रहीन कोटी वर्षनुं पण जीवन नकामुं छे. शुभकरणी विनाना दिवस मात्र वांझीया लेखवाना छे.

संघयण-शरीरबळ हीणुं छतां जे चारित्रने सम्यग् आचरे छे ते उत्कृष्ट शरीर बळनी अपेक्षाए सहस्रगणुं फळ पामे छे. संघयणनुं बानुं काढीने चारित्र गुणमां शिथिल थवाने बदले उलटो अधिक प्रयत्न करवो युक्त छे. छतां शिथिलताने भजनार प्रगट स्वपरनां अहितनाज भागी थाय छे.

चारित्रवंत स्व मर्यादाने सेवतो जे जे वस्तुने इच्छे छे तेने ते तत्काळ आवी मळे छे एवो सम्यग् चारित्रनो महिमा प्रगट छतां तेमां कोण प्रमादी थशे ?

हीन संघयण छतां जे एक वर्षनी दीक्षा बराबर पाळवी ते उत्कृष्ट संघयणनी सहस्र वर्षनी दीक्षा बराबर समजवी युक्त छे. एम विचारी तप, जप, ज्ञान, ध्यान विगेरे सदनुष्ठानमां सदा सावधानपणे वर्तवामांज स्वपरहित समायेलुं जाणवुं.

चारित्रथी चलायमान थइ भ्रष्ट थयेलो जीव जीवतो छतो मूआ बरोबर छे. अने चारित्र संयुक्त आत्मा मूआ छतां उभय लोकमां अमर थइ रहे छे. उक्त हेतुथी चारित्र गुणनी पुष्टि माटे शास्त्रकार भार मुकीने उपदिशे छे के—

" सकल मदरहित, देवमान्य, सर्व तीर्थनाथोए सादर सेववायोग्य महा गुणसागर पंडितोए सेवित, मुक्ति सुखनुं अवंध्य बीज, निर्मळ गुणनिधान, सर्व कल्याणनुं मूळ कारण, अने सकळ विकाररहित एवुं निर्मळ चारित्र हे भव्यो ! तमे भावथी भजो, जेथी अक्षय अनंत सुखने तमे सहजे वरो. "

---

## ७ इंद्रियोनुं दमन कर.

नायक एवा मने मेरेला इंद्रिय-चोरोए धर्म धननुं हरण करीने बापडा लोकोने आकुळव्याकुळ करी मूक्या छे. तेथी तेमने वश करवाने भगीरथ प्रयत्न करवानी जरुर छे. अन्यथा ते सर्वने वश करी जीवनी भारे दुर्दशा करशे.

जेम इंधनथी अग्नि तृप्त थतो नथी अने गमे तेटली नदीयोथी पण दरीयो पूरातो नथी तेम विषयसुखथी कदापि पण इंद्रियो तृप्त थवानी नथी. एम मध्यस्थपणे विचार करी विवेकथी संतोषवृत्ति धारवी योग्य छे.

जेणे वैराग्य खड्गथी इंद्रिय चोरोने हण्या छे तेनोज खरेखर मोक्ष थाय छे. बाकी बीजा कायाक्लेशो वडे शुं वळवानुं छे ? माटे प्रथम मन अने इंद्रियोनेज वश करी लेवानी जरुर छे. ते विना करवामां आवती कष्टकरणी कष्टहरणी थवानी नथी.

मननो जय करीने जेमणे इंद्रियोनो निग्रह कर्यो नथी तेमणे साधु-मुद्रा धारण करीने केवळ पोताना आत्माने ठग्योज छे. एम निश्चय समजवुं.

जे पोतानी इंद्रियोने पण जीतवाने समर्थ थइ शकता नथी तेमनी दीक्षा के तपस्यामां कांइ माल जेवुं नथी. इंद्रियोना गुलाम थइने उलटा ते धर्मनी अपभ्राजना रुप महा अनर्थने पेदा करे छे. माटे दीक्षा ग्रहण कर्या पहेलांज योग्य विचार करवानी जरुर छे. दीक्षा लीधा बाद तो इंद्रियो उपर संपूर्ण काबु राखवा अहोनिश लक्ष राखी रहेवानी खास जरुर छे. केमके विरक्त आत्माने पण ते विषयपाशमां पाडी नांखतां चूकती नथी.

इंद्रियरूपी दुर्धर चोरो जीवनां मतज्ञानादि गुण रत्नथी भरेला जगतारक भांडने क्षणवारमां स्खलना पमाडे छे. तेथी जे मुनीश्वरो संनद्ध थइने महाव्रतरुपी थाणो सावधानपणे ग्रही मर्यादामां रह्या छतां ध्यानरुप तीरथी तेमने मर्ममां हणे छे, तेओज सुखसमाधे मोक्षपुरीमां जइ शके छे.

---

## ८ स्त्रीनो संग–परिचय तज.

स्त्री केवळ काम विकारनुं घर छे, एम समजी साधु जनोए तेनी संगति वारवी योग्य ज छे. भला भला पण साधु स्त्री संगतथी निशान चूकी गया छे. तेथी ब्रह्मचारीजनोए स्त्रीओना परिचयथी दूर रहेवुं ज हितकारी छे. एम वर्तवाथी ज नवकोटि शुद्ध ब्रह्मचर्यनी रक्षा थइ शके छे.

दुनियामां गहनमां गहन स्त्री चारित्र ज छे. तेथी जेम बने तेम साधु पुरुषोए तेनाथी चेतता रहेवानी जरुर छे. जेवो मूषकने मार्जारी तरफथी भय राखवानी जरुर छे. तेम ब्रह्मचारी साधुने पण स्त्री समुदाय तरफथी भय राखवानी जरुर पडे छे, स्त्रीजनोनो परिचय साधु जनोने हितकारी नथी ज ए निर्विवाद सिद्ध छे.

अग्निथी लालचोळ थयेली लोहमय पूतळीनुं आलिंगन करवुं सारु पण नर्कना द्वारभूत नारीना नितंबनुं सेवन करवुं सारुं नथीज.

स्रीने एक दूसती विषनी वेल छे एम समजीने तेनाथी दूर रहेवुं.

स्रीनां मोहमय वचन विलास या हावभावथी लोभाइ प्रबळ कामथी पीडित थइ अंते आप खुद चालनार साधु ब्रह्म व्रतथी भ्रष्ट थाय छे.

स्रीना चिर परिचयथी साधु कुलवालुकनी पेरे मार्ग भ्रष्ट थइने महा विडंबना पात्र थाय छे, अने क्षणिक सुखने माटे अक्षय सुखथी चूकी जाय छे. तेथी आत्मार्थी साधु जनोए स्री संगथी दूर रहेवुं ज युक्त छे.

ज्यारे चित्रादिमां निर्माण करेली नारी पण मननो क्षोभ करे छे तो पछी साक्षात् जीवती ज्योत (महामाया) नारी साथे संसर्ग वार्तादिक करतां केम कायम रही शकाय ए जरुर विचारवा जेवुं छे.

सर्प, व्याघ्र, चौरादिकनी साथे सहवास करतां एटलुं नुकशान नथी जेटलुं स्रीनी साथे क्षणमात्र रहेतां संभवे. एम समजीने शाणा साधुओए क्षणमात्र पण स्वच्छंदपणे स्रीनो संग या परिचय करवो योग्य नथी..

सापणी स्पर्श करीने करडे छे अने नारी तो दूरथीज डंस मारे छे. तेथी एम समजाय छे के दृष्टि विष सर्पनी जेम तेनी दृष्टिमांज झेर रहेलुं छे. एवी स्त्रीनुं नाम सांभळतांज स्थानान्तर चाल्या जवुं जोइए.

सर्व रीते संयम प्राणने हरनारी होवाथी नारीने शास्त्रकारे प्रत्यक्ष राक्षसी कहीने बोलावी छे. छतां तेनो विश्वास करनार साधुना चरित्र विषे वधारे शुं कहेवुं? स्त्रीसंगी साधु जरूर संयमथी भ्रष्ट थइ जाय छे.

सारांश ए छे के भवभीरु होवाथी जेओ भगवंतनी आज्ञा मुजब स्त्रीना अंगोपांगने पण दृष्टि दइने नीरखता नथी, विकार बुद्धिथी (पशु वृत्तिथी) तेनी साथे वात पण करता नथी, अने मनथी विषय सुखनी भावना करता नथी, एम सर्व रीते सावधान थइने ब्रह्मचर्यनुं पालन करे छे तेज महात्माओ आ दुस्तर भवोदधिने सहजमां तरीने अक्षय सुखना अधिकारी थाय छे. एवा महाशयोनांज शुद्ध चरित्र अनुकरण करवा योग्य छे. वळी कह्युं छे के—

न च राजभयं न च चोरभयं, इहलोक सुखं परलोक हितं ॥
वर कीर्त्तिकरं नरदेवनतं, श्रमणत्व मिदं रमणीयतरं॥१॥

जेने नथी तो राज भय अने नथी तो चोरभय, आ लोकमां

पण सुखकर अने परलोकमां पण हितकर, श्रेष्ठ एवी कीर्ति-कौमु-दीने विस्तारनार अने जेने नर देवादिक नमेला छे, एवुं आ मगट अनुभवातुं साधुपणुंज श्रेयःकारी छे माटे तेमां विशेषे आदर करवो.

## ९ विषय रसनो त्याग कर.

जाणे केवळ नर्कनुंज स्थान न होय! एवी असार निंदनीय, अशुचि अने दुर्गंधी एवी स्त्रीनी योनिमां कामांध माणस कीडानी पेरे क्रीडा करे छे. भवभीरु विवेकात्मा तो स्वप्नमां पण तेनो रंग इच्छतो नथी.

चामडाथी वींटेला हाडपिंजरवाळा अने दुर्गंधी एवा श्लेष्मा-दिकथी भरेला कामिनीना मुखने कामान्ध माणस श्वाननी पेरे चाटे छे

मांसना लोचा जेवा स्त्रीनां स्तनो अने विष्टादिथी भरेला कुम्भा-कुळ स्त्रीना उदरमां कामांध माणस कागडानी जेम क्रीडा करे छे.

गोरी चामडीथी वींटेलुं अने वस्त्राभरणथी भूषित करेलुं स्त्रीनुं रुप जोइने हे! भद्र! तुं विवेकथी विचारकर. पण तेमां पतंगनी पेरे तुं एकाएक झंपलाइ पडीश नहि. नहितो छेवट पश्चात्ताप करीश. स्वभाविक रीतेज अधिक अशुचिथी भरेला अने अनेक द्वारथी अशु-

चिने वहन करतां छतां चामडाथी मढेला स्त्रीना देहनुं अंतर स्वरूप विचारीने तुं विवेकथी तेनो परिहार कर.

कामान्ध माणस कामरागने वश थयो थको दोषाकुळ स्त्रीमां गुणनोज आरोप कर्या करे छे, अने विषयरसना त्यागी एवा विवेकी हंसनी पण हांसी करी स्वउत्कर्ष बतावरा मागे छे. पण अंते तो काच ते काच अने मणि ते मणिज छे.

घूड दिवसे देखतुं नथी अने कागडो रात्रे देखतो नथी पण कामान्ध तो रात्रे के दिवसे कंइपण देखी शकतो नथी. मोह महा मदिराना जोरथी तेनी शुद्धबुद्ध खोवाइ जवाथी ते मूर्छितप्रायः थइ जाय छे.

कामान्ध माणस जिह्वा अने कामने वश पडयो जे जे पापकर्म करे छे तेनां अगण्य फळ ते नरकादिक गतिमां जइने भोगवे छे.

कामान्ध माणस सुख, दुःख, हिताहित, पुण्य, पाप तेमज समीपस्थ वध, बंध अने मरणने पण जाणी शकतो नथी. तेने दुर्गतिनो डर होतो नथी, तेथी ते निःशंकपणे पशुक्रीडा (मैथुन–पशुक्रिया) करवामांज मशगूल रहे छे. अने सांढनी जेम स्वच्छंदपणे म्हालवामांज सार समजे छे.

तिल मात्र सुखने माटे कामान्ध माणस सारां व्रतने तजीदे छे.

अने आ लोक अने परलोकमां मेरु जेवडां मोटां दुःख माथे व्होरी ले छे.

विषय रूवा काम-बाणथी पीडित थइ जे धर्मरूप चिंतामणिने तजी देछे, ते हतभाग्य अनेक जन्ममरण संबंधी दुःखने साथी दुर्गतिमां जाय छे.

---

## १० श्री वीतराग देवनी भक्ति कर.

जे सुबुद्धि पुरुष एकाग्रचित्ते सदा वीतराग प्रभुनी सेवा करे छे ते स्वर्ग अने राज्यादि संबंधी सर्व सुखने भोगवीने अंते अक्षय पदने पामे छे.

वीतराग प्रभुने तजीने जे राग द्वेष युक्त देवने भजे छे ते दुर्मति चिंतामणि रत्नने त्यजीने पत्थरनुं ढेफुं हाथमां लेवा जेवुं करे छे.

जिनेश्वर देवनुं स्मरण मात्र करवाथी रोग शोक भय क्लेश ग्रह साकिणि अने दारिद्रादिक सर्व दुःख दूर थइ जाय छे.

जे मुग्ध अनेक देव अने अनेक गुरुने सेवे छे ते कार्याकार्य संबंधी विचार शून्य उन्मत्त जेवो छे, एम जाणवुं.

भव्य कमळोने प्रबोध करनार, सर्व दुःखने दूर करनार, विश्व-

चनपतिने सेववा योग्य, धर्म रत्नना सागर, स्वपरने अत्यंत हितकारी स्वर्ग अने मोक्षसुखना मुख्य साधनभूत अने सकळ गुणनानिधान एवा तीर्थनाथ श्री वीतरागप्रभुनी हे भव्यो! तमे भावथी भक्ति करो जेथी अनुक्रमे सम्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्ररुप रत्नत्रयीने पामी तेनुं सम्यग् आराधन करीने तमे अक्षय-अविनाशी सुखना संपूर्ण अधिकारी थाओ!

## ११ सद्गुरुनुं सेवन कर.

जे गुरु ज्ञान अने चारित्रथी युक्त छतां धर्मोपदेशक, निर्लोभी अने भव्य जीवोनो निस्तार करनार छे, तेनुंज आत्महितैषीए सेवन करवुं युक्त छे.

जे सद्गुरु स्वयं भवसमुद्र तरी शके छे तेज अन्य जीवोने पण तारी शके छे. जे पोतेज भवसागरमां डूबे छे ते परने शी रीते तारी शकशे? एम विचारीने सदोष-सारंभी गुरुनो त्याग करवो.

सद्गुरु सेवक सुबुद्धि पुरुष स्वर्ग अने मोक्ष संबंधी सुखने पामे छे. पण कुगुरुकामी दुर्बुद्धि तो नरक अने तिर्यंच गतिनेज मात्र थाय छे.

जे निर्ग्रंथ गुरुने तजीने कुगुरुनी सेवा करेछे ते घरना आंगणे उगेला कल्पवृक्षने छेदीने धंतूराने वाववा जेवुंज करे छे.

मातापिता अने सर्व कुटुंबादिक, दुर्गतिमां पडता जीवनो उद्धार करवा असमर्थ छे. पण एक सद्गुरु, पवित्र धर्मनी सहायथी अनेक भव्य जीवोने आ भवसागरथी तारवाने समर्थ थइ शके छे.

जेने स्वपर संबंधी सम्यग् विचार वर्ते छे, जे संसारना पारने पामेला छे, वळी निरुपम गुणे करीने युक्त, ज्ञान विज्ञानमां दक्ष, जीतेन्द्रिय, भव्य जीवोने तारवा पोत समान, अने सकळ दोषरहित एवा सद्गुरुनी हे भव्यो! तमे भावथी भक्ति करो.

## १२ तप करवामां यथाशक्ति प्रयत्न कर.

जे सुबुद्धि तपनुं स्वरुप समजीने केवळ आत्मकल्याण माटे तेनुं सेवन करे छे तेने अनुक्रमे सर्व कर्मनो अंत थतां मुक्तिसमाधि पण मळे छे तो पछी स्वर्ग संबंधी सुख अने राज्यना सुखनुं तो कहेवुंज शुं? तेवां सुख तो प्रासंगिक होवाथी सहजे संपजे छे.

अनशन, उनोदरी वृत्ति संक्षेप, रसत्याग, कायक्लेश अने संलीनतारुप बाह्यतप तथा प्रायश्चित, विनय, वैयावच्च, स्वाध्याय, ध्यान अने काउस्सग्ग (समाधि) रुप अभ्यंतर तपने जे विवेकथी सेवे छे ते महाशयनी सकळ मनोरथमाळा फळीभूत थाय छे.

बाह्यतपथी जेम अभ्यंतरतपनी पुष्टि थाय तेम लक्ष राखवानी खास जरुर छे. वळी जेम धर्मसाधनमां वधारे सावधानपणुं रहे,

स्वरुप समजीने सुबुद्धिजनोए तेनो त्याग करवो योग्य छे. केमके क्षणिक विषय सुखनी खातर तेथी असंख्य के अनंत जीवोनो विध्वंस थाय छे.

एक तलमात्र भूमिकंदमां पण अनंत जीवो रहेला छे. तेथी पशुनी पेरे विवेक रहित तेवी अभक्ष्य, अनंतकाय वस्तुओने प्रमाण रहित खानार माणसो अनंत जीवोनो संहार करी क्षणिक तृप्ति मेळवी अधोगतिने पामी अनंत जन्म मरण संबंधी दुःखने प्राप्त थाय छे.

तिलमात्र सुखने माटे मेरुथी पण मोटुं दुःख मूर्ख लोको अज्ञानताथी मागी लेछे जितेंद्रियने वश करी अभक्ष्य मात्रनो त्याग करनार सुबुद्धिजनो सर्वत्र सुखी थाय छे.

रस लंपट जीवो अनेक व्याधिओने भोग थइ पडे छे तेम जीतेंद्रिय कदापि थइ पडतो नथी. एम समजीने पण अभक्ष्य भक्षणथी सदंतर दूरज रहेवा प्रयत्न करवो.

औषध उपचारनी खातर मध, माखण विगेरे अभक्ष्य वस्तु वापरी खानारने पण परिणामे अहितज कहेलुं छे. तेथी तेवा विषम संयोगोमां विवेकी माणसोए विशेष सावचेत रहेवुं योग्य छे. (युक्तछे.)

पवित्र दीक्षा ग्रहण कर्या छतां रसनेंद्रियने वश थइ यथेच्छित भोजन करनार मिथु मंगू आचार्यनी पेरे विडंबनापात्र थाय छे.

तेथी उभय लोकनां सुखने इच्छता आत्मार्थी जीवोए जीह्वाने जेम बने तेम विवेकथी वश करवा सतत प्रयत्न करवो युक्तज छे.

जेम कुपथ्य भोजनथी माठां परिणाम आवे छे तेम तेवां विवेक विनानां रागद्वेष युक्त स्वार्थी वचनोथी पण विपरीतज परिणाम आवे छे एम समजीने स्वपरने हितकारी सत्य अने प्रिय वचनज प्रसंगोपात बोलवानी टेव पाडवी. जरुर विनानुं, वगर विचार्युं, स्वच्छंदपणे बहु बोलवानी कुटेवथी जीव घणीवार जीवना पण जोखममां आवी पडे छे एम विचारीने शाणा माणसोए हित, मित, प्रिय, एवुं सत्य पण प्रसंगोपात जरुर जेटलुंज नम्रपणे बोलवानी टेव राखवी. आथी सर्व कोइने संतोष दववानो सारो संभव रहे छे. रागद्वेष रहित मध्यस्थपणे विचारीनेज प्रसंगोपात प्रिय अने सत्य वचन वदवाथी ते परने पण प्रायः हितकारीज थाय छे.

---

## १२ राग द्वेषनो त्याग कर.

अनादि कुकर्मना योगथी जीवने रागद्वेषरुप भारे दुस्तर विकार थया छे, जेथी जीव एकने देखी राजी थाय छे अने बीजाने देखी नाराजी थाय छे. तेमज ते बेपी रोग अनेक भव संबंधि छुपी चाल्या करे छे.

उक्त महाविकारथी जीवने स्वपरनुं यथार्थ भान थई शकतुं नथी. तेथी तेने गुणदोष संबंधी उलटुं आरोप भान थाय छे. रागादि दोषो न घटवाथी—विशुद्ध गुणमां मन मळेलो जीव [illegible] पदार्थोमां रहेला दोषोने [illegible] संग-परिचयथी [illegible] दोषोने अति [illegible] तेमां गुणदोष आरोप करीने [illegible] करी करे छे. एवीज रीते इर्षा-द्वेषथी जेनुं अंतःकरण कलुषित थई गयुं छे तेवी मति पण विपरीत [illegible] [illegible] सद्गुणी-सद्गुणी साथे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] छे.

[illegible]

[illegible]

पोताना विकारोने वारवाने जोइतो प्रयत्न करवामां आवे तो अनुक्रमे सतत शुभ अभ्यासना बळथी आदणामां जड घाली बेसेला राग द्वेषादि विकारोनो समूळगो अंत आवी शके. पण ज्यां सुधी उक्त महा विकारोनो अंत न आवे त्यां सुधी तेमनुं उन्मूलन करवा अडग प्रयत्न कर्याज करवो जोइए.

राग अने द्वेषथी अंध थयेला प्राणीयोनी प्रायः अधोगतिज थाय छे. एवा अंध जीवोने खरी आंख आपनारा अलौकिक शस्त्र वैद्य समान कोइक सद् पुरुषनो समागम भाग्योदये थइ आवे अने जो तेमनी सम्यग् उपासना करवामां आवे तो सदुद्यमना स्वादिष्ट फळ रूपे आपणा अनादिना महा विकारो नष्ट थइ आपणने समता रूपी दिव्य चक्षुनी स्वतंत्र प्राप्ति थइ शके.

---

## १५ क्रोधादि कषायने दूर कर.

क्रोध, मान, माया, अने लोभ ए च्यार कषाय छे. अप्रीति लक्षण क्रोध, अहंभाव लक्षण मान, दंभ लक्षण माया, अने असंतोष लक्षण लोभथी अनुक्रमे प्रीति, विनय, मित्राइ, अने सुख शान्तिनो नाश थाय छे. माटे समजु माणसने ते अवश्य परिहरवा योग्यज छे.

द्वेष या इर्ष्या थकी क्रोध अने मान पेदा थाय छे तेमज काम या रागान्धताथी माया अने लोभ पेदा थाय छे अने जेम जेम तेमने तेथी पोषण मळतुं जाय छे तेम तेम तेओ वृद्धि पामता जाय छे.

बाह्य अने अंतर बे प्रकारना शत्रुओमां अज्ञानी लोको जेना प्रति वैरभाव राखे छे ते बाह्यशत्रु छे, अने ज्ञानी पुरुषो जेमनो क्षय करवा अहोनिश यत्न कर्या करे छे ते अंतरंग शत्रुओ—काम, क्रोधादिक छे. बाह्यशत्रु उपर कषाय करवो ते अप्रशस्त छे. अने अंतरंग शत्रुओ उपर कषाय करवो ते प्रशस्त कषाय कहेवाय छे. प्रशस्त कषायना योगे अप्रशस्त कषायनो अनुक्रमे अभाव थाय छे, तेथी प्रशस्त कषाय अप्रशस्त रागादिने दूर करवा अमोघ उपाय तुल्य छे.

अंते तो सर्व प्रकारना कषाय सर्वथा परिहरवाथीज परमपद प्राप्त थाय छे. ज्यां सुधी लेश मात्र राग, द्वेषादिक विकार होय त्यां सुधी वीतरागता होइ शके नहि अने ते विना अक्षयपदना अधिकारी थइ शकायज नहि. माटे वीतराग दशाने प्रगट करवा रागद्वेष अने कषाय मात्रनो क्षय करवाने सतत प्रयत्न करवो जोइये.

क्षमा गुणवडे क्रोधनो, विनय-नम्रता गुणथी माननो, सरलता-गुणथी माया-कपटनो, अने संतोष गुणथी लोभनो पराजय करवो.... कह्युं छे के—

क्षमा सार चंदनतणो, सिंचो चित्त पवित्र;
दया वेल मंडप तळे, रहो लहो सुख मित्र.
देश छेद वर्जित क्षमा, छेद रहित गुणराज;
तावे नहि अपरिमित क्रतु, कारण सहिवो काम.

---

क्षमा खड्गः करे यस्य, दुर्जनः किं करिष्यति॥
अतृणे पतितो वह्निः स्वयमेवो पशाम्यति.

---

मृदुता कोमळ कमळथें, वज्रसार अहंकार;
छेदत हे एक पलकमें, अचरिज एह अपार.

---

माया सापणी जगडसे, ग्रसे सकळ गुणसार;
समरो ऋजुता जांगुली, पाठ सिद्ध निरधार.

---

लोभ सयंभू रमणको, जो नर पावै पार;
सोभी लोभ समुद्रको, लहे न मध्य प्रचार.
मन संतोष अगस्तिकुं, ताके शोष निमित्त;
नित्य सेवो जिनि सो कियो, निजबळ अंजलि मित्त.

---

पूर्वोक्त बे प्रकारना कषाय समजवानुं फळ ए छे के जेनाथी भव संतति वधे एवा अप्रशस्त कषायथी दूर रहेवा माटे प्रथम तो प्रशस्त रागादिक सेववां. एटले के शुद्ध देव, गुरु अने धर्म प्रति प्रेमभाव धारण करवो ने वधारवो. ते एटले सुधी के संसार संबंधी खोटो राग समूळगो नष्ट थइ जाय. अने आत्म–गुणनुं आपणने सहज भान थाय अने छेवटे वीतरागदशा, प्रगट करवाने सर्व प्रमाद दोषनो परिहार करीने सम्यग् ज्ञान, दर्शन अने चारित्रना दृढ अभ्यासथी आपणे सर्वथा निष्कषायपणुं पामीये.

जेओ शुद्ध देव गुरु धर्म उपर निर्मळ राग करवाने बदले उलटो कराग–द्वेष पेदा करे छे ते हतभागयोने भविष्यमां अनंत भव भ्रमण करवुं पडशे. अने तेमने प्राप्त सामग्री पुनः पामवी दुर्लभ थइ पडशे.

जेओ पोते गुणी छतां गुणवंत उपर राग धरशे तेओ अवश्य उभय लोकमां सुख अने यशना भागी थइ अंते अक्षय पदने पामशे.

दीक्षा ग्रहण करीने जे क्रोधादि कषायने सेवशे–हितकारी वचन कहेनारनी उपर कोपशे, तपश्रुतनो गर्व करशे अथवा पूजा प्रतिष्ठादिकथी मनमां अभिमान धरशे, खरा गुण विना खोटो आडंबर रची दंभवृत्ति चलावशे अने वस्त्र पात्र पुस्तक या शिष्य शिष्याओनो खोटो लोभ राखशे. तेमनी उपर ममता धारण करशे तो

ते स्वचारित्रने निष्फळ करीने अंते अधोगतिने पामशे. सहज गुणदायी चारित्रने धारीने जे भवभीरु साधुओ राग द्वेषादिक दुष्ट विकारना उत्पादक अनुकूळ या प्रतिकूळ कारणो मळतां छतां निरतिचारपणे स्वसंयमने पाळे छे तेज खरा धीर वीर साधुओ छे एम निश्चे जाणवुं. कयुं पण छे केः—विकारहेतौसतिविक्रियंते, येषां न चेतांसि त एव धीराः—राग द्वेष या कामक्रोधादि विकार ऊपजे, एवां कारण विद्यमान छतां जेमनां चित्त जराए क्षोभ पामतां नथी तेज धीर-वीर पुरुषो छे. ॥

---

## १६ अहिंसा व्रतनो आदर कर.

प्रमाद युक्त आचरणथी स्वपर प्राणनो नाश करवो तेनुं नाम हिंसा छे. मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, अने विकथा ए पांच प्रमाद जीवोने दुर्गतिमां पाडनार छे तेथी ते अवश्य वर्ज्य छे, सर्व प्रमाद रहित थइने "आत्मवत् सर्व भूतेषु" सर्व प्राणीने स्वसमान लेखनार महाशय अहिंसा व्रतने यथार्थ पाळी शके छे.

सर्व जीवने अभय दान देनार जेवो कोइ उत्कृष्ट पुन्यवान् नथी. केमके सर्व दान करतां अभय दान चडीयातुं छे.

दुनियामां वहालामां व्हाली चीज पोताना प्राणज गणाय छे. तेथी कोइ क्षुद्र जीवना पण प्रिय प्राण अपहरवा यत्न करवो नहि.

सर्व जीवितज इच्छेछे, कोइपण मरणने इच्छतुंज नथी. एम स-मजी निर्ग्रंथ पुरुषो अहिंसाव्रतनो अत्यंत आदर करे छे.

मनथी, वचनथी, के कायथी हिंसा करवा करावva के अनु-मोदवानो सावधानपणे त्याग करवाथीज अहिंसाव्रतनुं पूर्ण रीते पालन थाय छे.

जे जेवा मंद के उत्कृष्ट परिणामथी परने परिताप करे छे ते तेनो तेवोज अल्प के अधिक विपाक भोगवे छे. तथा कोइ रीते कोइने पण पीडा ऊपजे एवुं मनथी, वचनथी के कायाथी, करवुं, कराववुं के अनुमोदवुं नहि. केमके जेवुं बीज वावीये तेवुंज फळ पामीये. वळी आपणने दुःखमात्र अनिष्ट छतां जो आपणे अन्यने आपणा तुच्छ स्वार्थनी खातर जाणी जोइने असमाधि उपजाविये तो पछी तेना बदला तरीके आपणने पण असमाधिज पेदा थाय तेमां आश्चर्य शुं ! तथा उत्तम रस्तो एज छे के सारा के नरसा अ-नुकूळ के प्रतिकूळ संजोगोमां सहनशीळपणुं धारण करीने कोई जीवने कंइपण असमाधि नहि करतां बनी शके तेटली समाधि क-रवा भरसक्तीस थावुं. आवा कठीण पण सीधे रस्ते चालनार स-त्पुरुषने कदापि कंइपण कष्ट प्राप्त थवानुं नथी, एटलुंज नहि पण ते सत्पुरुष पोताना सदाचरणथी श्रेष्ठ सुगतिनोज अधिकारी थवानो.

शरीर संबंधी अनेक प्रकारना व्याधि, निर्धनता, परवशता, अने वैर, विग्रह विगेरे सर्व हिंसानां फळ समजीने शुभबुद्धिजनोए अहिंसानोज आदर करवो.

आरोग्य, सौभाग्य, स्वामित्व, अने समाधि प्रमुख अहिंसानां फळ समजीने शाणा माणसोए अहिंसाव्रतनोज अत्यंत आदर करवो युक्त छे.

## १७ सत्य व्रतनुं पालन कर.

प्रिय अने हितकारी वचनने ज्ञानी पुरुषो सत्य कहे छे, अने सत्य छतां अप्रिय, कटुक अने अहितकारी वचन असत्यज कहुं छे. तथा बलाए वचन व्यवहारमां विशेषे विवेक राखवानी जरुर छे.

आंधळो, कुब्जो, लबाड, चोर, दुष्ट, धीठ विगेरे वचनो रागद्वेषादिक विकारथी उच्चरायेलां होवाथी ते प्रसंगे असत्य ठरे छे.

वैर, खेद, अविश्वासादि अनेक दोषो असत्य बोलवाथी उद्भवे छे. तेमज आलोकमां वसुराजानी परे अपवाद अने परलोकमां अनर्थ परंपराने पामे छे.

असत्य बोलनारने पोताना वचनपर प्रतीति बेसाडवा अनेक कुतर्को करवा पडे छे तेथी तेनु मन महा माठा ध्यानमांज मग्न रहेछे.

सत्य बोलनारनुं मन निर्भय रहे छे, तेथी तेने खोटा संकल्प विकल्प करवा पडता नथी. सत्य वचनमां टेक राखनारने देवता पण सहाय करे छे.

सत्य वचन क्षीरसमुद्रना जळ जेवुं मीठुं छे तेथी सत्यनुंज पान करनारने खारा समुद्रनां जळ जेवां असत्य वचनथी कदापि संतोष वळतोज नथी.

असत्य भाषणथी भोळा लोकोने अवळे रस्ते दोरनार जेवो कोइपण विश्वासघाती–महापापी नथी. तेथी सभासमक्ष भाषण करनारे पोतानी जवाबदारी सारी रीते विचारी राखवानी जरुर छे. केमके तेना उपर लाखोगमे माणसोना भविष्यनो सवाल रहेलो छे.

सत्यना रागीए लक्षमां राखवुं जोइये के दुनियामां असत्य बोलवानां कारण मात्र क्रोध, मान, माया, लोभ, भय के हास्यज होय छे, अने जेम बने तेम काळजीथी तेवां कारणोने दूर करीने सत्यज वचन वदवुं एवा सत्यवादीनो सुयश कालिकाचार्यनी पेरे चिर स्थायी रहे छे.

सत्यनी खातर पोताना प्रिय प्राणने पण गणे नहि तेज सत्य धर्मनो अधिकारी छे. एम समजीनेज युधिष्ठिर प्रमुखे प्राणांत सुधी ते व्रतनुं पालन कर्युं छे.

जे माणस विवेकथी विचारीने प्रसंगोपात, हित, मित, भाष-णथी सर्वने प्रिय लागे एवुं सत्य वचन बोले छे. तेनुं वचन सर्व मान्य थवाथी अंते ते अभीप्सित कार्य सुखे साधी शके छे!

तोतडी जीभ, मूंगापणुं, मुखपाकादि रोग, मूर्खता, दुःस्वर अने अनादेयवचनादिक सर्व असत्यनांज फळ समजीने तेनाथी सुबुद्धिजनोए दूर रहेवुं. तेमज बीजा पण योग्य जीवोने दूर रहेवा प्रेरणा करवी.

चोखी जीभ, सुस्पष्ट भाषित्व, निर्दोषपना, पांडित्य, सुस्वर, अने आदेयवचनादिक सर्व सत्यनांज फळ समजीने शाणा माणसोए सदा सत्यनो-प.पक्ष करीने सत्यव्रतनुं पालन करवा उजमाळ रहेवुं.

## १८ अदत्तनो त्याग कर.

साक्षात् अन्यायथी दावपेच करीने पराइ वस्तु छीनवी लेवी, तेम करवा बीजाने उश्केरणी करवी, तेने सहाय आपवी, जाणी जोइने चोराइ वस्तु लेवी, थापण ओळववी, अने विश्वासघात क-रवो ए बधा चोरीना पेटामां आवी जाय छे. एम समजीने दक्ष नीतिवंत अने दयाळु श्रावके तेनाथी बीलकुल दूरज रहेवुं.

दस भाग उपरांत पैसाने लाको अगीयारमो भाग लेखे छे तो

एवा प्राणप्रिय द्रव्यनुं अपहरण करनार माणस पराया प्राणना हरण करनार करतां पण अधिक पातकी ठरे छे, अने तेथी ते आलोकमां प्रत्यक्ष वध बंधनादिक पामीने परभवमां नरकनो अधिकारी थायछे.

मुमुक्षु साधुने तो एथी पण अधिक बारीकीथी अदत्तनो त्याग करवानो छे. तेने तो मनथी पण अदत्त लेवानो सख्त निषेध कहेलो छे.

स्वामी अदत्त, जीव अदत्त, तीर्थंकर अदत्त, अने गुरु अदत्त एम च्यार प्रकारनुं अदत्त सर्वथा तजी साधुने महाव्रत पाळवानुं छे. तेमां जेटलो जेटलो अनादर कराय छे तेटलुं तेटलुं महाव्रत दूषित थतुं जाय छे. तेथी तेनुं स्वरुप यथार्थ समजीने सुसाधु जनोए अदत्तथी सर्वथा दूर रहेवा यत्नवंत रहेवानी अवश्य जरुर छे.

आहार, पाणी, औषध, भेषज, वस्त्र, पात्र, अने रहेठाण विगेरे तेना धणीनी रजा सिवाय लइ वापरवाथी स्वामी अदत्त लागे छे.

घर धणीए आप्या छतां जो ते ते वस्तु सचेत (सजीव) अथवा अचेत (निर्जीव) नहि थयेली एवी मिश्र छतां लइ वापरवामां आवे तो ते लेनार अने वापरनार साधुने जीव अदत्त लागे छे.

द्रव्य, क्षेत्र, काळ, अने भावने प्रधान करीने प्रवर्ततां एवी प्रभु आज्ञाने प्रमाण करवाने बदले स्वच्छंदपणे व्यवहार चलाववाथी

आप स्वद् वर्तनथी तीर्थंकर अदत्त लागे छे.

तेमज गीतार्थ गुरु महाराजनी तेवीज हितकारी आज्ञाने अव-गणी आप मते चालनार साधुने गुरु अदत्त लागे छे.

अदत्तनुं स्वरुप सम्यग् विचारीने जे भवभीरु जनो तेनाथी अलगा रहेशे ते स्वर्गादिकनी संपदाने साक्षात् पामी अंते अविचळ सुखना अधिकारी थाशे.

---

## १९ ब्रह्मचर्यनुं सेवन कर.

देवता, मनुष्य अने तिर्यंच संबंधी विषय भोगोथी विरमीने सहज संतोषधारी, धर्मध्यानमां निमग्न रहेवुं तेनुं नाम ब्रह्मचर्य छे.

मनथी पण उक्त विषयोने नहि इच्छवारुप महाव्रत मुमुक्षु पुरुषोने होय छे, अने यथासंभव सामान्यपणे तो ते व्रत गृहस्थ श्रावकोने पण होय छे. मुनियोमां स्थूलभद्रादिकनां अने गृहस्थोमां विजय शेठ अने विजया शेठाणी तथा सुदर्शन शेठ विगेरेनां तेमज अनेक सता अने सतीओनां दृष्टान्तो जग जाहेर छे.

अनादिनी विषय वासना भाग्ययोगे सर्वथा अथवा अंशथी उपशान्त थये छते उक्त महाव्रत सर्वथी के देशथी उदय आवे छे. उक्त महाव्रतना दृढ अभ्यास पूर्वक भावनाथी तेनी सिद्धि थतां ते

महाशयने सहज संतोष जन्य अनंत सुख व्यापी. जाय छे अने एवा स्वाभाविक सुखमां निमग्न थयेला योगी पुरुषने कदाच अप्सरा चलायमान करवा यत्न करे तो ते तदन निष्फळ जाय छे. एवा स्वाभाविक आत्म सुखनीज कामनाथी जे महाशयो उक्त महाव्रतने सेवे छे ते सकळ सुरासुरने मान्य थइने अक्षयसुखना अधिकारी थाय छे.

उक्त महाव्रतनी रक्षा माटे प्रथम नव ब्रह्म–वाडो पाळवानी जरुर रहे छे. माटे ते वाडोनुं स्वरुप समजी दरेक मुमुक्षुए तेनो खप करवो युक्त छे.

१ वसति–स्त्री, पशु, पंडक विगेरे रहे त्यां ब्रह्मचारीने रहेवुं कल्पे नहि.

२ कथा–कामकथा करवी घटे नहि.

३ निषद्या–स्त्री विगेरेनुं आसन शयन विगेरे वापरवुं नहि.

४ इंद्रिय–स्त्री आदिकनां अंगोपांग रागबुद्धिथी नीरखवां नहि.

५ कुडयंतर–भींत अथवा पडदा पासे स्त्री आदिकनो वास तजवो.

६ पूर्वक्रीडा–पूर्वे अव्रतीपणे करेली काम क्रीडा संभारवी नहि.

७ प्रणीत भोजन–रसकसवाळा घेवर प्रमुखनुं स्निग्ध भोजन करवुं नहि.

८ अतिमात्राहार–प्रमाणथी वधारे लूखुं भोजन पण करवुं नहि.

९ विभूषा–स्नान, वस्त्रालंकारथी के तैलादिकना मर्दनथी ब्रह्मचारीने स्वशरीरनी शोभा करवी करावी नहि.

ए प्रमाणे अखंड ब्रह्मचर्यने पाळीने पूर्वे अनेक शुद्धात्मयो जेम अक्षय सुखने पाम्या छे तेम वर्तमान अने अनागत काळमां पण पवित्र पुरुषार्थ फोरवनारा अनेक महाशयो ए निर्मळव्रतने निरतिचारपणे पाळीने आत्मोन्नति करी अन्यने दृष्टांतरूप थइने अंते अक्षय संपदाने वरशे.

---

## २० परिग्रह—मूर्च्छानो परिहार कर.

सचेत, अचेत, के मिश्र एवी अल्प मूल्य के बहु मूल्यवाळी वस्तु उपर मूर्च्छा थवी तेने ज्ञानी पुरुषो परिग्रह कहे छे. ते परिग्रह बे प्रकारनो छे.

धन, धान्य, रुपुं, सोनुं, द्विपद, चतुष्पद विगेरे बाह्य परिग्रह छे. तथा वेदोदय ३, हास्यादि ६, मिथ्यात्व अने कषाय ४ मळीने १४ प्रकारनो अभ्यंतर परिग्रह कह्यो छे.

ए बन्ने प्रकारनो परिग्रह सर्वथा परिहरे ते निर्ग्रंथमुनि कहेवाय छे.

## २१ वैराग्य भाव धारण कर.

**संपदो जल तरंग विलोला, यौवनं त्रि चतुराणि दिनानि शारदाभ्रमिव चंचल मायुः, किं धनैः कुरुत धर्ममनिन्द्यं॥**

लक्ष्मी जळतरंगनी जेवी चपळ छे, यौवन अल्प स्थायी होवाथी अस्थिर छे, अने आयुष्य शरदनां वादळां जेवुं चंचळ छे. माटे हे भव्यो! तमे क्षणिक धननो लोभ तजीने सर्वोत्तम एवा वीतराग भाषित धर्मनुंज सेवन करो.

रागीना उपर रहेनारी या स्वार्थ पूरता कृत्रिम रागने धरनारी एवी नारीने कोण सहृदय पुरुष वांछे? तेतो विरागी उपर पूर्ण प्रेमने धरनारी एवी मुक्तिकन्यानेज वांछे छे.

दुनियामां सर्व कोइ स्वजनवर्गादिक स्वार्थनिष्ठज छे. एम सुस्पष्ट समज्या छतां कोण सहृदय पुरुष तेमां निष्कारण मग्न थइ रहे? ज्यारे मोह मायानो पडदो दूर खसे छे त्यारे अखंड साम्राज्य सुखने साक्षात् सेवनारा चक्रवर्ती सरखा सिंह पुरुषो पण पूर्ण वैराग्यथी आ पौद्गलिक सुखनो त्याग करीने सहज आनंदने साक्षात् अनुभववाने श्री वीतराग देशित चारित्र धर्मनो स्वीकार करीने तेने सिंहनी पेरे पाळवा प्रवृत्त थाय छे.

दुःखगर्भित, मोहगर्भित अने ज्ञानगर्भित एम वैराग्य त्रण प्रकारनो छे. ए त्रणे प्रकारमां ज्ञानगर्भित वैराग्यज शिरोमणि छे.

जेम हंस क्षीर नीरने स्वचंचुथी जूदां पाडी क्षीरमात्रनुं ग्रहण करी ले छे. तेम ज्ञानगर्भित वैराग्यवंत-विवेकात्मा शुद्ध चारित्रना बळथी अनादि कर्ममळने दूर करी शुद्ध आतमत्व (सहजानंद सुख) ने साक्षात् पामे छे.

रागद्वेषादिक दुष्ट दोषोने दूर करवाथीज शुद्ध वैराग्य प्रगटे छे, अने उक्त वैराग्यना दृढ अभ्यासथी रागद्वेषादिक विकारो समूळगा नाशे छे, त्यारेज आत्मानी सहज वीतराग ( परमात्म ) दशा साक्षात् प्राप्त थाय छे.

आवा वीतराग परमात्मानां वचन सर्वथा प्रमाण करवा योग्यज होय छे. आ दुःखमय असार संसार मध्ये श्री वीतराग देशित धर्मनुं सेवन करी लेवुं, एज सारभूत छे, छतां पण प्रमादवशवर्ती जनो सत्य-सर्वज्ञ देशित धर्मनुं यथार्थ सेवन करी शकताज नथी, जेथी पूर्व पुण्योदये प्राप्त थयेली आ अमूल्य तकने गमावी ते बापडाओने पाछळथी बहु शोचवुं पडे छे.

समतासागर सत्पुरुषोना सदुपदेशनुं विधिवत् श्रवण मनन करवाथी भव्य जीवोने पूर्वोक्त उत्तम वैराग्यनो अपूर्व लाभ मळे छे.

विरक्त भावे रहेतां विशाळ राज्यादिक भोगो पण बाधकभूत थइ शकता नथी. पण अन्यथा तो गाढमोहथी आत्मा मलीन थया विना रहेतोज नथी. विरक्त पुरुष छती वस्तुए अनासक्त रहे छे, अने मूढात्मा तो तेमां सदाकाळ आसक्तज रहे छे. शुद्ध वैराग्यनीज खरी बलिहारी छे, खरा वैराग्यथी चक्रवर्तीने स्वराज्य तजवुं लगारे मुश्केल नथी. पण मोहग्रस्त भीखारीने तो एक रामपात्र (शकोरुं) तजवुं पण भारे कठण थइ पडे छे. शुद्ध वैराग्यवंत निष्कलंक चारित्रने पाळी सर्व दुःखने शमावी अंते अक्षय सुखने वरे छे.

---

## २२ गुणीजनोनो संग कर.

निर्गुणी एवा खल या दुर्जनोनो संग त्यजीने हे भव्य तुं तारुं स्वहित साधवाने सद्गुणी–सज्जनोनो सदा समागम कर.

सद्गुणीनी सोबतथी निर्गुण पण गुणवंत थाय छे अने नीच एवा निर्गुणीनी सोबतथी सद्गुणी पण निर्गुणी थइ जाय छे. जुओ! मलयागिरिना संगथी सामान्य वृक्षो पण चंदनताने अने मेरुगिरिना संगथी तृण पण सुवर्णताने भजे छे. तेमज लीमडाना संगथी आंबा अने कोळाना संगथी कणकनो बाक विनाश पामे छे.

साधु पुरुषो सदुपदेशवडे सामाना अज्ञान अंधकारनो नाश

करी तेने सत्य वस्तुनुं भान करावे छे, जेथी तेनो मोह भ्रम दूर नासे छे.

गुणीजनो निर्गुणीजनोने पण सद्गुणी करवा इच्छे छे, गुणीमांथी गुण ग्रहण करे छे, सद्भूत गुणनुं गान करे छे अने पोताना गुणोनो पण गर्व करता नथी. एवा सद्गुणीनो संग महा भाग्य योगेज थाय.

• गुणीजनो मनथी वचनथी अने कायथी निःस्पृहपणे परोपकार करे छे.

सद्गुणीना संगथी सामानां पापनो लोप थाय छे, धर्माचरण करवामां निर्मळ मति विस्तरे छे, वैराग्य प्रगटे छे, स्नेहराग विघटे छे, सर्व इंद्रियो उपर काबु मळे छे, शोक क्लेश अने भयादिक दुःखनो जय थइ शके छे अने संसारनो पार थाय छे. एम समजीने स्व चरित्रने निर्मळ करनार एवा सत्पुरुषोनी सोबत तुं निरंतर कर. पात्रापात्रनी योग्य कदर गुणी पुरुषज करी शके छे पण निर्गुणी करी शकतो नथी. तेथी जो सामामां पात्रता होय तो ते तेने स्व समान करवा पण भूलतो नहि. परंतु जो पात्रतानी खामी जणाशे तो पहेलुं प्रथम सामाने पात्रता प्राप्त करावया दोरशे, अने ते योग्यज छे. केमके सुपात्रमांज करेलो श्रम सार्थक थाय छे कहुं पण छे के "पात्रापात्रनो विवेक शिखवाने गाय अने सर्पनो मुकाबलो करवो.

गायने तृण-भक्षणथी दूध थाय छे अने सापने दूध पावाथी प
झेरज थाय छे." सुबुद्धिजनोए तो सर्वथा प्रथम पात्रताज प्र
करवा लक्ष दोरवानुं छे.

---

## २३ श्री वीतरागने ओळखी वीतरागनुं सेवन कर

जेने संक्लेशकारी राग, शान्ति भंजक द्वेष अने सम्यग् ज्ञाना
च्छादक तथा विपरीत चेष्टाकारी मोह सर्वथा नष्ट थया छे, अ
त्रिभुवनमां जेनो महिमा गवायो छे तेज खरा महादेव छे. जे वीत
राग, सर्वज्ञ, अक्षय सुखना स्वामी, क्लिष्ट एवां कर्मथी मुक्त अ
सर्वथा देहातीत-जन्म मरणथी रहित थया छे. जे सर्व देवोना पू
ज्य छे, सर्व योगीओना ध्येय छे अने सर्व नीतिना कर्ता छे ते
खरा महादेव छे. ए प्रमाणे श्रेष्ठ चरित्रवाळा जेमणे सर्व दोष
रहित मोक्ष मार्ग प्रकाशक शास्त्र प्रकाश्यां छे तेज परम देव गणा-
त्या छे.

सदा सावधानपणे तेमनी आज्ञानो अभ्यास करवो एज तेमनी
आराधनानो खरो उपाय छे. अने ते पण शक्तिना प्रमाणमां कर-
वाथी अवश्य फळदायी नीवडे छे. जेवी शक्ति गोपवीने मात्र मान-
ओनो जोरए तेवो सर्वज्ञ आज्ञाने अनुसार सदुपयोग करी सत्कार
प्रमादशील बनेले थी वीतराग देवनो यथार्थ लाभ मळी शकतो

नथी. जेम परोपकारशील एवा कुशल वैद्यनां निःस्वार्थ वचनानुसारे वर्तन करनार व्याधिग्रस्त जनोना व्याधिनो अंत आवे छे, तेम परमात्म प्रभुनां एकांत हितकारी वचनने परमार्थथी अनुसरनार भव्य जीवोनां भवदुःखनो जरूर अंत आवे छे.

एवी रीते परमशांत, कृतकृत्य, अने सर्वज्ञ-सर्वदर्शी! एवा वीतराग परमात्माने सम्यग् भक्ति-भावथी सदा नमस्कार थाओ!

मोह माया तजीने जे प्रसन्नचित्तथी परमात्म प्रभुनी पूजा सेवा करे छे ते सर्व अघन टाळी अंते अनघ एवा अक्षयपदने वरे छे. जे उपर मुजब परमात्मानुं स्वरुप सद्बुद्धिथी विचारीने विवेक पूर्वक तेमनी पवित्र आज्ञाने यथाशक्ति आराधवारुपी उपासना निष्कपटपणे करे छे ते अनुक्रमे दृढ अभ्यासना योगथी सर्व दुःखनो अंत करीने पोतेज परमात्मपदने वरे छे.

---

## २४ पात्रापात्रने समजी सुपात्रने दान दे.

जे संसारथी उदासीन थइ सर्वज्ञ वीतराग वचनानुसारे सर्व आरंभ परिग्रहनो त्याग करी पांच महाव्रतोने धारण करीने स्व कर्तव्य सावधानपणे साधवा उजमाळ रहे छे ते जैनशासनमां सुपात्र कहेवाय छे तेथी विरुद्ध वर्तन करनार प्रमादी, स्वच्छंदी या दंभी

ढोळधालुनी कुपात्रमां गणना थाय छे. कल्याणार्थीए कुपात्रनी उपेक्षा करीने प्रतिदिन सुपात्रनीज पोषणा करवी युक्त छे.

सुपात्रमां पण न्यायोपार्जित द्रव्यवडे विवेक पूर्वक क्षेत्र कालादि विचारीने करेलो व्यय अत्यंत हितकारी थाय छे.

सुपात्रने कुपात्र बुद्धिथी के कुपात्रने सुपात्र बुद्धिथी दीधेलुं दान दूषित छे.

पात्रापात्रनी योग्य परीक्षा पूर्वक सुपात्रने स्वल्प पण आपेलुं विवेकवाळुं दान अमूल्य थइ पडे छे, विवेक विना तो ते विशेष पण फलीभूत थतुं नथी.

स्वाभाविक प्रेम, उल्लास, उदारता, अने अकुंठित भावना विगेरे विवेक युक्त दानना भूषण छे, तेथी दाताने अत्यंत लाभ थायछे.

स्वाति नक्षत्रनुं जळ जेम जूदां जूदां फळ आपे छे, तेम गमे तेवुं सारुं द्रव्य पण पात्रताना प्रमाणमांज फळीभूत थाय छे. माटेज पात्रापात्र संबंधी विचार प्रथम कर्तव्य छे. सुपात्र दानथी शाळीभद्रनी पेरे विशाळ भोग पामी पछी स्वर्ग या मोक्षनां सुख प्राप्त थाय छे. अरे तेनी अनुमोदना मात्रथी मृगला जेवां मुग्ध प्राणी पण साक्षात् दातारनी पेरे स्वर्ग गति पामे छे. तो पछी परम प्रेम पूर्वक पवित्र चारित्रपात्र साधुजनोने जे सदा उल्लसित भावे दान दे छे,

अने अन्य देनारनी अनुमोदना करे छे तेमनुं तो कहेवुंज शुं ! तेतो तेमना पवित्र आशयथी अक्षय सुखनाम अधिकारी थाय छे. तेथी शास्त्रकार योग्यज कहे छे के हे भव्यो ! तमे अनेक गुणनिधान स्वर्ग मोक्षदायक सकल सुखकारक, पाप भोग निवारक, स्वपर हितकारी, अने सर्व संतोषकारी एवुं अक्षय सुखहेतुक दान निर्ग्रंथ मुनियोने सदा आपो.

## २५ जरुर जणाय त्यांज जिनालय जयणाथी करावबुं.

केटलाक भाग्यशाली भव्यनुंज द्रव्य जयणाथी जिनालयमां वपराय छे.

नवुं जिनालय करवा करतां जूनुं समराववामां सामान्य रीते आठ गुणुं फळ शास्त्रकारो कहे छे. शुद्ध समजथी तो ते करतां अनंतगणुं फळ मळे छे.

न्यायोपार्जित द्रव्यवाळो, उदार आशय, मोटी त्यागवगवाळो, शास्त्र नीति प्रमाणे चालनारो, भवभीरु श्रावकज जिनालय करावनानो अधिकारी छे. केमके तेज तेने जयणा पूर्वक निर्विघ्ने करावी साचवी शके छे.

जिनालय करावतां कोइपण जीवने लगारे किलामना उपजाववी नहि. तेमां उत्तमोत्तम वस्तुओ वापरवी, अने कारीगरोना कामनी विशेषे कदर करवी. नीच जातिना लोकोने या मद्यमांस भोगीने तेमां कामे लगाडवा नहि. दयाना काममां पूरती काळजी राखवी.

चैत्य पूर्ण थये छते तेमां विलंब रहित विधिवत् जिनबिंबनी स्थापना करवी. बिंब प्रतिष्ठादिक सत् क्रिया यथायोग्य सुविहित साधु पासे कराववी. सूरिमंत्रादिकथी प्रतिष्ठित प्रभु प्रतिमामां अपूर्व चैतन्य प्रगटे छे, जेथी भव्य जीवोने दर्शन करतां शाक्षात् समवसरणनुं भान थाय छे, अने प्रभु महिमाथी पूजा भक्तिमां भाविक जीवो तल्लीन थइ जाय छे.

प्रभु प्रतिमा शास्त्रोक्त नीति मुजब प्रमाणमां नानी या मोटी कराववामां आवे छे. जेने देखतांज भव्य जीवोने प्रभुनी पूर्व अवस्थानुं यथार्थ भान थइ आवे छे, जेथी तेओ छद्मस्थ, केवळी, अने [निर्]वाण अवस्थाने जूदी जूदी रीते भावी शके छे.

स्नानार्चनवडे छद्मस्थ अवस्था प्रातिहार्यवडे केवळी अवस्था अने पर्यंकासने काउस्सग्गमुद्राथी प्रभुनी निर्वाण अवस्था भावी शकाय छे.

जिनबिंब युक्त जिनालय ज्यां सुधी स्थिर रहे त्यां
भव्य जीवो उक्त भावना वडे महान् लाभ उपार्जन करी
संचित कर्मनो क्षय करीने नागकेतुनी पेरे अविचळ पदर्व

आथी केवळ जश कीर्त्ति माटे जरूर विना नवां जि
रवा करतां जीर्ण जिनालय समरावनानी केटली बधी
स्पष्ट समजी, अल्प द्रव्यथी, अल्प श्रमथी अने अल्प वखत
लाभ लेवाने अने एम करीने अक्षय नामना मेळववाने
जनोए भूलवुं जोइतुं नथी. ज्यां सुधी पूर्व पुण्योदये लक्ष
छे, त्यां सुधीज तेवुं महत्त्वनुं काम स्वतंत्र पण बनी शके
एम जाणी विचारमांज वखत नहि गाळतां आवां परमार्थ
तेने सफळ करवो योग्य छे. जीर्णोद्धार करावनार महाशय
आत्मानोज उद्धार करे छे एटलुंज नहि पण अनेक भव्य
पण उद्धार करे छे. ते वात उपरली हकिकत समभावे
स्पष्ट मालुम पडशे.

पूर्वे पण अनेक भूपति, अमात्य अने श्रेष्ठीलोकोए अ
र्णोद्धार करीने स्वपर उद्धार कर्याना दाखला शास्त्रमां मोजु

---

## २६ निर्मळ भावनाओ भाव.

निर्मळ मनथी दान, शीळ, के तप विगेरे धर्मकरणी यथाशक्ति करतां अथवा नहि करी शकाय तेने माटे शोच पूर्वक अभ्यास करतां या तो कोइ महाशयने विधिवत् धर्मकरणी करतां देखीने मनमां जे शुभभाव पेदा थाय ते विगेरे भावना कहेवाय छे. उक्त भावना वडेज करेली करणी सफळ थाय छे, अभिनव भाव पेदा थाय छे अने अंते भव भ्रमणनो अंत आवे छे.

मैत्री, मुदिता, करुणा, अने माध्यस्थ्यरुप भावना चतुष्टय दरेक कल्याणार्थी जनोए प्रत्यहं भाववा–आदरवा योग्य छे, तेथी उक्त चारे भावनाओनुं स्वरुप कंइक संक्षेपथी पण जाणवानी जरुर छे.

१ मैत्री—सर्व कोइ मारा मित्र छे, कोइ मारा शत्रु छेज नहि. सर्व कोइ सुखी थाओ! कोइ दुःखी मत थाओ! सर्व कोइ सुखना मार्गे चालो! कोइपण दुःखना मार्गे नहि चालो! सर्व कोइ सत्य सर्वज्ञ भाषित धर्मनुंज शरण ग्रहो! कोइपण अधर्म या कुधर्मना मार्गमां नहि पडो! एवी पवित्र बुद्धि सर्व प्रति राखवी ते मैत्री.

२ मुदिता—या प्रमोद–मेघमाळाने देखी जेम मोर केकारव करे छे, अने चंद्रने देखी जेम चकोर खुशी थाय छे तेम गुण महो-

रोग पेदा थाय, जो कीडी या धनेडा विगेरे क्षुद्र जीवो आवे तो बुद्धि नाश थाय, माखी आवे तो वमन थाय, वाळ आवे तो कंठ (स्वर) भंग थाय, अने ऐरी जीवोनां विष गरलादिक आवे तो पोताना प्राण पण जाय. एम समजीने स्वदेहनी रक्षा माटे पण रात्रि भोजननो सर्वथा त्याग करवो उचित छे. परमार्थ बुद्धिथी तेनो त्याग करवाथी तो असंख्य जीवोने अभयदान देवाना अनंत पुन्यना भागी थइने उभयलोकमां उत्कृष्ट सुख पामी शकाय छे. माटे रात्रि भोजननो सर्वथा त्याग करवा शास्त्रकारोए भार दइने कह्युं छे.

शास्त्र संबंधी पवित्र आज्ञानो भंग करीने गूढमतिजनो रात्रिभोजन कर्या करे छे, तेओ पुन्य सामग्रीने निष्फळ करीने, करेलां क्लिष्ट कर्मना योगथी भवान्तरमां घूड, मोंढींया, साप, मार्जार, अने गरोळी जेवा नीच अवतार पामी नरकादिकनी महाव्यथाने पामे छे. रात्रि भोजनने शास्त्र नीतिथी तजनार भाइ व्हेनोए सूर्य अस्त पहेलां बे घडीथी मांडीने सूर्योदय पछी बे घडी सुधी भोजननो त्याग करवो जोइये, अने एम करवाथी एक मासमां १५ उपवासनो लाभ सहज मळी शके छे. तेमज जो 'गंठसहियं' प्रमुख पच्चख्खाण पूर्वक प्रतिदिन एकासन अथवा बेसन करवामां आवे तो एक मासमां २९ या २८ उपवासनो अवश्य लाभ मळे छे.

---

पान्यनी पेरे लूखीज लागे छे अने भावना युक्त ते अमृत समान स्वादिष्ट लागे छे. एथीज कह्युं छे के तद्धेतु अने अमृत क्रिया शीघ्र मोक्ष सुख अर्पे छे.

---

## २७. रात्रि भोजननो त्याग कर.

सूर्य अस्त थया पछी अन्नादि भोजन मांस समान अने जळ पानादि रुधीर समान कह्युं छे तेथी ज्ञानी पुरुषोने ते वर्ज्यज छे.

दिवसमां पण भोजन करतां अनेक सूक्ष्म जीवो उडतां भोजनमां आवी पडे छे तो पछी रात्री वखते तो तेवा असंख्य जीवो भोजनमां आवी पडे एमां तो कहेवुंज शुं ? आथीज रात्रि भोजन वर्ज्य छे. दिवसमां पण रसोइ करतां उपयोग नहि राखवाथी या भोजन करती वखते गफलत करवाथी कोइ झेरी जीव के तेनी झेरी लाळ मांहे पडया होय तो तेथी भोजन करनारना जीवनुं पण जोखम थाय छे.

जो दिवसमां पण वेदरकारीथी आटलो भय रहे छे तो रात्रिमां एवा अवनवा बनावो स्वभाविकज बनवा पूरतो भय राखवो जोइये. जो भोजनादिक करतां भोजनमां जू आवी जाय तो जलोदर रोग पेदा थाय, जो करोळीयो वगेरे आवे तो लूता (कोढ) आदिक

रोग पेदा थाय, जो कीडी या भनेडा विगेरे क्षुद्र जीवो आवे तो बुद्धि नष्ट थाय, माखी आवे तो वमन थाय, वाळ आवे तो कंठ (स्वर) भंग थाय, अने झेरी जीवोनां विष गरलादिक आवे तो पोताना प्राण पण जाय. एम समजीने स्वदेहनी रक्षा माटे पण रात्रि भोजननो सर्वथा त्याग करवो उचित छे. परमार्थ बुद्धिथी तेनो त्याग करवाथी तो असंख्य जीवोने अभयदान देवाना अनंत पुन्यना भागी थइने उभयलोकमां उत्कृष्ट सुख पामी शकाय छे. माटे रात्रि भोजननो सर्वथा त्याग करवा शास्त्रकारोए भार दइने कह्युं छे.

शास्त्र संबंधी पवित्र आज्ञानो भंग करीनेज सूक्ष्मतिजनो रात्रि-भोजन कर्या करे छे, तेओ पुण्य सामग्रीने निष्फळ करीने, करेलां क्लिष्ट कर्मना योगथी भवान्तरमां घूड, चामाचीडीआ, साप, धामीर, अने गरोळी जेवा नीच अवतार पामी नरकादिकनी महाव्यथाने पामे छे. रात्रि भोजनने शास्त्र नीतिथी तजनार भाइ व्हेनोए सूर्य अस्त पहेलां बे घडीथी मांडीने सूर्योदय पछी बे घडी सुधी भोजन-नो त्याग करवो जोइये, अने एम करवाथी एक मासमां १५ उप-वासनो लाभ सहज मळी शके छे. तेमज जो 'गंठसहियं' प्रमुख पच्चख्खाण पूर्वक प्रतिदिन एकासन अथवा बेसन करवामां आवे तो एक मासमां २९ या २८ उपवासनो अवश्य लाभ मळे छे.

---

## २८ मोह मायाने तजीने विवेक आदर.

'हुं अने मारुं' ए मोहना मंत्रथी जगत् मात्र आंधळुं थ गयुं छे. परंतु 'नहि हुं अने नहि मारुं' ए प्रतिमंत्र मोहने पण पराजय करवाने समर्थ छे.

शुद्ध आत्म द्रव्य एज हुं छुं अने शुद्ध ज्ञानादि गुण एज मारुं धन छे. ते शिवाय हुं अने मारुं कंइ नथी, एवी शुद्ध समज मोहनुं निकंदन करवाने समर्थ छे. तेथी दरेक मुमुक्षुए एज आद रवा योग्य छे.

नाना प्रकारना राग द्वेषवाळा विकल्पो वडे जेणे मोह मदिरानुं पान कर्युं छे ते पोतानुं भान भूलीने अनेक प्रकारनी विपरीत चे ष्टाओने वश थइ चारे गतिमां भमतोज फरे छे, अने विडंबना पात्र ज थाय छे. तेथी मोह मायामां नहि फसातां तेनोज क्षय करवा यत्न करवो युक्त छे. मोह मायाने सर्वथा जीतनारा अप्रमत्त मुनि- योज जगतमां शिरसा वंद्य छे. सर्वथा मोह रहित वीतराग मुनियोज परम शान्त छे.

वस्त्रबंधन करतां पण रागबंधन आकरुं छे अने तेने माटे प्रबळ वैराग्यनी पूरती जरुर छे. वैराग्यवडे गमे तेवुं राग बंधन दूर थइ जाय छे.

अज्ञान–अविवेक ए मोह बंधननुं, अने ज्ञान–विवेक ए वैराग्य दशा प्रगट करवानुं प्रबळ कारण छे.

पूर्वे जीवे जेवो शुभाशुभ अभ्यास कर्यो होय छे तेवोज तेने जन्मांतरमां उदय आवे छे, एम समजीने सदा शुभज अभ्यास सेववो अने अशुभ अभ्यास त्यजी देवो युक्त छे.

जे लक्षपूर्वक सदा शुभ अभ्यासनुंज सेवन करे छे, तेने पूर्व सेवित अशुभ कर्मोनो आपोआप अनुक्रमे अंत आवे छेज.

जेम निर्मोही–मोहरहित महा पुरुष वस्तु स्वरूपने जाणी जोइ शके छे तेम मोहाधीन–मूढात्मा कदापि जाणी शकतो नथी. तेतो बेभानताथी छता गुणमां दोषनो अने छता दोषमां गुणनो आरोप करी ले छे. आवो विभ्रमकारी मोह दूर करवा मुमुक्षुओेए सतत उद्यम करवो युक्त छे. मोहनो क्षय करवामांज तेमना चारित्रनी सफळता रहेली छे, एम समजीने जेम रागादिक विकारोनो लोप थाय तेम तेओ प्रमाद रहित परमार्थ पंथमां प्रवर्तवा प्रतिदिन प्रयत्न शील रहे छे. अने अन्य आत्मार्थी जनोने पण उक्त सन्मार्गमां ज प्रवर्तावा उपदिशे छे.

---

## २१. खोटी ममतानो त्याग करो.

नित्य मित्र समो देहः स्वजनाः पर्व सन्निभाः ॥
जुहार मित्र समो ज्ञेयो धर्मः परम बांधव —

जितशत्रु राजाने सुबुद्धि नामा प्रधान छे. बुद्धि निधान होवाथी ते राजाने बहु वल्लभ छे. एकदा कदाचित् दैववशात् तेना उपर कुपित थवाथी तेणे कोइक मित्रनुं ज्यां सुधीमां राजानो कोप शान्त थइ जाय त्यां सुधी शरण लेवानुं धार्युं. तेने नित्य मित्र, पर्व मित्र, अने जुहार मित्र नामना त्रण मित्र छे. प्रथम नित्य मित्र पासे गयो तो "अति परिचयात् अवज्ञा" ए न्यायथी तेनी वात हसी काढवाथी ते पछी पर्व मित्र पासे गयो. तेणे कंइक प्रथम तो आश्वासन आप्युं पण सविस्तर निवेदन करतां छाड मागता तेणे पोतानुं असामर्थ्य जणाव्युं. छेवट प्रधान रडतो रडतो जुहार मित्र पासे आव्यो तो तेणे पोताना उदार स्वभावने अनुसरी प्रधाननो असाधारण आवकार आपीने भारे आश्वासन पूर्वक जणाव्युं के मित्र! आज तमे कंइ भारे आपत्तिमां आवी पड्या छो एम तमारी मुखमुद्रा उपरथी हुं समजी शकुं छुं. तेथी कहुं छुं के तमे निश्चिंत थइने जे दुःखनुं कारण होय ते मने शीघ्र जणावो. आथी प्रधानने घणी हिम्मत आवी, अने सर्व हकीकत निवेदन करवाथी तेणे कह्युं के भाइ! लगारे फीकर

करशो नहि. ज्यां सुधी मारा खोळीयामां माण छे त्यां सुधी तमारो वांको वाळ करवाने कोइ समर्थ नथी. तमे सुखेथी अहिं रहो. आवा आवकारवाळा आश्वासनथी अत्यंत खुशी थयेलो प्रधान जूहार मित्रनुं शरण करीने रह्यो. काळे करी राजानो कोप पण उपशांत थयो, अने प्रधाननी भीति नष्ट थइ गइ. पण आवेली विपत्तिमां तेने मित्र संबंधी यथार्थ अनुभव थइ आव्यो. आपणे पण आमांथी बहु सरस शिखामण लेवानी छे. यमराजाने जितशत्रु राजा समान समजवो. अने आत्माने सुबुद्धि प्रधान समान समजवो, तेमज देहने नित्य मित्र समान, स्वजन वर्गने पर्व मित्र समान अने परम उपगारी धर्मने जुहार मित्र समान समजवो. ज्यारे यमराज कुपित थाय छे, अने कोइनो अवसान वखत आवे छे त्यारे ते गाभरो बनीने पोताना बचाव माटे बहु बहु फांफां मारे छे. परंतु ते सर्व निष्फळ जाय छे. प्रतिदीन यत्नपूर्वक पाळी पोषीने पोढो करेलो देह तेने लगारे सहाय देतो नथी, तेमज वळी प्रसंगे पोषवामां आवता स्वजनो पण तेने मुखथी मीठुं बोलवा उपरांत कंइपण विशेष सहाय करी शकता नथी. परंतु जुहार मित्रनी जेम अल्प परिचित छतां उदार आशयवाळो धर्म केवळ परम उपकारी बंधुनी पेरे परम सहायभूत थाय छे. एम समजीने शाणा माणसोए दुष्ट देहादिकनो मोह तजीने एकांत हितकारी परम गुणनिधान सद्गतिदाता धर्मनोज आश्रय करवो युक्त छे. तेनी उपेक्षा करी देहादिक उपर

[illegible]

[illegible] देह समन्वनें [illegible]

## [illegible] प्रयत्न [illegible]

[illegible] आगेनी- [illegible] सामग्र अति [illegible]

[illegible] स्व- [illegible]

[illegible] काळजी [illegible] समाधीजनो [illegible] विषम संयोगोने [illegible] अने भवनो [illegible]

खरा हिंमतवान पुरुषो आपत्तिने संपत्तिरुप देखीने सुखे उल्लं-घी जाय छे. पण पुरुषार्थ हीन जनो तो प्राप्त संपत्तिनो पण सदुप-योग करी शकता नथी. एटलुंज नहि पण उलटो तेनो दुरुपयोग करीने दुःखी थाय छे.

जेम राधावेध साधनार माणसने राधावेध साधवा बारीक उप-योग राखवो पडे छे, तेम दरेक मुमुक्षु जनने पण अवश्य राख-वानो छे.

सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन ( श्रद्धा ) अने सम्यग् वर्तन-सदा-चरण ( ए रत्नत्रय ) आ संसारसागर तरीने पार पामवानो अक-सीर उपाय छे.

जन्ममरणजन्य अनंत दुःख जळथी आ संसार समुद्र भरेलो छे. छतां तीर्थंकर जेवा निपुण निर्यामकनी सहायथी तेनो सुखे पार पामी शकाय छे.

दृढ संकल्पथी संसार सागरनो पार पामवानी पवित्र बुद्धिथी सर्वज्ञ वचनानुसारे सदुद्यम सेवनार सत्पुरुष जरुर संसारनो पार पामे छे. उत्तम प्रकारनी क्षमा, सरलता, नम्रता, निर्लोभता, उपरांत तप, संयम, सत्य, शौच, निर्ममता अने ब्रम्हचर्य रुप दशविध यति-धर्मनुं यथार्थ सेवन करनार शीघ्र मोक्ष सुख साधी शके छे. शुद्ध

धर्मार्थी माणसे प्रथम पात्रता मेळववाने माटे मार्गानुसारी थवुं युक्त छे. अने अक्षुद्रतादिक उत्तम गुणोनो अखंड अभ्यास करीने क्षुद्रता, निर्दयता, शठता, अप्रमाणिकता, अनीति, अन्याय, असत्य, अहंकार, कृतघ्नता अने स्वार्थ अंधता विगेरे अनार्य दोषोने प्रथम जरुर देशवटो देवो जोइये.

आ प्रमाणे अनुक्रमे अधिकार पामीने सत् समागमनी टेव पाडीने तेमांथी वगतो वखत मध्यस्थपणे सत्यने समजी सत्य ग्रहण करवुं जोइये. आ प्रमाणे यथनी जती सत्य तत्त्वरुचिथी अने तत्त्व ज्ञानथी सम्यक्त्व अपरनाम समकित या सम्यग् दर्शननी प्राप्ति थाय छे. आनुं नामज तत्त्व श्रद्धा, तत्त्व दर्शन या विवेक ख्याति कहेवाय छे.

तत्त्व श्रद्धारुपी विवेक दीपक घटमां प्रगट्या पछी अनुक्रमे तत्त्वाचरण–सन्मार्ग सेवन करवा माटे सतत प्रयत्न करवो जोइये, अने तेवो दृढ अभ्यास करीने सद्गुरु समीपे समकित मूळ उक्त अहिंसा, सत्य, अस्तेयादिक व्रतो यथाशक्ति आदरवां जोइये. तेमां पण प्रथम मांस, मदिरा, शीकार, परदारा गमन, वेश्यागमन, चोरी, अने जुगाररुप सप्त व्यसनोने तो उभयलोक विरुद्ध जाणीने अवश्य परीहरवां जोइये. तेमज मद्य, मांखण, भूमिकंद अने रात्रिभोजन विगेरे पण वर्जवां जोइए.

सुश्रावके अनुक्रमे सद्गुरु समीपे पांच अणुव्रत, त्रण गुणव्रत अने च्यार शिक्षाव्रत मळीने द्वादश व्रत संबंधी दृढ नियम लेवो जोइये. आवा व्रतधारी श्रावकोए प्रथमथी पवित्र आज्ञाने अनुसरी एवो सदृश्य अने न्याययुक्त–निष्पक्षपात व्यवहार चलाववो जोइए के जे प्रायः सर्व कोइने प्रिय थइ पड्या विना रहेज नहि. निपुण श्रावक न्यायनो एवो नमूनो [illegible] जोइये के कोइ पण सहृदय पुरुष तेनुं अनुमोदन या [illegible] कर्या वगर रहे नहि.

[illegible] पवित्र जिनशासनना [illegible] सेवी [illegible]

[illegible] सम्यक्त्व [illegible]

[illegible] पर्वो- [illegible] व्रतपाळ

[illegible] अर्थात [illegible] थाय छे.

अननुभवीपणे महाव्रत लेवाथी कदाचित् परीषह उपसर्गादिकथी पडी जवानुं बने छे, तेम अनुभवी महाशयथी महाव्रत लीधा बाद प्रायः पडी जवानुं बनतुं नथी.

मन, वचन, के कायाथी कोइपण जीवनी हिंसा राग के द्वेष वडे जाते करवी नहि, बीजा पासे कराववी नहि अने करनारने सारा जाणवा नहि ते प्रथम महाव्रत छे.

क्रोध, मान, माया, लोभ, भय के हास्यथी कंइपण असत्य (अप्रिय–अहितकारी) वचन कदापि कहेवुं, कहेवरावबुं के अनुमोदवुं नहि. ते बीजुं महाव्रत कहेवाय छे.

कोइपण प्रकारे देवगुरु के स्वामीनी आज्ञा विरुद्ध कोइनी कंइपण वस्तु अन्न, पान, वस्त्र, पात्र, औषध, भेषज के स्थानादि कदापि लेवी लेवरावबी के अनुमोदवी नहि. तेमज मन वचन अने कायाथी सचेत (सजीव) के मिश्र (जीवमिश्र) एवी उपरथी वस्तु कदापि कोइ आपे तोपण ग्रहण करवी नहि ए त्रीजुं महाव्रत छे.

देव मनुष्य तिर्यंच संबंधी मैथुन मन वचन के कायावडे कदापि सेववुं नहि. अन्यने सेववा प्रेरवुं नहि तेमज सेवनारने सारा जाणवा पण नहि ए चतुर्थ ब्रह्मचर्य नामे महाव्रत कहेवाय छे.

धर्मोपकरणादिक केवळ धर्म निर्वाहने माटेज जरुर जेटल राखी तेनो यथार्थ उपयोग करवा उपरांत कोइ पण वस्तु अल मल्यवाळी या बहु मूल्यवाळी होय तेना उपर मूर्छा करवी नहि निःस्पृहता राखवी, अने परस्पृहा तजी देवी ते परिग्रह त्याग नाम पांचमुं महाव्रत छे.

उक्त पंच महाव्रत उपरांत मुनिए रात्री भोजननो सर्वथा त्याग करवानो छे. जेथी षटरस पैकी कोइपण वस्तु-अन्न पानादिकनो सर्वथा निषेध सूर्यास्त पहेलां ( बे घडीथी ) सूर्योदय पछी ( बे घडी ) सुधी मुनिने माटे निश्चित होवाथी तेवो पण अभ्यास सथमधीज कर्तव्य छे. मुनिने उत्तम प्रकारनी क्षमा, मृदुता, रुजुता, अने संतोषादि दशविध यतिधर्म बहुज बारीकीथी निरंतर आराधवा योग्य छे.

समतादिक श्रेष्ट धर्मना सेवनथी मुनिजनो शीघ्र मोक्ष सुखने प्राप्त थाय छे. तेथी अंतरमां मोक्षार्थीजनोने वधुंज साधवा योग्य छे.

---

## ३२ दुःखदायी शोकनो त्याग कर.

इष्ट वस्तुना वियोगथी के अनिष्ट वस्तुना संयोगथी बहुधा मुग्ध अज्ञानी जनोने जे अंतरमां दुःखकारी मोह पेदा थाय छे अने रुदनादिक विविध चेष्टाओ करावे छे तेनुं नाम शोक कहेवाय छे.

सम्यग् ज्ञानी-विवेकी आत्माने उक्त मोह-शोक एटलो सतावी शकतो नथी. कचित् क्षणमात्र अवकाश मेळवी ज्ञानीने पण शोक छळवाने जाय छे, परंतु अंते तो विवेक योगे तेनोज पराजय थायछे.

जे जे कारणो मुग्ध अज्ञानी जनोने मोह-शोकनी वृद्धीनां छे ते ते ज्ञानी-विवेकीने मोहादिकनी हानिनां एटले के वैराग्य वृद्धिनां ज थाय छे.

पूर्वे अनेक सतीओ विगेरेने एवां कारणो संसार चक्रमां अनेकशः मळ्यां छे. पण परिणामे तेवां कारणोथी तेमने लाभज थयोछे.

तेवा ज्ञान विवेक के वैराग्यनी गंभीर खामीथी आज काल मुग्ध अज्ञानी लोको उक्त मोह-शोकने वश पडी भारे दुःखी थाय छे, थता देखाय छे, एटलुंज नहि परंतु पोतानी अनार्य टेवथी अन्य जनोने पण दुःखी करे छे.

मूर्ख मावापो दीर्घदृष्टिनी खामीथी या स्वार्थ अंधताथी बाळलग्न, कजोडां, कन्याविक्रय अने विधर्मीनी साथे पोतानां पुत्र पुत्रीने परणाववाथी तेमने जन्मांत दुःख दरियामां डूबाववाना पातकी थाय छे. उक्त दुःखनो अंत बहुधा मावापनी समज सुधरवाथी आववा संभवे छे. कंइ पण आपत्ति आवी पडतां धीरजथी तेनी सामा थइने तेनो क्षय करवाने बदले मुग्ध जनो अधीरां थइने उल्टां वधारे

ज्यां सुधी मननो मेल गयो नथी त्यां सुधी गमे तेटला जळ स्नानथी पण पवित्र थवानो नथी. जेनु मन शुद्ध निर्मळ थयुं छे तेज खरो पवित्र छे.

जे समता [illegible] स्नान करीने [illegible] पापमलने पखाळी नांखे [illegible] अने फरी [illegible] पाम [illegible] पवित्र [illegible].

[illegible] शास्त्रनी पवित्र [illegible] ज्ञाननी शुद्धि [illegible]

[illegible] आत्मा- [illegible] आत्मानी [illegible]

एम दुर्लभ मानव देह, आर्यक्षेत्र, उत्तम कुळजातिमां जन्म, इंद्रिय पटुता, शरीर नीरोगता, सद्गुरु योग, निर्मळ बुद्धि, धर्मश्रवण अने तत्त्व-श्रद्धादि शुभ सामग्री महा भाग्ययोगे पामीने पाने प्रमाद तजी उल्लसित मनथी सिंहनी पेरे शूरवीरपणे अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अने निष्परिग्रहतादिक महाव्रतोनुं स्वरूप यथार्थ समजीने अभ्यास पूर्वक तेमनो स्वीकार करवो अथवा परिणामनी मंदता होते समकित मूळ श्रावकनां बार व्रत पैकी बनी शके तेटलां समजीने तेवां पण व्रत धारण करवां. ए आ उत्तम मानव भव पाम्यानुं फळ छे. सप्त व्यसन, रात्री भोजनादिक अभक्ष्य भक्षण, अने भूमिकंदादिक अनंत जीवात्मक वस्तु, अणगळ जळपान विगेरेनुं तो दरेक शाणा माणसे अवश्य वर्जन करवुंज जोइये. प्रारब्ध योगथी प्राप्त थयेली लक्ष्मीनुं फळ ए छे के तेनो उदार आशयथी परमार्थ दावे पुण्यक्षेत्रमां उपयोगमां करवो. यशकीर्तिनी खातर दान पुण्य नहि करतां केवळ कल्याणार्थे करवामां आवतुं पात्रदान परिणामे अनंतगणुं उत्तम फळ आपी शके छे. अने वचन शक्ति पाम्यानुं उत्तम फळ ए छे के सर्व कोइने प्रीति उपजे एवुं मिष्ट-मधुर अने हितकारीज वचन वदवुं. कदापि पण कोइने अप्रीति के खेद उपजे एवुं कडवुं के अहित वचन कहेवुं नहि. परने प्रिय एवुं प्रसंगने लगतुं हित-मित भाषण करनारज सत्यवादी होवाथी प्रायः सर्व कोइने मान्य थइ शके छे.

आ प्रमाणे टुंकाणमां कहेली हकीकत लक्षमां राखीने, विवेकथी वर्तनार पोताना शुभ चरित्रथी आ मानव भव सफळ करी शके छे. अथवा पूर्वे प्रसंगोपात बतावेली मैत्री मुदिता करुणा अने माध्यस्थ भावनाथी पण मनुष्य देहनी सफळता थइ शके छे. टुंकाणमां यथाशक्ति तन, मन, धनथी स्वपर हित साधी लेवुं एज आ मनुष्य भवनुं कर्तव्य छे. तेमां उपेक्षा करवी ए मूळगी मूडी खोवा जेवुं छे. तेथी जेम बने तेम प्रमाद रहित स्वपरहित साधवा सदा तत्पर रहेवुं सहृदय सज्जनोने उचित छे.

सद्विवेकथी स्व कर्तव्य समजीने जे शुभाशयो शुद्ध अंतःकरणथी तेनुं सेवन करे छे, ते मनुष्य छतां दैवी जीवन गाळे छे; पण जे स्व कर्तव्य समजताज नथी अथवा तो समज्या छतां तेनी उपेक्षाज करे छे; ते तो मनुष्य रूपे पशु जीवनज गाळे छे एम कहेवुं युक्त छे.

जे पारकी निंदा करवामां मुंगो छे, परस्त्रीनुं मुख जोवामां अंध छे अने परद्रव्य हरण करवामां पांगळो छे, तेवो महापुरुषज लोकमां जय पामे छे. जेना घटमां विवेक दीपक प्रगटयो छे तेज लोकमां खरो पंडित छे, तथा जेणे मद्य, विषय, कषाय, निद्रा अने विकथारूप पांचे प्रमादने वश कर्या छे एवो अप्रमादी पुरुषज जगतमां खरो शूरवीर छे.

---

## २१ प्राणान्ते पण व्रत-भंग करीश नहिं.

प्रथम भवभागी गुरु पासे उत्तम पवित्र प्रतिज्ञा या व्रत-नियम लेवा योग्य छे, अने ते लीधा बाद तेने प्राणान्त सुधी पाळवां जरूरनां छे.

जो प्रथम ग्रहण करवामां आवता व्रत-नियमनुं स्वरूप यथार्थ समजी लेवामां आवतुं होय अने तेनो जरूर जेटलो अभ्यास पण करवामां आवतो होय तो घणुं करीने व्रत भंगनो प्रसंग आववा पामे नहिं.

आत्म कल्याणने माटे जे जे मारां व्रत ग्रहण करवां योग्य छे ते बधानुं स्वरूप संक्षेपथी के विस्तारथी प्रथम सद्गुरु समीपे समजी लइ तेमांथी आपणे सुखे पाळी शकीये एवां व्रतज ग्रहण करीने तेमने निरंतर संभारी संभारीने काळजी पूर्वक पाळवा प्रयत्न करवो जोइए.

जे व्रत-पच्चख्खाण उपयोग शून्य या समज्या विनाज लेवामां आवे ते दुःपच्चख्खाण होवाथी निष्फळ छे. तेथी तेवां व्रत लीधां होय या न होय तोपण प्रसंगोपात या उद्दाइने सद्गुरु पासे जइ ते ते व्रत संबंधी जरुर जेटली समज लइने जो सारी रीत सावधान थइने ते पाळवामां आवे तो पोताना प्रयत्नना प्रमाणमां जरुर लाभ प्राप्त थइ शकेज, परंतु केवळ गतानुगतिकपणे संमूर्छिमनी पेरेज

वर्तवामां आवे तो गमे तेटलुं कष्ट सहन कर्यां छतां जोइये एवुं फळ कदापि थइ शकेज नहिं. जे जे व्रतनुं पालन प्रीतिथी रुचिथी करवामां आवे छे तेनुंज फळ सारुं बेसे छे. अविधिथी करवामां आवती धर्म ते क्रियानुं परिणमन सारुं थइ शकतुंज नथी. तेथी चित्तनी प्रसन्नता माटे भय ( चित्तनी चंचळता ) द्वेष ( अरुचि ) अने खेद ( क्रिया करतां थाकी जवुं ते ) दोषने दूर करवाने प्रथम प्रयत्न करवो जोइये. वस्तुनुं स्वरुप यथार्थ समजावाथी अने तेमां पोतानुं मन चोंटवाथी उक्त दोषो सहजमां दूर थइ शके छे. पछी खरी लहेजतथी पाळवामां आवता व्रतोथी आत्माने यथार्थ लाभ थाय छे. आ लोकना के परलोकना सुखने माटे करवामां आवती क्रियाने विष या गरल समान कही छे. क्रियानां फळ हेतु समज्या विना केवळ देखादेखीथी करवामां आवती क्रियाने ज्ञानी पुरुषो अननुष्ठान कहे छे. ते ते क्रिया संबंधी फळ हेतु, विगेरेने समजी केवळ कल्याणने माटेज करवामां आवती धर्मक्रियाने तद्धेतु कहे छे, तेमज ज्यारे दृढ अभ्यासथी उक्त क्रिया मन वचन अने कायानी एकाग्रताथी असंगपणे थाय छे त्यारे तेमां अमृतनी जेवो स्वाद आववाथी ज्ञानी पुरुषो तेने अमृत क्रिया कहे छे; तद्धेतु, अने अमृत क्रियाज आत्माने मोक्षदायी छे, बाकीनी त्रण तो भव भ्रमणकारीज कहेली छे. प्रस्तुत अधिकार अति उपयोगी होवाथी प्रसंगोपात कहेवामां आव्यो छे.

इम जीव दया, सत्य, व्रत [illegible] विगेरे विचारी सम-जीने प्रमाणमां समज पडे प्रमाणे ग्रहण करीने ते तेमनुं अखंड पालन करे छे तेमनुं जीवित सार्थक छे. परंतु जे कोइ पण पूर्वापर विचार कर्या विना विवेक शून्यपणे व्रत ग्रहीने विराधे छे तेमनुं जीवित केवळ निष्फळ छे. व्रत [illegible] [illegible] जेम जीवनने गाळनार जेवो कोइ [illegible] नथी. व्रत खंडीने जीववा करतां व्रतने अखंड राखीने मरनार माणस वधु उत्तम छे. केमके अनेक भव भ्रमण करतां पवित्र व्रत पालननी रुचि थवीज मुश्केल छे तो तेने प्राणान्त सुधी अखंड पालन करवानी प्रबळ कामनानुं तो कहेवुंज शुं ?

ग्रहण करेलां पवित्र व्रतोने अखंड पालन करीने परलोक गमन करनार माणसो पोतानी पाछळ अखंड कीर्ति अने अमूल्य दृष्टांत मूकता जाय छे, जेने अनुसरीने अनेक आत्महितेच्छक जनो सन्मार्गनुं सारी रीते सेवन करे छे, भरतेश्वर, बाहुबली प्रमुख अनेक सताओना अने ब्राह्मी, सुंदरी प्रमुख अनेक सतीओना एवा उत्तमोत्तम दाखला जगतमां प्रसिद्धज छे.

चहाय तो स्त्री होय या तो पुरुष होय पण पुरुषार्थ परायणतायीज सद्व्रतोनी समज मेळवीने ते तेमनुं विधिवत् पालन करी शके छे, अने एम विधिवत् व्रतनुं अखंड पालन करीने स्वजीवन

सफळ करे छे. एवी सद्बुद्धि सर्व कोइने जागृत थाओ ! अने व्रत-भंग करवा के कराववा संबंधी कुबुद्धिनो सर्वथा अंत आवो एम इष्ट छे.

---

## २६ मरण वखते समाधि साचववा खूब लक्ष राखजे.

जीवने जीवित पर्यंत जेवा शुभाशुभ अभ्यासनी आदत होय छे तेवीज तेनी शुभाशुभ असर तेना मरण समये समाधिना संबंधमां थाय छे एम समजीने शाणा भाइ बहेनोए जीवित पर्यंत शुभ अभ्यासनीज आदत पाडवी उचित छे. सारां कारण सेववाथी कार्य पण सारुंज थाय छे. एवा निश्चय अने श्रद्धापूर्वक मरण वखते समाधि इच्छनार जनोए जीवित पर्यंत शुद्ध भावनाथी शुभ करणी करवा परायण रहेवुं जरूरनुं छे. सतत लक्षपूर्वक खंतथी सत् करणी करनार सत्पुरुषो अध्यवसायनी विशुद्धिथी अंते समाधिपूर्वक मरण करी सद्गतिना भागी थाय छे.

जो तुं जन्म मरणना दुःखथी त्रास पाम्यो होय तो श्री वीतराग वचनानुसार निर्दोष धर्मनुं आराधन करीने जेम समाधि मरणनी प्राप्ति थाय तेम खास लक्ष राख. समाधि मरणथी जीवित पर्यंत करेला धर्मनी सार्थकता थाय छे. गमे तेटला ऊंडा कूवामांथी जळ काढवाने माटे आखी दोरी साथे जोडेलो घडो कूवामां मोकल्यो

हेलों प्यार शरणां, दुष्कृतनिंदना, सुकृत अनुमोदना सर्व जीव साथे खामणा, संलेखना, पंचाचारनी विशुद्धि तथा नवकार महामंत्रादिकनुं लक्ष पूर्वक स्मरणादिक दस अधिकारो बहु सारी रीते समजवा, आदरवा. अने आराधना अथवा पुन्य प्रकाशना स्तवनथी पण उक्त अधिकार सारी रीते समजी शकाय तेम होवाथी अंत समाधिने इच्छवावाळा भाइ ब्हेनोए तेनुं निरंतर श्रवण मनन करीने तेमां रहेला परमार्थनुं परिशीलन करवुं युक्त छे.

गमे तेवा संयोगोमां पोतानुं खरुं निशान नहि चूकनार दृढ अभ्यासी अंते समाधि मरणने पामी अक्षय सुखनो अधिकारी थइ शके छे.



## ३७ आ भव परभव संबंधी भोगाशंसा करीश नहि.

आ लोक अथवा परलोकना सुखनी इच्छाथी करवामां आवती धर्म करणी अल्प फळदायी थाय छे, पण जो तेज करणी केवळ पारमार्थिक मोक्ष सुखने माटेज सहेतुक समजीने विवेकथी करवामां आवी होय तो तेथी मुख्यपणे मोक्षनो अने गौणपणे सामान्यतः स्वर्गादिक सुखनो सहेजे लाभ मळे छेज. मनना परिणाम मुजब सामान्य विसेष फळनी प्राप्ति थाय छे. माटे जेम बने तेम नबळा परिणामने मनमां अवकाश आपवो नहि. कदाच तेवो परिणाम थयो

मेदृकी पेदा थइ शकती नथी तेम विवेक पूर्वक भोगालंसा तजीने निष्कामपणे जो सद्हेतु अने अमृत क्रियाने सेववामां आवे छे तो तेथी अंते भवनो अंत करीने परम समाधिमय मोक्ष सुखनी प्राप्ति थाय छे.

---

## ३८ स्व कर्तव्य समजीने स्वपर हित साधवा तत्पर रहे.

जे शुभाशय प्रथम स्वहित यथार्थ समजीने आदरे छे, तेमांज अहोनिश सावधान रहे छे, तेज महाशय कालांतरे परहित साधवाने समर्थ थइ शके छे. पण जो पहेलां पोतानुं खरुं हितज शुं छे ते पूरुं जाणतो के आदरतो नथी तो ते परहित शी रीते साधी शकशे? पोते निर्धन छतां अन्यने शी रीते धनाढ्य करी शकशे? पोतेज दरिआमां डूबतां छतां अन्यने शुं तारी शकशे? माटे स्व हितने यथार्थ समजीने साधनारज परहितने पण परमार्थथी जाणी समजीने साधी शकवानो ए वात निःसंशय सिद्ध छे.

ज्ञानी-विवेकीजनो स्वहितनी पेरे परहितने पण स्व कर्तव्यज समजे छे, अने तेथीज तेओ निरभिमानपणे स्वहित समजीनेज परहित करे छे.

तत्त्वदृष्टि महापुरुषो कदापि पण 'हुं अमुकनुं हित करुं' 'मारा विना अमुकनु हित थइ शकशे नहिं' एवुं कर्तृत्व-अभिमान

न्यावना नथी. स्वहित अने परहित तेमने मन एक छे, जूदां भासतां नथी, तेथी तेवा मिथ्याभिमानने मनमां आववा अवकाश पण मळतो नथी. खरूं कारण तो ए छे के तेमने तेमनुं खरूं हित यथार्थ समजायुं अने अनुभवायुं छे. तेथी स्वहितने सहायभूत सर्व सात्विक विचार या भावनाओज तेमना मनमां स्थान मेळवे छे पण तेमां विरुद्ध बाधक एवा कोइपण क्षुद्र विचार के भावनाने स्थान मळी शकतुं नथी अने [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

दोषने नीरखी सुधारवानी सारी टेव पडवाथी आत्मामां गंभीरता नामे सद्गुण प्रगट थाय छे.

२. रुप निधि—पांचे इंद्रियो परवडी अने देह नीरोगी होवाथी शरीर सौष्ठव गुण लाभे छे. विषय लोलुपता तजीने मन अने इंद्रियोने नियममां राखवाथी अने आरोग्यताना नियमोने पण लक्ष. पूर्वक पाळवाथी उक्त गुण प्राप्त थइ शके छे. 'शरीर माद्यं खलु धर्म साधनं'—शरीर ए धर्म साधनोमांनुं एक अति अगत्यनुं साधन होवाथी तेनी योग्य संभाळ लेवानी सर्व कोइनी प्रथम फरज छे.

३. सौम्यता—जेम चंद्रने देखी सर्व कोइने शीतळता वळे एवी प्रकृतिनी सहज शीतळता सात्विक विचार, सात्विक भाषण, सात्विक कार्योवडे सहज सिद्ध थाय छे. सहज शीतळ स्वभाववाळा माणसो सर्व कोइने अभिगम्य थाय छे. तेवी ठंडी प्रकृति प्रायः सर्व कोइने प्रिय होवाथी ते सर्वना विश्वासपात्र थइ पडे छे.

४. जनप्रिय—लोक प्रिय गुण सर्व कोइने वल्लभ थवाय एवां सत्कार्य—सुकृत करवाथी अने आलोक परलोक विरुद्ध दुष्कृत तजवाथी प्राप्त थइ शके छे. आ गुणथी माणस धारे एवां मोटां कार्य करी शके छे.

५. अक्रूर—तामसी प्रकृति तजीने क्षमा, नम्रता तथा अनुकंपादिक गुणनो अभ्यास करवाथी क्रूरता—कठोरता दोष दूर थाय

छे. अने हृदयमां, वचनमां, अने कृतिमां सहज कोमळता प्रगट थाय छे.

६. भीरु–धर्मी माणसोनी संगतिथी अथवा धर्म शास्त्रनुं श्रवण मनन करवाथी या तो पूर्वना शुभ संस्कारथी जीवने स्वाभाविक रीते पापनो या परभवनो डर लागे छे. कंइ पण अनीति के अन्याय करतां मन झट दइने संकोचाय छे, अने पापथी तरत विरमे छे. उक्त गुणथी पोताना पूज्य वडील जनोनुं मन पण न दुभाय एवी काळजी राखाय छे.

७. अशठ–शठता ( छळ प्रपंचादिक कपट वृत्ति ) तजवाथी ए गुण प्राप्त थाय छे, सरल स्वभाव धारवाथी स्वव्यवहार पण सरल करी शकाय छे. कपटी माणसोने तो कपट करीने पोतानो दोष गोपववाने माटे बहु वक्र व्यवहार चलाववो पडे छे. सरल स्वभाविने तेम करवानी कंइ जरूर रहेती नथी. केमके सरल स्वभाविनां वचन उपर सर्व कोइने विश्वास आवे छे. कल्याण पण एवा सरल स्वभाविनुंज थाय छे, कपटीनुं थतुं नथी.

८. दाक्षिण्यतावंत–स्व इच्छा होय या न होय पण केटलाक सामान्य विचारीने वडीलनी अथवा समुदायनी तीव्र इच्छाने मान आपीने कंइ कार्य करवाथी पदवि लोक मान्य होवाथी तेथी कदापि सारो लाभ पण मळे छे. परंतु उक्त दाक्षिण्यता केटलाक मर्यादामां

होवी जोइये. विवेक विनानी दाक्षिण्यताथी विपरीत परिणाम पण आवे छे ए वात भूलवी जोइती नथी, विवेकपूर्वक स्वपर हित साधी शकाय छे.

९. लज्जालु-उत्तम कुलनी अथवा धर्मनी मर्यादा पाळनार माणसोना परिचयथी या पूर्वना शुभ संस्कारथी लज्जानो गुण छापी शके छे. ए गुणथी कंइपण खोटुं काम करतां जीव डरे छे अने शुभ काममां पराणे प्रवृत्ति करवा दोराय छे. एवी लज्जानी दरेकने आवश्यकता छे.

१०. दयालु-क्षमा, सहनशीलता अने दुःखी लोकोनी दाझ दीलमां धरवाथी अथवा नीच निर्दयजनोनो सहवास तजीने उदार आशयोनी संगति करी तेमना जेवा सद्गुणोनो अभ्यास करवाथी सर्व प्रति दयाभाव रहे छे.

११. समदृष्टि-मध्यस्थ-आंधळा राग के द्वेष तजीने निष्पक्षपातपणे सत्यासत्य संबंधी तोल करवानी टेववाळाने ए गुण प्राप्त थइ शके छे.

१२. गुणरागी-गमे तेमां रहेला सद्गुण प्रत्येना साचा प्रेमथीज उक्त गुण प्राप्त थाय छे, गुणरागथी गुणनी अने द्वेषथी दोषनी प्राप्ति थाय छे. निर्गुणना रागथी पण दोषनीज पुष्टि थाय छे केमके केवळ रागांध दोषने पण गुणज मानी ले छे, अने द्वेष



१७. वृद्धानुगत-शिष्ट सदाचारी सत्पुरुषोना पगले चालनार पोते पण अनुक्रमे सद् चारित्रना परिशीलनथी सारी पंक्तिमां आवी शके छे.

१८. विनयवंत-मद, अहंकारादिक दोषने त्यजीने संत पुरुषोनी सेवाथी या साधुजनोनी हित शिखामणने हृदयमां धरवाथी विनय-नम्रता आवे छे.

१९. कृतज्ञ-करेला गुणना जाण माणसो पोताना उपकारी माता, पिता, स्वामीके गुर्वादिकना बनी शके तेटला गुणानुवाद करवा चूकता नथी. कृतज्ञ माणस उपकारीना हितने माटे बने तेटलो स्वार्थनो भोग आपे छे.

२०. परहितकारी-सहुने स्वहित व्हालुं छे एम समजीने स्वहितनी पेरे परहित करवामां पण जेने प्रीति छे ते मनथी, वचनथी के कायाथी कोइनुं अहित थाय एवां कार्यथी दूर रहेवानोज अने हित थाय एवांज शुभ कार्यमां जोडावानो प्रयत्न करे छे.

२१. लब्धलक्ष-सर्व बाबतमां जेनी दृष्टि आरपार पहोंची शके छे एवो चकोर पुरुष मुखेथी स्वहित समजीने तेने विवेकथी साधी शके छे. उक्त २१ गुणथी भूषित भव्य स्वहित साधवाने संपूर्ण अधिकारी छे. स्वहित साधवाना अनेक मार्ग पूर्वे प्रसंगे प्रसंगे बताव्या छे. एम जेणे यत्नथी स्वहित-स्व कर्तव्य साध्युं छे तेने परहित पण

सांगोपांग आगमने अर्थ रहस्य युक्त भणता छता, अन्य शिष्योने पढाववामां कुशळ अने प्रमाद रहित मूळ-उत्तर गुणने पाळवामां तत्पर छता, शिष्य समूहने धर्मशिक्षा देवामां चतुर एवा भविष्यमां आचार्यपद पामवाने योग्य धर्मगुरु उपाध्यायना नामथी ओळखाय छे.

बाह्यांतर परिग्रहथी मुक्त मुमुक्षु जनो जैन दर्शनमां साधु, श्रमण अने निर्ग्रंथादिना नामथी ओळखाय छे, तेओ अहोनिश प्रमाद रहित धर्मसाधनमां तत्पर छता स्वहित पूर्वक परहित साधे छे. अहिंसा, संयम अने तप लक्षण चारित्र धर्ममां सदा सावधानपणे वर्तता भव्य जीवोने सन्मार्ग बतावे छे.

शुद्ध आत्म धर्मथी अलंकृत होवाथी उक्त पंच परमेष्ठी जगतमां सारभूत छे, जेमां अरिहंत अने सिद्ध शुद्ध देवपदे, आचार्य, उपाध्याय अने सर्व साधुजनो शुद्ध गुरुपदे तेमां सारभूत रहेला दर्शन, ज्ञान, चारित्र अने तप शुद्ध धर्मपदे वर्ते छे. एवो शुद्ध धर्म दरेक आत्म व्यक्तिमां शक्तिरूपे रहेलो छे. अने तेज शक्तिरूपे रहेलो शुद्धधर्म अरिहंतादि पुरुषोनी पेरे सत्य पुरुषार्थ योगे प्रगट था शके छे. परमेष्ठी पुरुषोने ते प्रगट थयेल छे. आपणा सर्वना आत्मामां शक्तिरूपे रहेल ते शुद्ध धर्मने प्रगट करवानी पवित्र बुद्धि-निष्ठाथी जो पूर्वोक्त पंच परमेष्ठि भगवंतनुं तत्त्वपणे भजन, स्मरण, स्तवन, पूजन करवामां आवे तो आपणामां शक्तिरूपे रहेलो शुद्ध दर्शन, ज्ञान, चारित्र

मां रहे छे. ते परहितने स्वहित रूप कर्तव्य समजीने सुखे साधी शके छे पण जे स्वहित रूप कर्तव्यनेज समजता नथी के सेवता नथी ते बापडा निजनुं या परहित शी रीते साधी शके वारु?

## ३० पंच परमेष्ठि महाराजनुं निरंतर स्मरण करवुं

छे. अने धर्मरसायनवडेज ते दूर थइ शके तेम छे. तो पछी जन्म-मरणजन्य अनंत दुःखथी उद्विग्न थयेला मुमुक्षु जनोए तेनुं पान करवा शा माटे ढील करवी जोइये ? वीरप्रभुए गौतम स्वामीने पण पूर्वे कहुं छे के गोयम म कर प्रमाद " ए वचन बहु बहु मनन करवा योग्य छे.

आपणा साचा अर्थमां-स्वार्थमां अनादर करवो, स्वहितथी चुकवुं, स्व कर्तव्यथी भ्रष्ट थवुं, अने नहिं करवा योग्य करवाने तत्पर थवुं, तेनुं नाम ज्ञानी पुरुषो प्रमाद कहे छे. टुंकाणमां सर्वज्ञ प्रभुनी अति हितकारी आज्ञानी उपेक्षा करीने स्वच्छंद वर्तन करवुं तेनुं नामज प्रमाद छे. मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, अने विकथा मळीने प्रमादना मुख्य पांच भेद छे, जे धर्मार्थीजनोए अवश्य परिहरवा योग्य छे. अप्रमादी पुरुषज धर्मनुं यथार्थ सेवन करी शके छे. प्रमादशील जनो जरुर स्व कर्तव्य-कार्यथी चूके छे.

उपशम श्रेणि उपर आरूढ थयेला, चौद पूर्वधर साधुओ पण प्रमाद वशात् स्वस्थानथी चूकी पतित थाय छे तो बीजानुं ते शुं गजुं ? एम समजी जेम बने तेम प्रमाद स्थानने वर्जी अप्रमत्त थवुं जोइये. थोडा पण व्रण, ऋण, के अग्निनी पेरे प्रमादने पण वधतां वार लागती नथी तेथी ते ज्यां सुधी निरवशेष नष्ट न थाय त्यां सुधी तेनो विश्वास करवो भवभीरु जनोने उचित नथीज.

शुद्ध भावना एज:स्वरं रसायण छे. केमके तेना विना गमे—

तप लक्षण धर्म अवश्य प्रगटभावने पामे ए वात निःसंशय छे. माटे आपणे शुद्ध देव गुरु अने धर्म संबंधी सद्गुरु समीपे सारी समज मेळवी, तेनुं मनन करी, तेवा पवित्र लक्षथीज जगतमां सारभूत एवा पंच परमेष्ठी महामंत्रनुं अहोनिश स्मरण करवुं युक्त छे एम पवित्र लक्ष पूर्वक परमेष्ठि महामंत्रनुं अहोनिश स्मरण करतां आपणे पण अंते कीट भ्रमरीना न्यायथी परमेष्ठीरूप थइने अविनाशीपदना अवश्य अधिकारी थइ शकीए.

## ४० धर्म रसायणनुं सेवन करो

इदं शरीरं परिणाम दुर्बलं, पतत्यवश्यं श्लथ सन्धि जर्जरं।
किमौषधैः क्लिश्यसि मूढ दुर्मते, निरामयं धर्म रसायनं पिब ॥ १ ॥

सर्व प्रकारे पाळ्या पोष्या छतां परिणामे दुर्बल थतुं आ शरीर, जेना सांधा नरम पडवाथी जर्जर थतुं जतुं अने अवश्य (एक दिन) पडवानुंज छे, तो हे मूढ दुर्मति ! तुं शा माटे अनेक जातनां औषध सेवन करीने देहनुं दमन करे छे ? केवळ नीरोगी अने निरुपम एवा धर्म रसायण नुंज तुं अहोनिश पान कर. धर्म रसायणविना कदापि पण जन्म, जरा अने मृत्युनां भाव-रोगोनुं निकंदन थइ शकनेज नहि. जन्म जरा अने मृत्यु एज प्राणीयोना म्होटामां रोग

तेवी धर्म करणी पण फळीभूत थती नथी अने शुद्ध भावना-मात्रथी सर्व करणी सफळ थाय छे. माटे उक्त भावनानो अवश्य अभ्यास करवो जोइये. '**भावना भव नाशिनी**'—भावना जन्म-मरणनां दुःख मात्रनो अंत करे छे अने अक्षय अनंत सुख मेळवी आपे छे.

मैत्री, मुदिता, करुणा अने मध्यस्थता रुप भावना चतुष्टय परम हितकारी छे. तेमज अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्वादिक द्वादश भावना पण भव भयने हरनारी छे.

शुद्ध भावना रहित क्रिया काचना कटका जेवी होवाथी त्याज्य छे. पण क्रिया रहित शुद्ध भावना तो अमूल्य रत्न जेवी होवाथी सेव्य छे. शुद्ध भावना रहित अंध क्रियाथी अहंकारादिक दोषो प्रभवे छे त्यारे केवळ शुद्ध भावनाथी तो शुद्ध गुणानु रागादिक सद्गुणो प्रगटे छे. शुद्ध भावनावंत कदापि वीतराग देशित सन्मार्गनो अनादर करेज नहिं, एटलुंज नहि पण यथाशक्ति ज्ञान–क्रिया रुप मोक्ष मार्गनो आदर करे छे अने एज खरुं रसायण छे.

शुद्ध भावना युक्त धर्म क्रिया दूधमां साकर जेवी, उज्वल, शंखमां दूध जेवी अने सुवर्णमां जडेला साचा रत्न जेवी मनोहर थइ पडे छे, अने आत्म कल्याण पण एवी सत्क्रियाथीज साधी शकाय छे तेथी मोक्षार्थी सज्जनोए एवी सत्क्रियानोज खप करवो उचित छे, जेथी शीघ्र स्वमोक्ष थइ शके.

## २१ वैराग्य भावथी लक्ष्मी विगेरे क्षणिक पदार्थोनो मोह तजी दे.

अनित्य अने असार क्षण विनाशी पदार्थोमां मोह बांधीने मुग्ध-अज्ञानी जीवो महा दुःखी थाय छे. ममतावडे थयेला मति भ्रमथी मूर्ख जनो अनित्य वस्तुने नित्य, असार-अशुचि वस्तुने सार-शुचि अने पराइ वस्तुने पोतानी मानी तेमां मुंझाइ मरे छे. जो जीवने वस्तु स्वभावनुंज यथार्थ भान थाय तो खोटी वस्तुमां नाहक मुंझाइ मरवानो वखत आवेज नहिं, माटे प्रथम मध्यस्थपणे वस्तु स्वरुप जाणीने विवेकथी बाधकभूत भावोनो त्याग करीने कल्याणकारी मार्गनुंज ग्रहण करवुं जोइये.

पदो जल तरंग विलोला, यौवनं त्रि चतुराणि दिनानि॥
ारदाभ्रमिव चंचलमायुः, किं धनैः कुरुत धर्म मनिन्द्यम्.

लक्ष्मी जळ तरंगनी जेवी चंचळ छे, यौवन बच शीघ्र चाल्युं जाय , अने आयुष्य शरद ऋतुना वादळनी जेम अत्यंत अल्पकाळ टके ुं छे तो अस्थिर धनने माटे आटली दोडधाम करवानी शी जरुर छे? आटला अल्प समयमां बनी शके तेटली त्वराथी अहिंसादिक शुद्ध निर्दोष र्मनुंज सेवन करवुं ग्याम जरुरनुं छे. केमके सर्व इच्छित वस्तु

धर्मबीज प्राप्त थइ शके छे. शुद्ध धर्मसेवन विना भविष्यमां कंइपण सुखनी आशा राखवी व्यर्थज छे. अने धर्म सेवनथी सर्व प्रकारनुं सुख स्वतः प्राप्त थाय छे.

ज्यां सुधी जीव संसारना मोहमय संबंधमांज रच्यो पच्यो रहे छे त्यांसुधी ते मोह मायाना जोरथी संसारना स्वरुपने यथार्थ समज्या विना, स्वहित साधवाने कंइपण शक्तिवान् थइ शकतो नथी. ज्यारे जीवने संसार संबंधी दुःखनो खरो ख्याल आवे छे त्यारेज तेथी छूटवाने कंइक साधननी शोध करे छे, अने भाग्ययोगे सत्संग वडे धर्मनुं स्वरुप समजवाने तेमज समजीने तेने सेववाने ते समर्थ थइ शके छे, संसारनुं स्वरुप विचारीने तेनो खरो ख्याल लाववाने माटे ज्ञानी पुरुषोए अनित्य, अशरणादिक बार भावनाओ शास्त्रमां कही छे तेनु यथार्थ मनन करतां भरत, मरुदेवी, नमि राजर्षि, प्रमुख अनेक भव्य जीवो मुक्तिपदने पाम्या छे. माटे उक्त भावनाओनुं स्वरुप लेश मात्र बतावबुं अत्र दुरस्त धार्यु छे.

१. अनित्य–देह, लक्ष्मी अने कुटुंब विगेरे सर्व संयोगिक वस्तुओनो वियोग थया विना रहेवानो नथी. सर्व अंतक काळ सर्वत्र परिभ्रमण करी रह्यो छे. काळने काळनो भय छे एम समजीने शीघ्र स्वहित साधवुं.

२. अशरण–स्वजन देह के लक्ष्मी पैकी कोइपण परभव जतां

-द्वेष करीने नाहक दुःख पेदा करे छे,-तत्त्वथी जोतां आपणुं सुधारनार के बगाडनार आपणेज छीये.

५. अन्यत्व-देह, लक्ष्मी के कुटुंबने आत्मानी साथे अत्यंत संबंध नथी, फक्त अल्प काळने माटे संयोग संबंध थयेलो छे के जेनो अवश्य वियोग थवानो छे. अरे नित्य मित्र समान देह पण अंते आपणुं थतुं नथी तो अन्यनुं तो कहेवुंज शुं? वळी देह लक्ष्मी विगेरेनो अने आत्मानो स्वभाव भिन्न भिन्न छे. देह, लक्ष्मी विगेरे जड वस्तुओ छे, त्यारे आत्मा चैतन्य युक्त छे. देह विगेरे वस्तुओ क्षण विनाशी छे अने आत्मा तो अचळ अविनाशी छे एम समजी देहादिक संबंधी मिथ्या मोह तजीने निर्मळ ज्ञान, दर्शन, अने चारित्रादिक आत्मानी सहज संपत्ति संप्राप्त करवा प्रयत्न करवो जोइये.

६. अशुचि–आ शरीर मळ मूत्रादिक महा अशुचिथी भरेलुं छे पुरुषने नवद्वार अने स्त्रीने द्वादश द्वारे अशुचि वहेती रहे छे. तेमज सडन पडन अने विध्वंसन जेनो धर्म छे एवा आ जड देहमां कोण विवेकशील मुंझाय? आवा असार अस्थिर अने अशुचिमय देहनी खातर कोण सम्यग्दृष्टि पुरुष पापनो पोटलो शिरपर उठावे? आवा अशुचिमय देहमां गिरेली हंस तो राचेज नहि, केवळ निर्विवेकी–मूढ जेवाज राची रहे. अने तेनी खातर अनेक पाप करीने पण भूलो थाय.

द्वेष करीने नाहक दुःख पेदा करे छे. तत्त्वथी जोतां आपणुं सुधार-नार के बगाडनार आपणोज छीये

[illegible] अनन्त देह, लक्ष्मी के कुटुंब आत्मानी साथे अत्यंत संबंध नथी. फक्त अल्प काळने माटे संयोग संबंध थयेलो छे के जे-नो अवश्य वियोग थवानो छे. पर निन्य मित्र समान देह पण अंते आपणुं थतुं नथी तो अत्यंत [illegible] वगेरे तो लक्ष्मी विगे-रेनो अने आत्मानो [illegible] भिन्न छे. देह लक्ष्मी विगेरे जड वस्तुओ [illegible] चेतन्य युक्त छे देह विगेरे वस्तुओ क्षण विनाशी छे [illegible] आत्मा [illegible] अविनाशी छे एम समजी देहा-दिक संबंधी मिथ्या मोह तजीने निर्मळ ज्ञान, दर्शन अने चारित्रा-दिक आत्मानी सहज संपत्ति संभाळ करवा प्रयत्न करवो जोइये.

[illegible] संसारिक [illegible] थया मरेलुं छे पत्थरने [illegible] छे. तेमज सडन पडन [illegible] जन्म तेमां कोण [illegible] आत्मा [illegible] अशुचिमय देहनी [illegible] कोण [illegible] उडावे? [illegible] केवळ निर्वि-वेक [illegible] अनर्थ पाप करीने पण [illegible]

पांच अनुत्तर विमान तथा सिद्धसीला रहेली छे; अधो लोकमां व्यंतर, वाणव्यंतर, १० भुवनपति, तेमज सात नर्क पृथ्वीओ रहेली छे, अने तीर्च्छां लोकमां असंख्याता द्वीप तथा असंख्याता समुद्र जंबुद्वीपनी फरतां वलयाकारे आवी रहेला छे. आ भावनाथी समकितनी दृढता थाय छे.

११ बोधि दुर्लभ–ईंद्र के चक्रवर्ती जेवी संपत्ति करतां पण जीवने आ संसार चक्रमां भमतां समकित रत्ननी प्राप्ति थवी परम दुर्लभ छे. शुद्ध देवगुरु अने धर्मनुं स्वरूप यथार्थ जाणवाथी अने जाणीने तेनें सम्यग् आदरवाथीज सम्यक्त्व गुणनी प्राप्ति थइ शके छे, समकितवंतनीज सर्व करणी लेखे पडे छे–मोक्ष महाफळने आपे छे, एम समजीने मोक्षार्थी सज्जनोए प्रथम समकितनीज भावना दृढ करवानी जरुर छे. शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा, अने आस्तिकता ए पांच समकितनां श्रेष्ट लक्षण छे. समकितवंतनुं ज्ञान यथार्थ होय छे. तेथी ते हिताहित, लाभालाभ, अने भक्ष्याभक्ष्यादिने यथार्थ समजे छे.

१२ अरिहंत भाषित धर्म–राग, द्वेष अने मोहादिक सर्व दोष रहित सर्वज्ञ प्रभुनी सातिशय वाणीथी अनेक जीवोना हृदयना संशयोनो उच्छेद थइ जाय छे अने तेथीं अनेक भव्यो स्वपरहित साधवाने सन्मुख थाय छे. एवां हितकारी प्र-

९ निर्जरा–जेथी पूर्व संचित कर्मनो क्षय करी शकाय एटले के आत्माने कर्मथी जुदो पाडी मुक्त करी शकाय तेनुं नाम निर्जरा छे. तेवी निर्जरा समता युक्त तप करवाथी थाय छे. उक्त तपना छ बाह्य अने छ अभ्यंतर मळीने १२ बार भेद छे. विवेकथी करवामां आवतो बाह्य तप अभ्यंतर तपनी पुष्टि करी आत्माने अत्यंत निर्मळ करे छे. तेथी दरेक आत्मार्थी जनोए ते अवश्य आदरवा योग्य छे. अनशन–उपवासादि, ऊनोदरी–अल्प भोजन, वृत्ति संक्षेप–नियमित भोगोपभोग, रस त्याग–अमुक रसनी लोलुपतानो त्याग, कायक्लेश–केश लोच, आतापनादि, अने संलीनता–आसनजय प्रमुख ए बाह्य तपना ६ छ भेद छे. तेमज प्रायश्चित–पापनी आलोचना, विनय–गुणानुराग, वैयावृत्त्य–सेवा भक्ति, स्वाध्याय, ध्यान, अने काउसग्ग–देहादिक परथी मूर्छानो त्याग ए प्रमाणे अभ्यंतर तपना छ भेद मळी तपना बार भेद कह्या छे. जेम प्रबळ अग्निना तापथी सुवर्णनी शुद्धि थाय छे तेम पूर्वोक्त परम पुरुष प्रणीत तपना सम्यग् आराधनथी आत्मानी विशुद्धि थइ शके छे. एम समजीने उक्त तपनुं सेवन करवा सावधान रहेवुं.

१० लोक स्वभाव—ऊर्ध्व, अधो अने तीर्छा लोकनुं स्वरुप शास्त्रमां जेवुं कयुं छे तेवुं विचारवुं. पहोळा पग करीने अने केडे हाथ दइने उभेला पुरुषनी जेवी आकृति संपूर्ण लोकनी कहेली छे. ऊर्ध्व लोकमां चराचर ज्योतिष् चक्र, बार देवलोक, नव ग्रैवेयक,

## २२ सारभूत एवा सद् विवेकनुंज सेवन कर.

### 'सदसद् विवेचनं विवेकः'

सत्यासत्यनो सम्यग् विचार पूर्वक निर्णय करवो के आतो तत्त्वभूतज छे अने आ अतत्त्वरूप छे. आतो संपूर्णज छे, अने आ अपूर्ण छे. आतो आदरवा योग्यज छे, अने आ तजवा योग्य छे. आतो हितकारीज छे, अने आ अहितकारी छे. आवुं कार्यज उचित छे, अने आवुं अनुचित छे. आमांज लाभ समायेलो छे, आमां नथीज अथवा गेरलाभ छे आतो गुणवानज छे अने आ नथी. अथवा दोषवान् छे, आवी वस्तुओज भक्ष्य छे अने आवी अभक्ष्य छे. आवी वस्तुओज पेय (पीवा योग्य) छे अने आवी अपेय छे. आवा लक्षणवाळा जीवज होय छे, अने आवां लक्षण विनाना अजीवज होय छे. आवुं नामज पुण्य, अने आवुं नाम ते पाप, आवुं नाम ते आश्रव अने आवुं नाम संवर, आवा परिणामथी कर्मनो बंध थाय छे, अने आवा परिणामथी निर्जरा अथवा कर्मक्षय मोक्ष थाय छे. आवी रीते आत्महित संबंधी केटलक बारीकनाथी अवलोकन करतां विवेक दीपक प्रगटे छे. जे अनादि अज्ञान अंधकारनो नाश करी नांखे छे अने घटमां समाधिकारक ज्ञान प्रकाशने विस्तारे छे.

अंतर राग, द्वेष, अने मोहादिक महा विकारोने लक्ष्यमां राखीने

मुनी वाणी भव्य चकोरोने अमृतथी पण मीठी लागे छे तेथी तेनो कदापि अभावो थतोज नथी. पुष्करावर्त मेघनी जेवा प्रभुना हितोपदेशथी भव्य जीवो पोतानुं खरुं हित यथार्थ समजीने सेवी शके छे, अने तेथीज तेओ सर्व पाप क्रियानो अनुक्रमे परीहार करीने निष्पाप एवा मोक्ष मार्गनुं आराधन करवा उजमाळ थाय छे. विश्व-जनोने पवित्र शासनना रागी करवानी अपूर्व भावनाथीज अरिहंतपणुं प्राप्त थइ शके छे, अने तेवुं परमपद प्राप्त करीने ते महानुभाव पूर्व भावनानुसारे त्रिभुवनवर्ती जनोने पवित्र हितोपदेश आपी तेमने साक्षात् शासनना रागी करे छे. तेथी सिद्ध थाय छे के पूर्वोक्त सद्भावना आपणी भविष्यनी उन्नतिनां अवश्य बीजरुप छे. वर्तमान काळमां रसायन शास्त्रीओ पण अनुकूळ भूमिमां वाववा योग्य बीज-वस्तुओनो विविध भावना ( संस्कार ) दइने वावी ते वडे इच्छित फळने मेळवी शके छे तो सर्वज्ञ सर्वदर्शी-सर्वशक्ति संपन्न-पूर्णानंदी परमात्मा प्रणीत पवित्र भावना भावित जनो स्वपुरुषार्थ योगे केम अभीष्ट फळ मेळवी न शके ? अवश्य मेळवी शकेज. फक्त पूर्वोक्त भावना शुद्ध हृदयथीज भाववी जोइये अने एम थाय तोज ते शुद्ध भावनाना बळथी भव्य जीवो आ भयंकर भव दुःखनो सर्वथा अंत करीने अक्षय सुखने सुखे साधी शके.

## ४२ सारभूत एवा सद् विवेकनुंज सेवन कर.

### 'सदसद् विवेचनं विवेकः'

सत्यासत्यनो सम्यग् विचार पूर्वक निर्णय करवो के आतो तत्त्वभूतज छे अने आ अतत्त्वरुप छे. आतो संपूर्णज छे. अने आ अपूर्ण छे. आतो आदरवा योग्यज छे, अने आ तजवा योग्य छे. आतो हितकारीज छे, अने आ अहितकारी छे. आवुं कार्यज उचित छे, अने आवुं अनुचित छे. आमांज लाभ समायलो छे, आमां नथीज अथवा गेरलाभ छे आतो गुणवानज छे अने आ नथी. अथवा दोषवान् छे, आवी वस्तुओज भक्ष्य छे अने आवी अभक्ष्य छे. आवी वस्तुओज पेय (पीवा योग्य) छे अने आवी अपेय छे. आवा लक्षणवाळा जीवज होय छे, अने आवां लक्षण विनाना अजीवज होय छे. आनुं नामज पुण्य, अने आनुं नाम ते पाप, आनुं नाम ते आश्रय अने आनुं नाम संवर, आवा परिणामथी कर्मनो बंध थाय छे, अने आवा परिणामथी निर्जरा अथवा कर्मक्षय मोक्ष थाय छे. आवी रीते आत्महित संबंधी कंइक बारीकतार्थी अवलोकन करतां विवेक दीपक प्रगटे छे. जे अनादि अज्ञान अंधकारनो नाश करी नांखे छे अने घटमां समाधिकारक ज्ञान प्रकाशने विस्तारे छे.

अंतर राग, द्वेष, अने मोहादिक महा विकारोने लक्षमां राखीने

मुनी
फदा
हितो
मेनी
फरी
वि
र्या
मह
अ
पृ
व
सं
रं

अगानने प्रगट

अभ्यास करवो

पदे, पण प्रथम

## २३ धर्मरूपी संबल बने तेटलुं साथे लइ ले.

जीवने भवांतर जतां कोइपण परमार्थथी सहायभूत होय तो ते केवळ धर्मज छे. अने तेनी दरेक कल्याणु-अर्थात् ते अवश्य आराधना योग्यज छे. उक्त धर्म साक्षात् करवाथी, कराववाथी के अनुमोदवाथी आराधी शकाय छे, परंतु शक्ति छतां तेनी उपेक्षा करवाथी अथवा गमे तेवां कल्पित कारणो वडे तेनी मर्यादा उल्लंघवाथी विराधना थाय छे.

जेम दूर गामांतर जतां देहना निर्वाह माटे पथ्यबीज भाताना सगवड करी राखवामां आवे छे तेम भवांतर जतां जीवे जरूर धर्म संबल-पथ्यबीज तैयार करी राखवुं जोइये. धर्म संबल विना जीवने भवांतरमां भारे विपत्ति सहन करवी पडे छे. अने धर्म संबल वडे सुखे समाधिये सर्व संपत्ति साधी शकाय छे.

आ भयंकर भवाटवीमां शुद्धाशय युक्त करेलो धर्म एक उत्तमोत्तम भोमिया तरीके भारे उपयोगी थाय छे. यावत् ते क्षेमकुशळे मोक्ष नगरे पहोंचाडी दे छे.

अहिंसा (स्वच्छंदपणे कोइना प्राण नहिं लेवारूप दया), सत्य (हित मित अने प्रिय भाषण), अस्तेय (अनीतिथी कोइनुं कंइपण हरण नहिं करवा रूप प्रमाणिकता), ब्रह्मचर्य (विषय व्यावृत्तिरूप

सदाचार ), अने असंगता मूर्च्छारहित पणुं, सहज संतोष, (निःस्पृहता ) विगेरे सद्व्रतोनुं सारी रीते सेवन करवाथी सद्गतिनी अवश्य प्राप्ति थाय छे. एम सर्व शास्त्रकारो एके अवाजे कहे छे. आ शिवाय ' अहिंसा परमो धर्मः ' ए मुद्रालेख खास लक्षमां राखीने, मांस, मदिरा, मध, माखण, मूलक-मूळादिक भूमिकंद रिंगण विंगण आदिक कामोद्दीपक अने बहुबीज फळ तथा रात्रिभोजन विगेरे अनेक अभक्ष्य वस्तुओनुं पण शास्त्रकारोए वर्जन करवा भार दइने कह्युं छे. आ प्रमाणे अहिंसादिक महा व्रतोने पुष्टिकारी जे जे नियमावळी शास्त्रकारोए धर्मनी वृद्धि माटे बतावी छे. ते ते लक्षमां लइने दरेक धर्मावलंबी सज्जनोए तेनो यथाशक्ति अमल करवो खास अगत्यनो छे. केमके यथाशक्ति यतनीयं शुभे-स्वपर हितकारी शुभ कार्यमां छती शक्ति नहि गोपवतां यथाशक्ति यत्न करवो ए आपणी फरजज छे.

---

## ४८ मनुष्य भव फरी फरी मळवो मुश्केल छे, एम समजी शीघ्र स्वहित साधीले.

मनुष्य भवनी दुर्लभता एटला माटे स्वीकारवामां आवी छे के ते शिवाय कोई पण बीजी गतिमां सम्यग् ज्ञान-क्रियानुं अथवा सम्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्र रूपी रत्नत्रयीनुं यथार्थ आराधन

करीने कोइ पण जीव कदापि पण ते ज भवमां सर्व घाति-अघाति कर्मनो सर्वथा अंत करीने अक्षय अविनाशी एवुं मोक्ष सुख साधवाने समर्थ थइ शके नहि अने तेथी ज आवो मनुष्य भव देवने पण दुर्लभ कयो छे. अर्थात् सम्यग् दृष्टि देवो पण मोक्ष गतिना द्वार रूप मनुष्य भवनी इच्छा करे छे अने तेवो मानव भव पामीने तेने सार्थक करवा समजमां आव्या बाद बनतो प्रयत्न पण करे छे.

तेवो मानव भव साक्षात् पामीने मोक्षार्थी जनोए मोक्ष साधनमां क्षण मात्र पण प्रमाद करवो योग्य नथी. प्रमादज प्राणीयोनो कट्टामां कट्टो दुश्मन छे, जेथी लोको प्राप्त सामग्रीने पण निष्फळ करी नांखे छे.

प्रमादने परवश पडी जे लोको मानवभवने निष्फळ करे छे तेमने आ संसार चक्रमां परिभ्रमण करतां ते पुनः प्राप्त थवो अति दुर्लभ छे.

आथीज उत्तराध्ययन सूत्रमां आ मानवभव दश दृष्टांते दुर्लभ कयो छे. एटलुंज नहि पण भगवान् श्री वीरप्रभुए पोताना मुख्य शिष्य श्री गौतम गणधरने संबोधीने प्रगट रीते कयुं छे के 'एक क्षणमात्र पण प्रमाद नहि करवो'—आ वचन केटलुं बधुं अर्थ सूचक छे? तेमांथी आपणने केटलो बधो बोध लेवानो छे! छतां जो आपणे गुरुवशीभ थइने प्रमादाचरण तजशुं नहिं तो छेवट आपणने केटलुं बधुं शोषवुं पडशे! तेनो ख्याल पण आवशे ज्यारे दुष्कर्मके-

सदाचार ), अने असंगता मूर्च्छारहित पणुं, सहज संतोष, (नि
स्ता ) विगेरे सद्व्रतोनुं सारी रीते सेवन करवाथी सद्गतिनी
श्य प्राप्ति थाय छे. एम सर्व शास्त्रकारो एके अवाजे कहे छे.
शिवाय ' अहिंसा परमो धर्मः ' ए सुद्रालेख खास लक्षमां
खीने, मांस, मदिरा, मध, माखण, मूलक-मूळादिक भूमिकंद रिं
विंगण आदिक कामोद्दीपक अने बहुबीज फळ तथा रात्रिभो
विगेरे अनेक अभक्ष्य वस्तुओनुं पण शास्त्रकारोए वर्जन करवा
दइने कह्युं छे. आ प्रमाणे अहिंसादिक महा व्रतोने पुष्टिकारी जे
नियमावळी शास्त्रकारोए धर्मनी वृद्धि माटे बतावी छे. ते ते ल
ल्इने दरेक धर्मावलंबी सज्जनोए तेनो यथाशक्ति अमल करवो
अगत्यनो छे. केमके यथाशक्ति यतनीयं शुभे-स्वपर हितक
शुभ कार्यमां छती शक्ति नहि गोपवतां यथाशक्ति यत्न करवो
आपणी फरजज छे.

---

## ४४ मनुष्य भव फरी फरी मळवो मुश्केल छे, ए समजी शीघ्र स्वहित साधीले.

मनुष्य भवनी दुर्लभता एटला माटे स्वीकारवामां आवी छे
के पीना कोई पण बीजी गतिमां सम्यग् ज्ञान-क्रियानुं अथवा
म्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्र रूपी रत्नत्रयीनुं यथार्थ आरा

करीने कोइ पण जीव कदापि पण ते ज भवमां सर्व घाति-अघाति कर्मनो सर्वथा अंत करीने अक्षय अविनाशी एवुं मोक्ष सुख साधवाने समर्थ थइ शके नहि अने तेथी ज आवो मनुष्य भव देवने पण दुर्लभ कह्यो छे. अर्थात् सम्यग् दृष्टि देवो पण मोक्ष गतिना द्वार रूप मनुष्य भवनी इच्छा करे छे अने तेवो मानव भव पामीने तेने सार्थक करवा समजमां आव्या बाद घणो प्रयत्न पण करे छे.

तेवो मानव भव साक्षात् पामीने मोक्षार्थी जनोए मोक्ष साधनमां क्षण मात्र पण प्रमाद करवो योग्य नथी. प्रमादज प्राणीयोनो मोटामां मोटो दुश्मन छे, जेथी लोको प्राप्त सामग्रीने पण निष्फळ करी नांखे छे.

प्रमादने परवश पडी जे लोको मानवभवने निष्फळ करे छे तेमने आ संसार चक्रमां परिभ्रमण करतां ते पुनः प्राप्त थवो अति दुर्लभ छे.

आथीज उत्तराध्ययन सूत्रमां आ मानवभव दश दृष्टांते दुर्लभ कह्यो छे. एटलुंज नहि पण भगवान् श्री वीरप्रभुए पोताना मुख्य शिष्य श्री गौतम गणधरने संबोधीने प्रगट रीते कह्युं छे के 'एक क्षणमात्र पण प्रमाद नहि करवो'—आ वचन केटलुं बधुं अर्थ सूचक छे? तेमांथी आपणने केटलो बधो बोध लेवानो छे! छतां जो आपणे गुरुशीष्य थइने प्रमादाचरण तजशुं नहि तो छेवट आपणने केटलुं बधुं शोचवुं पडशे! तेनो ख्याल पण आववो अत्यारे दुर्गम छे.

सदाचार ), अने असंगता मूर्च्छारहित पणुं, सहज संतोष, (निः
ष्टता ) विगेरे सद्व्रतोनुं सारी रीते सेवन करवाथी सद्गतिनी अ
क्य प्राप्ति थाय छे. एम सर्व शास्त्रकारो एके अवाजे कहे छे.
शिवाय ' अहिंसा परमो धर्मः ' ए मुद्रालेख खास लक्षमां
खीने, मांस, मदिरा, मध, माखण, मूलक-मूळादिक भूमिकंद रिंग
विंगण आदिक कामोदीपक अने बहुबीज फळ तथा रात्रिभोज
विगेरे अनेक अभक्ष्य वस्तुओनुं पण शास्त्रकारोए वर्जन करवा भ
इने कह्युं छे. आ प्रमाणे अहिंसादिक महा व्रतोने पुष्टिकारी जे
नियमावली शास्त्रकारोए धर्मनी वृद्धि माटे बनावी छे. ते ते लक्ष
ईने दरेक धर्मावलंबी सज्जनोए तेनो यथाशक्ति अमल करवो खा
अगत्यनो छे. केमके यथाशक्ति यतनीय शुभे-स्वपर हितका
शुभ कार्यमां छती शक्ति नहि गोपवतां यथाशक्ति यत्न करवो
आपणी फरजज छे.

---

## २४ मनुष्य भव फरी फरी मळवो मुश्केल छे, एम
## समजी शीघ्र स्वहित साधीले.

मनुष्य भवनी दुर्लभता एटला माटे स्वीकारवामां आवी छे के
ते शिवाय कोई पण बीजी गतिमां सम्यग् ज्ञान-क्रियानुं अथवा स
म्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्र रुपी रत्नत्रयीनुं यथार्थ आराधन

करीने कोइ पण जीव कदापि पण ते ज भवमां सर्व घाति-अघाति कर्मनो सर्वथा अंत करीने अक्षय अविनाशी एवुं मोक्ष सुख साधवाने समर्थ थइ शके नहि अने तेथी ज आवो मनुष्य भव देवने पण दुर्लभ कह्यो छे. अर्थात् सम्यग् दृष्टि देवो पण मोक्ष गतिना द्वार रूप मनुष्य भवनी इच्छा करे छे अने तेवो मानव भव पामीने तेने सार्थक करवा समजणां आव्या बाद यतनो प्रयत्न पण करे छे.

तेवो मानव भव साक्षात् पामीने मोक्षार्थी जनोए मोक्ष मार्गमां क्षण मात्र पण प्रमाद करवो योग्य नथी. प्रमादज प्राणीयोनो कट्टामां कट्टो दुश्मन छे, जेथी लोको प्राप्त सामग्रीने पण निष्फळ करी नांखे छे.

प्रमादने परवश पडी जे लोको मानवभवने निष्फळ करे छे तेमने आ संसार चक्रमां परिभ्रमण करतां ते पुनः प्राप्त थवो अति दुर्लभ छे.

आथीज उत्तराध्ययन सूत्रमां आ मानवभव दश दृष्टांते दुर्लभ कह्यो छे. एटलुंज नहि पण भगवान् श्री वीरप्रभुए पोताना मुख्य शिष्य श्री गौतम गणधरने संबोधीने प्रगट रीते कह्युं छे के 'एक क्षणमात्र पण प्रमाद नहि करवो'-आ वचन केटलुं बधुं अर्थ सूचक छे? जेमांथी आपणने केटलो बधो बोध लेवानो छे! छतां जो आपणे सुखशील थइने प्रमादाचरण तजशुं नहि तो छेवट आपणने केटलुं बधुं पोसवुं पडशे! तेनो ख्याल पण आवतो मुश्केल छे.

प्रार्ने [illegible] पुरुषा [illegible] मार जाता का कणुं सुख [illegible] मार्गे पण [illegible] मार्गोयो [illegible] गमन करे छे.

'क्षण लाखेणो जाय' — [illegible] गुमाववानो नथी. माग मुहूर्त [illegible]

धर्महीन मानवनो [illegible] सफळ थाय छे, धर्म[illegible] मार्गे दुःखना मार्गी थाय छे, अने धर्मयुक्त माणस अनेक सुखनो अधिकारी थई शके छे. 'देहे दुःखं महाफलं'—स्वाधीनपणे आत्मा कल्याणने माटे देहनुं दमन करवुं बहु हितकारी छे, अन्यथा पराधीनपणे तो दमावुंज पडशे, अने एम करतां पण अभीष्ट सुखनी प्राप्ति थई शकशे नहिं. स्वाधीनपणे तो देहने दमवाथी यथेष्ट सुख मळी शकशे. 'देहस्य सारं व्रत धारणं च'—यथाशक्ति सद्व्रत धारण करवा[illegible] धीज आ मानवदेहनी सार्थकता शास्त्रकार स्वीकारे छे, [illegible] 'अजागल स्तनस्येव, तस्य जन्म निरर्थकम्'—बकरीना गळामांना आंचळनी पेठे तेनो जन्म मात्र निरर्थकज छे. जेओ केवळ विषयकषायादि प्रमादने वश थई [illegible] गुमावे छे, तेओ सोनाना थाळमां कस्तूरीने [illegible] पान करवाने बदले तेना वडे पादप्र[illegible]

वहावे छे, अने चिन्तामणिरत्नने कागडाने उडाडवा माटे हाथमांथी फेंकी देछे,—भारी मूर्खाइ करे छे. वळी जे स्वच्छंद वर्तनथी क्षणिक सुखने माटे अमूल्य मानवभवने हारे छे ते मध्य दरियामां एक फलफने माटे तारक वहाणने भागी नांखे छे, एक खींटीने माटे आखा महेलने पाडी नाखे छे, अने एक दोराने माटे मोतीनाहारने तोडी नांखे छे. आम आप हहापण करीने अंते पश्चातापनाज भागी थाय छे. आवो पश्चाताप करवानो प्रसंग न आवे माटे स्वहित समज पूर्वक साधवाने सावधान थइ रहेवुं जोइये. शास्त्रकार योग्य फरमावे छे के ज्यां सुधीमां जरा आवी पीडे नहिं, विविध व्याधिओ वृद्धिगत थाय नहिं, अने इंद्रियोनुं बळ घटे नहिं त्यां सुधीमां बने तेटलुं धर्मसाधन करी लेवुं. पछी परवशपणे साधन करवुं भारे मुश्केल थइ पडशे.

---

## ४५ पुरुषार्थ वडेज सर्व कार्य सिद्ध थाय छे माटे पुरुषार्थनेज अंगीकार कर.

पुरुषार्थहीन एवा प्रमादी लोकोना मनना विचार मनमांज रही जाय छे. परंतु पुरुषार्थ युक्त प्रमाद रहित पुरुषोना सात्विक विचार जोइने तेनी भाग्यदेवी पण एवाज विचार करे छे, तेथी ते प्रायः सफळज थाय छे.

पुरुषार्थवंतने दुनियामां कंइपण असाध्य नथी.

पुरुषार्थवंतने मिथ्या आडंबर रचवानी जरूर नथी, तेमज तेने तेवो आडंबर प्रिय पण होतो नथी. तेओ करे छे घणुं अने बोले छे थोडुं. तेओ जे कंइ स्वपर हितकारी कार्य करे छे ते फक्त स्वकर्तव्य समजीनेज करे छे. तेथी तेमने स्वोत्कर्ष के परापकर्ष करवाना वक्र व्यवहारमां उतरवुं पडतुं नथी. अने मार्ग पण एज छे.

पुरुषार्थवंतज सत्य धर्मनुं शोधन या दोहन करीने तेनुं यथार्थ सेवन करी शके छे. पुरुषार्थहीन लोको तो अंध श्रद्धाथी केवळ जुनी रूढीने अनुसरीनेज चालनाराओ होय छे. तेथी तेमां कंइ विशेष लाभ मेळवी शकता नथी. पुरुषार्थ विना कोइपण कार्य परिपूर्ण थइ शकतुं नथी. पूर्वोक्त पांचे प्रकारना प्रमादने तजीने सावधानपणे स्वपरहित साधनारज पुरुषार्थवंत कहेवाय छे अने उक्त प्रमादने पराधीन थइ पडेला लोको पुरुषार्थहीन कहेवाय छे.

पुरुषार्थज माणसनुं खरुं जीवन छे तेथी पुरुषार्थहीन माणस पशु समानज छे. पुरुषार्थहीन मनुष्यभव पामीने उलटुं लेवानुं देवुं करे छे.

पुरुषार्थवंत पोताना पवित्र वर्तनथी आ भू लोकमां पण दैवी जीवन जीवीने अंते अक्षय सुखना अधिकारी थाय छे.

आपणे धारीये तो पूर्वोक्त प्रमादने तजी खरो पुरुषार्थ धारी आपणा प्रमादी बंधुओने पण पुरुषार्थवंत करी शकीये. पण ते स्व–

पुरुषार्थहीन तो तप जपने टीनता कारण करीने कर्तव्य भ्रष्ट थाय छे. पुरुषार्थहीन कर्तव्य कर्मनो अनादर करीने सुखशील थई, अर्थ या कामनोज आदर करे छे. पुरुषार्थवंत तो गमे तेवा संयोगोमां प्रमाद रहित वर्तीनेज प्रमाण पद आपे छे.

पुरुषार्थवंत साधुज अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अने असंगतादिक महाव्रतोने अखंड–अतिचार रहित पाळीने स्व चारित्रने उज्ज्वळ करे छे त्यारे पुरुषार्थहीन साधु तेवा महाव्रत लईने स्वच्छंद वर्तनथी तेमने तोडी विराधी स्वचारित्रने कलंकित करी अंते अधोगतिनाज भागी थाय छे.

पुरुषार्थवंत साधुज विविध प्रकारना अभिग्रहने निःस्पृहताथी अखंड पाळी नाना प्रकारनी तपस्याने सेवा करे छे, पण तेनो कदापि गर्व [illegible] करता नथी [illegible] विपरीतज जोवामां आवशे

पुरुषार्थवंत साधुज [illegible] यथायोग्य [illegible] अतिचारो [illegible] साधन [illegible] वि- [illegible] श्रम- [illegible]

सत्य पुरुषार्थवंत साधुज छिद्र रहित प्रवहणनी पेरे आ संसार समुद्रने सुखे तरी जइ स्व परनो उद्धार करी शके छे. पुरुषार्थहीन तो पथ्थरनी पेरे स्वपरने डूबावेज छे.

कोइपण मोक्षार्थीए पूर्वोक्त पुरुषार्थवंत पुरुषोनोज आश्रय करवो योग्य छे. केमके तेथी एवो पुरुषार्थ पामवो सुलभ थइ पडेछे.

पुरुषार्थवंत पुरुषनी दृष्टि सिंहनी जेवी अने पुरुषार्थहीननी दृष्टि श्वाननी जेवीज होय छे; पहेलानी दृष्टि उंची अने बीजानी केवळ नीची होय छे.

पुरुषार्थवंत गमे तेवी विषम स्थितिमां पण सिंहनी जेम स्व इष्ट कार्य साधे छे पण पुरुषार्थहीन तेम कदापि करी शकतोज नथी. सिंहने कोइए बाण मार्युं होय तो ते तेनुं उत्पत्ति स्थान शोधीने तेनेज मारे छे. परंतु श्वान तो तेने मारवामां आवेला पाषाण विगेरेनेज करडवा (करडवा) जाय छे.

एवी रीते कंइपण दुःख उत्पन्न थतां पुरुषार्थवंत तेनुं खरं कारण तपासीने ते कारणनेज दूर करे छे त्यारे पुरुषार्थहीन—कायर माणस तो तेनो कइपण आगळ पाछळ तपास नहिं करतां ते दुःख उपरज रोष करे छे. अने एम करवाथी कंइ सुख तो मळतुं नथी पण उलटुं दुःखज वृद्धि पामे छे.

पुरुषार्थहीन तो नेक वखते हीनता धारण करीने कर्तव्य भ्रष्ट थाय छे. पुरुषार्थहीन कर्तव्य कर्मनो अनादर करीने सुखशील थइ, अर्थ या काममांज आदर करे छे. पुरुषार्थवंत तो गमे तेवा संयोगोमां प्रमाद रहित थइनेज प्रधान पद पामे छे.

पुरुषार्थवंत साधुजन अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अने असंगतादिक महाव्रतोने अखंड–अतिचार रहित पाळीने स्व चारित्रने उज्वल करे छे [illegible] पुरुषार्थहीन साधु तेवा महाव्रत लइने स्वच्छंद वर्तनथी [illegible] करी अंते अधोगतिमां [illegible]

पुरुषार्थवंत साधुजन [illegible] दाथी [illegible] तो के [illegible]

[illegible]

शकशे ? आ भवमां पण अत्यंत हितकारी धर्मनी कृपाथीज सर्व साहेबी पामीने जो तेज परोपकारी धर्मनो ध्वंस करवामां आवशे तो स्वामीद्रोह करनार ते नीच पापीनुं कल्याण पछी शी रीते थइ शकशे ? खरुं जोतां एवा पापी धर्म द्रोहीनुं भविष्य सुधरवुं खरेखर दुःशक्यज छे.

जे माणसने आवां हृदय वेधक शास्त्र वचनोथी पोतानां करेलां पापोनो पुरेपुरो पश्चाताप थाय छे अने फरी एवां पाप नहिं करवानी पवित्र बुद्धिथी सद्गुरु समीपे प्रायश्चित्त ( करेलां पापोनी शुद्धि ) करवा इच्छा थाय छे, एवा पण योग्य जीव उपर कृपालु धर्म महाराज जरुर कृपा कटाक्ष करे छे. एटले एवा जीवोनो पण उद्धार आवी रीते थइ शके छे.

परंतु पाप करीने सुखी थनारा, अथवा लोक रंजनने माटे फक्त मोंढेथीज-पश्चात्ताप करनारा अथवा कपट रचनाथी स्वदोषने छुपावनारा एवा अयोग्य अने दंभीजनो उपर गुणज्ञ अने गुण पक्षपाती धर्म महाराजानी मेहेरवानी भविष्यकाळमां पण कदापि होइ शकेज नहिं.

एम समजी नीच, नादान, अने निर्लज्ज एवा ना लायकजनोनी संगति तथा तेमना अनर्थकारी आचार विचारने तजी दइने, उदार, दयाळु, अने लज्जाळु एवा गुणापन्नोज संगत अथवा तेमना हितकारी

सर्वज्ञ-सर्वदर्शी भगवान् कहे छे के कोइ कोइनुं बगाडतुं के सुधारतुं नथी. बीजा तो केवळ निमित्त मात्रज छे. पोतेज करेलां कर्मानुसारे प्राणी दुःख सुखने पामे छे. तेमां अन्य उपर अज्ञानपणे आरोप मूकवो मिथ्या छे. एम समजीने खरा पुरुषार्थवंत पुरुषो मात्र दुःखना मूळ कारणभूत कर्मने लक्षमां राखीने तेनेज निर्मूळ करवा प्रयत्न करे छे, अने तेज युक्त छे, छतां कायर अज्ञानी माणसो तेम करी शकता नथी.

पुरुषार्थवंत स्त्री पुरुषज परमार्थभूत एवा मोक्ष मार्गने साधी शके छे अने धर्म एज खरो पुरुषार्थ छे. एम समजी मोक्षार्थी जनोए सर्वज्ञ भाषित धर्मनुं यथाशक्ति आराधन करवा अवश्य उजमाळ रहेवुं युक्त छे.

पूर्व पुन्ययोगे मनुष्य भवादिक शुभ सामग्रीने पामीने अने सद्गुर्वादिकनो विशिष्ट योग पामीने जे स्वहित साधी लेवानी उपेक्षा करे छे तेना पाछळथी केवा हाल थशे, ते संबंधी श्री धनेश्वरसुरी महाराज श्री शत्रुंजय महात्म्यमां आ प्रमाणे कहे छेः—

धर्मेणाधिगतैश्वर्यो, धर्म मेव निहन्ति यः ॥
कथं शुभायति र्भावी: स स्वामिद्रोहपातकी ॥ १॥

धर्मना प्रभावेज सर्व संपदाने पाम्या छतां जे नराधम धर्मनोज लोप करे छे ते स्वामीद्रोही पापी भविष्यमां केवी रीते सुखी थइ

शकशे ? आ भवमां पण अत्यंत हितकारी धर्मनी कृपाथीज सर्व साहेबी पामीने जो तेज परोपकारी धर्मनो ध्वंस करवामां आवशे तो स्वामीद्रोह करनार ते नीच पापीनुं कल्याण शकी शी रीते थइ शकशे ? खरुं जोतां एवा पापी धर्म द्रोहीनुं भविष्य सुधरवुं खरेखर दुःशक्यज छे.

जे माणसने आवां हृदय वेधक खरा वचनोथी पोताना करेला पापोनो पुरेपुरो पश्चात्ताप थाय छे अने फरी एवां पाप नहिं करवानी पवित्र बुद्धिथी सद्गुरु समीपे प्रायश्चित्त ( करेला पापोनी शुद्धि ) करवा इच्छा थाय छे. एवा पण योग्य जीव उपर कृपालु धर्म-महाराज जरूर कृपा करताज होय छे, एटले एवा जीवोनो पण उद्धार आवी रीते थइ शके छे.

परंतु पाप करीने खुशी थनारा, अथवा लोक रंजनने माटे धक धींगधीज.पछाडो करनारा अथवा कपट रचनाथी स्वरूपने छुपावनारा एवा अयोग्य अने दंभीजनो उपर गुणज्ञ अने गुण पक्षपाती धर्म महाराजानी मेहेरबानी भविष्यकाळमां पण कदापि होइ शकेज नहिं.

एम समजी नीच, नादान, अने निर्दय एवा नास्तिकजनोनी संगति तथा तेमना अनर्थकारी आचार विचारने तजी दइने, उदार, दयालु, अने सज्जन एवा गुणानुरागीनी संगत अथवा तेमना हितकारी

आचार विचारने आदरी आपणे परम उपकारी धर्म महाराजनी कृपाथी प्राप्त करेला सर्व शुभ सामग्रीनी सफळता करी शकीये एवो सत् पुरुषार्थ सेववो एज आपणुं मुख्य कर्तव्य छे. सर्व प्रमाद रहित सत् पुरुषार्थ उपरज आपणी, आपणा साधर्मीओनी, तेमज समस्तजनोनी खरी उन्नतिनो आधार छे. ए वात खुब लक्षमां राखीनेज आपणुं व्यवहार तंत्र चलाववुं योग्य छे.

इत्यलम्.

---

## सुमति अने चारित्रराजनो सुखदायक संवाद.

प्रेक्षक भाइयो अने व्हेनो ! आजे हुं तमने एक अतिबोधदायक संवाद संभळाववा इच्छुंछुं तेथी प्रथम तेमां खास उद्देश कराएलां पात्रोनी तमने कंइक विशेष समज आपवी दुरस्त धारुं छुं. असे आशा राखुंछुं के ते सर्व वात लक्षमां राखी तेमाथी एक उत्तम प्रकारनो बोध ग्रहण करशो.

एकान्त हितबुद्धिथीज प्रेराइने तमने आ बोधदायक प्रबंध संभळाववा मारी खास उत्कंठा थइ आवी छे ते कंइक तमारा भाग्यनीज भली निशानी होय एम हुं मानुं छुं. हवे हुं मुद्दानी वात तमने जणावुं छुं. दरेक आत्माने पोताना सारा नरसा चरित्र (आचरण) ना प्रमाणमां मतिनुं तारतम्य होयज छे. छतां सामान्य रीते सारां

चरित्रवाळाने मुख्यताए सुमतिनो अने माठां आचरणवाळाने मुख्यताए कुमतिनोज संग होय एम मनाय छे तेथी तेमनो अरसपरस प्रसंगवशात् संवाद थयाज करे छे, तेनो जीज्ञासु भाइ व्हेनोने कंइक झांखी आपवानी बुद्धिथी स्व क्षयोपशमानुसारे आ उल्लेख थइयो छे. वीतराग प्रभुनां पवित्र वचनानुसारे विवेकयुक्त वर्तन करनार सत्चारित्रपात्र पुरुष जगत्मां एक महाराजाथी पण अधिक पूजायमनाय छे, तेथी तेवा चारित्रवंतने सत् (साचा) चारित्रराज कहेवामां कंइपण बाध आवतो नथी. पण जेओ वीतराग वचनथी विरुद्ध वर्तन चलावीने दंभ वृत्तिथी स्वदोष गोपववा माटे लोकमां पूजायामनावा माटे तथा स्वगौरव वधारवा माटे अहोनिश मथन करी जगत्मां चारित्रवंत कहेवडाववानो दावो राखे छे तेओ तो केवळ नाममात्र महाराजा कहेवाय छे. एवा दंभी चारित्रराजने होळीना राजा इत्यादिनीज उपमा घटी शके छे. आवी हलकी पायरीए पोतानी कुटिलताथी उतरवा करतां सरलताथी सत् चारित्रराजना सेवक थइ रहेवामांज खरी मजा छे. केमके 'सिद्धिः स्याद् ऋजुभूतस्य' एवां आगम वचनथी सर्व दंभ रहित–ऋजु–सरल पुरुषनीज सिद्धि थाय छे. आवी सिद्धांतनी वातने खास लक्षमां राखीने जगत् प्रसिद्ध स्व स्वामी चारित्रराजनी आगळ उपर विडंबना न थाय एवा पवित्र उद्देशथी सुमति, चारित्रराजने संबोधन करे छे.

सुमति—स्वामीनाथ! हुं आपने लज्जाथी कंइ हितकारी वात

पण कही शकती नथी तोपण आजे नम्रपणे कंइक केहवा था
तेथी आप खोटुं नहि लगाडतां सार ग्रही मने उपकृत करशो,
मारा अंतरनी इच्छा पुर्वक करेली प्रार्थना स्वीकारी मने प्रसंगे
बे बोल बोल्वानी रजा आपशो!

चारित्रराज—अहो सुमति! मागथी आटलो अंतर राख
कंइ कारण नथी, तारे केहवुं होयतो सुखेथी कहे, माची अने
कारी वात केहतां कोनो हुकम फर्यो छे के उल्टी रीस चढावशे

सुमति—स्वामीनाथ! हवे मने कंइक हिम्मत आवी छे
मारा मननी वात केहवाने कंइक भाग्यशाळी थइ शकीश.
हितो—तो—

चारित्रराज—तुं आज सुधी कहेवानो केम विलंब करी
हती?

सुमति—स्वामीजी! साचुं कहुं छुं के मारा अंतरमां जेवी
तेवी इच्छा छतां आपने एकान्ते कहेवानी मने जोइए तेवी तक
मळी शकी नथी!

चारित्र०—आज सुधी कहेवानी प्रबळ इच्छा छतां केम त
न मळी शकी? तेनुं कारण हवे संकोच राख्या विना कहे. हुं ता
उपर प्रसन्न छुं.

सुमति—आप मारा स्वामीनाथ मारी उपर सुप्रसन्न थया छो तेथी हुं मारुं अहोभाग्य मानुंछुं. आपनी एवी प्रसन्नता सदा बनी रहे तेम खरा जीगरथी इच्छुं छुं, पण साचुं कारण कहेतां मन संको-चाय छे.

चारित्र०—सुंदरी ! जराए संकोच राख्या विना जे कंई कारण होय ते कहीदे.

सुमति—आज सुधी आप लांबो वखत थयां मारी उपेक्षा क-रीने मारी सपत्नी (शोक्य) कुमतिनेज वश पड्या हता, ए वात शुं आप आटलामां विसरी गया के जेथी म.रे मोढे एनुं कारण कहे-वरावो छो !

चारित्र०—सुमति ! तारा स्थायी समागम विना सर्व कोइ कुमतिने वश थईने खुवार थाय छे ते तो मने सुविदितज छे.

सुमति—हा पण आपे तो चारित्र० नाम धारीने अने दुनिया-मां पण जेवोने तेवो दमाम राखीने मारी विगोवणा करी एनुं केम!

चारित्र०—सुंदरी ! तुं जे कहे छे ते सत्य छे, मारी दांभिक दशाने संभारतांज हवे तो मने शरम आवे छे. पण जो तारो समा-गम थयो न होततो शुं जाणीए मारा शा हाल थात, हवे पाछी तेवी भूल न थाय माटे अने तारो समागम स्थायी बन्यो रहेशे तो हुं मारुं अहो भाग्य मानीश. हवे तारे जे कोइ हितकारी वात कहे-

वी होय
संकोच
सु
तेने तो
च
सरल स
हितकार
मंतव्य व
सु
मेळव्योग
नेरी तत्र
प्रथम ज
चा
ज गुधी
साथी श
मारां नर
अत्यार
तां वंहुग
जाग्यां र



चारित्र०—प्रिये ' तेमने सिद्धांतनि देखानो मारो संपूर्ण विचार छे, पण ते पुनः मने उठी न शके एवा समर्थ उपाय हुं जाणतो होत तो घणो सारुं तेनो अभ्यास करीने हुं पुनः तेओना पाशी पावना घणी पडुं नहि, केमके तेम हुं करुं तो तेम नक्की छे के दुनियानो स्वभाव ठीक छे.

सुमति— ते दुर्गुणोनी सारी ओळखाण करी तेज बाबतनी आपनी विचारणा प्रमाणे मात्र तो दूषणो मारक मळ्या बराबर छे.

चारित्र०—संसार भारु उत्तम नाम भगवाने अने दुनिया आगळ मारो मोटो प्रभाव गणीने खरा चारित्र संबंधी गुण विना रहेल रूप-रंगथी सेविता करता तो मरवुं मने तो हवे बेहतर लागे छे.

सुमति—स्वामीजी ! आप चतुर छो. खरा चारित्रना अर्थी दरेक माणसने एटली चालाक चढ्या विना ते पतित अवस्थाने पामी शकेज नहि.

चारित्र०—पण प्रिये ! जे तुं मने हितकारी वचन कहेवा इच्छे छे ते हवे विलंब कर्या विना कहे, केमके कहुं छे के 'श्रेय कामना...

सुमति—आपनुं कल्याण थाओ! खुद आपनो वांक काढवा करतां मारे तो मारी सपत्नि-कुमतिनोज वांक काढवो व्याजबी छे. केमके जो आज सुधी तेणीये आपने भंभेर्या न होत अने मारायी विमुख कर्या न होत तो तो आपे क्यारनाए मारी सन्मुख जोइ मने आवकार आप्यो होत, पण मारी शोक्य स्वाधीनपणे एम थवा देज केम?

चारित्र०—सुमति? तुं तो तारी कुलीनताने उचितज वदे छे पण वांक मात्र मारोज छे. केमके मारुं मन जो मारे हाथ होय तो कुमाने बापडी शुं करी शके? हुं पोतेज प्रमादशील होवाथी कुमति-ने वश पडी रह्यो हतो.

सुमति—साहेब सदोदित सावधान रहो! हवे आपे आपनी गति जाणी छे तेथी फरी हुं इच्छुं छुं के आप कुमतिना पंजामां आवशो नहि.

चारित्र०—हवे तो में तेणीने देशवटो देवानोज निश्चय कर्यो छे.

सुमति—कुमतिनी गति एवी विचित्र छे के ते क्यांथी कइ रीते अंतरमां पेशी जीवती डाकणनी जेम जीवतुं जोखम करे छे. मोटा योगी जनोने पण लाग जोइने छळे छे अने असंस्कारी आत्माने तो क्षणवारमां उथलावीने उंधो वाळे छे आवी तेनी कुटीलता जग जाहेर छे, माटे क्षणवार पण तेनो विश्वास करवो उचित नथीज..

चारित्र०—प्रिये ! तेणीने तिलांजलि देवानो मारो संपूर्ण विचार छे, पण ते पुनः मने छळी न शके एवा समर्थ उपाय तुं जाणती होय ते मने कहे के जेनो अभ्यास करीने हुं पुनः तेणीना पापी पाशमां आवी शकुं नहि, केमके जेम तुं कहे छे तेम मतीत छे के कुमतिनो स्वभाव कुटील छे.

सुमति—जे कहेवानी मारी इच्छा हती तेज वातनी आप-श्री जिज्ञासा थयेली जोइने मारे तो दूधमां साकर भळ्या बराबर थयुं छे.

चारित्र०—त्यारे भाई उत्तम नाम धरावीने अने दुनिया आगळ आवो मोटो दमाम राखीने [illegible] चारित्र [illegible] गुण [illegible] केवळ [illegible] [illegible] करतां तो मरणज मने [illegible] हवे [illegible] लागे छे.

सुमति [illegible] स्वामीनी ! आप [illegible] [illegible] आत्मना [illegible] [illegible] अभ्यासे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] नहि.

चारित्र०—अय प्रिये ! जे तुं मने हितकारी वचन कहेवा इ-च्छे छे ते हवे विलंब कर्या विना कहे, केमके कह्युं छे के 'शुभ कार्यमां बहु विघ्न आवे छे.'

सुमति—आपनुं कहेवुं यथार्थ छे अने तेथी आप साहेबनी आज्ञाने अनुसरीने हुं मारुं कर्तव्य बजाववाने तत्पर थइछुं. जे जे आपनि मारी फरज विचारीने कहीश तेनु आप कृपा करीने मनन करता रहेजो.

चारित्र०—प्रिये! तारां अमृत वचननुं हुं आदर पूर्वक पान करीश अने ते वडे मारा त्रिविध तप्त आत्माने शान्त करीश ए निश्चे समजजे.

सुमति—आपना आत्माने सर्वथा शान्ति-समाधि मळो! तेमज असमाधिनां खरां कारणोनो क्षय थाओ! अने समाधिनां खरां साधन प्राप्त थाओ.

चारित्र०—मने खात्री थइ छे के तारो स्थायी समागमज सर्व समाधिनुं मूळ कारण छे. अने तेथी असमाधिनां सकळ कारणोनो स्वतः क्षय थइ जशे.

सुमति—आटला अल्प वाक्योमां पण आपना अपरिमित प्रेमनी मने जे प्रतीति थइ छे ते मने आपना भविष्यना सुख-सुधारानी संपूर्ण खातरी आपे छे. हवे हुं आपने मारा सद्विचारो रोशन करवानी रजा लउंछुं. आशा छे के आपनी हृदयभूमिमां रोपायेला सद्विचारो अति अद्भूत फलदायक नीवडशे.

चारित्र —मारामां जेटली पात्रता हशे तेटला तो ते अवश्य फळदायी थशे मारे एवी पण खात्री छे के तारी सतत संगतिथी मारामां पात्रता पण वधती जशे, तथा पात्रताना प्रमाणमां फळनी अधिकता थतीज जशे.

सुमति—हुं अंतःकरणथी इच्छुं छुं के आपने संपूर्ण पात्रता प्राप्त थाओ. अने आप संपूर्ण गुणमय परमपदना पूर्ण अधिकारी थाओ!

चारित्र०—तारां सुवचनो अमृत जेवां छे. केमके तारी साथेना आ वार्ता विनोदमां मने एटलो तो स्वाद आवे छे के तेनी पासे स्वर्गनां सुख पण नहि जेवां छे. जेने तारो संग थयो नथी तेनुं जीव्युं हुं फळ वगरनुं लेखुं छुं.

सुमति —स्वामी! [illegible] आपने निरंतर सुखदायी सखा-ही नहोत तो आपने मारो [illegible] विचारज क्यांथी थात? जेम स्वप्न [illegible] आपना अलौकिक गुणोने स्वप्नमां पण भूलशो नहि. मारी [illegible] प्रार्थना [illegible] विना अनुक्रमां पूर्ण प्रीति बंधाती नथी.

चारित्र०—कुमतिथी हुं म्हारुं बंधायो हतो ए निर्विवाद छे, कुमतिना कुसंगदोषे हुं आवो अनुपम गुण-संगतिथी चूक्यो छुं तेथी ते वात हुं स्वप्नमां पण केम भूली शकुं! हवे हवे एक क्षण

पण मने तारो विछोह न पडो, एज मने इष्ट छे. एवी मारी अंतरनी इच्छा फळीभूत थाओ!

सुमति—स्वामीजी! कुमतिना लांबा वखतना परिचयथी आपनी उपर जे जे विरुद्ध संस्कार बेसी गया होय ते ते सर्व निर्मूळ थाय तेवो अनुकूळ प्रयत्न आपने प्रथमज सेववानी खास जरुर छे. कुमतिना कुसंगथी उद्भवेला माठा संस्कारोने निर्मूळ करवाना मनन प्रयत्नमां हुं पण सहायभूत थइश.

चारित्र०—केवा क्रमथी मारे उक्त संस्कारोने टाळवानो उपाय करवो जोइये?

सुमति—वक्ष्यमाण (कहेवाना) क्रमथी तेमनुं उन्मूलन करवा यत्न करवो जोइये.

१. क्षुद्रता-दोषदृष्टि तजीने अक्षुद्रता-उदार गुणदृष्टि आदरवी जोइये.

२. रसगृद्धता-विषयलंपटता तजीने हित (पथ्य) अने मित (अल्प) आहारथी शरीरने संतोषी आरोग्य अने शरीर सौष्ठव साधवुं जोइये.

३. क्रोधादिक कषायना त्यागथी अने क्षमादिकना सेवनथी सौम्यताबडे चंद्रनीपेरे शीतळ स्वभावी थावुं जोइये?

जेथी कोइने स्व संगतिथी अभावो थवानो कदापि प्रसंग आवे नहि.

४. सर्व लोक विरुद्ध तजीने स्व पर हितकारी कार्य करवा वडे लोकप्रिय थवुं जोइये.

५. मननी कठोरता तजी कोमळता आदरवी जोइये.

६. लोक अपवादथी तथा पापथी बीवुं जोइये. कोइनुं मन पण न दुभावबुं जोइये.

७. सर्व दंभ—मायाने तजीने निर्दंभ-निर्मायी—सरल स्वभावी थवुं जोइये.

८. आपणी इच्छा नहि छतां वडीलनुं मन प्रसन्न राखवाने दाक्षिणता करवी जोइये

९. स्वच्छंदता तजीने लज्जा राखवी जोइये निर्लज्जपणुं तजीने लज्जा मर्यादा सेववी जोइये

१०. निर्दयता तजीने दयाळुता आदरवी जोइये. सर्व उपर अमीनी नजरथी जोवुं जोइये. द्वेष, मत्सर, इर्ष्यादिकने दूर करवा जोइये.

११. पक्षपात बुद्धिने तजीने निष्पक्षपातपणुं आदरवुं जोइये

१२. सद्गुणी मात्र उपर राग धरवो जोइये. सद्गुण रागी थइ रहेवुं जोइये.

१३. प्राणान्त कष्ट आव्ये छते पण असत् भाषण नज करवुं जोइये. सत्यनी खातर प्राण अर्पण करवा जोइये, एकांत सत्यप्रिय थवुं जोइये.

१४. स्वसंबंधी वर्ग पण धर्मनी तालीम लही सबळ थाय तेम करवुं जोइये. स्वपक्ष धर्मसाधन विमुख न रहे तेनी योग्य काळजी राखवी जोइये. अथवा आत्मसाधन स-न्मुख थयेला स्वसंबंधी वर्गनीज योग्य सहाय लेवी जोइये.

१५. दुरंदेशी दृष्टि तजीने करवामां आवता दरेक कार्यनुं केवुं प-रिणाम आवशे तेनो पुख्त विचार करी सुखकारी एवी दीर्घ दृष्टि राखवी जोइये. एकाएक वगर विचार्युं कंइ पण साहस खेडवुं नहि जोइये.

१६. हुं कोण छुं ? मारी स्थिति केवी छे ? मारी फरज शी छे ? मारी खामी केटली छे ? ते खामी सुधारवानो उ-पाय कयो छे ? तेमज आसपासना संयोगो केवा अनु-कूळ के प्रतिकूळ छे ? तेमांथी मारे शी रीते पसार थर

[illegible] आदि सर्वांची विशेष जाणपणु मेळवणें [illegible]

[illegible] जोडणें.

[illegible]

[illegible]

[illegible]

सयळां के धनी थके तेटला योजवाने हुं आपने नम्र-
पणे विनंति करुं छुं.

चारित्र०—अहो सुमति ! दुर्मतिने दूर करी दुष्ट संस्कारोने दूळी नाखवा समर्थ सद्बोध धारा वर्षाववाथी तें तो तारुं सुमति नाम सार्थक कर्युं छे.

सुमति—स्व स्वामी सेवामां तन मन अने वचननो अनन्य भावे उपयोग करवो एज खरी पतिव्रताने उचित छे. तेवी पवित्र फरजो हुं जेटले अंशे अदा करी शकुं तेटले अंशे हुं पोताने कृतार्थ मानुं छुं. पण जे तेथी विरुद्धवर्ती स्वस्वामीने अवळो उपदेश दइने अवळे रस्तेज दोरी जाय छे, तेवी स्वामीने संतापनारी कुमति स्त्री-ने तो हुं स्वामीद्रोही के आत्मद्रोही मानुं छुं.

चारित्र०—खरेखर तारी जेवी सुशीला अने कुमति जेवी कु-शीळा कोइकज नारी हशे ? अहो ! जेओ बापडा सदाय कुमतिनाज पासमां पडया छे तेमने तो स्वप्नमां पण आवो सदुपदेश सांभळवा-नो अवकाश क्यांथी मळे ! अरे ! एवा बापडा जीवता पण मुवा बराबरज तो !

सुमति—ज्यां सुधी कुमतिनो पक्ष पकडी राखे छे त्यां सुधी सर्व घोर घवीज दुर्दशाने प्राप्त थाय छे. ज्यारे तेनो कुसंग तजे छे

त्यारेज ते कंइपण तत्त्वथी सुख पामे छे. त्यां सुधी तो ते मूर्छितप्रायज रहे छे.

चारित्र०—तुं आवी शाणी अने सोभागी छतां केवळ कुमतिनी कुटीलताथी कदर्थना पामता पामर प्राणीयोनो केम उद्धार करती नथी ? अहो एकान्त दुःखमांज डुबकी मारी रहेला तेवा अनाथ जीवोनो उद्धार करतां तने केवो अपूर्व लाभ थाय !

सुमति—आपनी वात सत्य छे. पण अन्य तो निमित्त मात्र छे, पोतानो पुरुषार्थज खरो काम लागे छे. स्व पुरुषार्थज इष्ट सिद्धिमां प्रबळ कारणरूप छे. ते विना स्वेष्ट सिद्धि नथी. आवा सबबथीज लोकमां पण कहेवत प्रचलित छे के ' आप समान बळ नहिं अने मेघ समान जळ नहिं ' एम समजीने सर्व कोइये कुमतिनी कुटीलताथी थता अनेक गेरफायदाओनो विचार करीने तेनो कुसंग तजवा उद्यम करवो जोइये.

चारित्र०—ए कुमतिनो कुसंग तजवानो उद्यम करवा ने प्राणीओने शी रीते अवकाश मळे ! केमके तदनुकूळ उद्यम कर्या विना कदापि तेना कुसंगनो अंत आवी शकतो नथी. माटे केवो संयोग पामीने ते कुसंग टळे ए मने कहो.

सुमति—कुमतिना कुसंगथी विविध विटंबना युक्त जन्म मरणजन्य अनंत दुःखने सही अकाम निर्जराथी जीवने क्वचित् सत्समा-

गम पोते पूर्वे में आपने जेवो उपाय क्रम बताव्यो छे तेवोज क्रम मास थाय-समम पूर्वक तेनो स्वीकार थाय-त्यारेज जीव कुमतिनो संग तजवाने शक्तिवान बने, ते विना कदापि ते तेनो संग तजी शके नहि.

चारित्र०—त्यारे उपर बतावेल्लो उपाय क्रम जाणवा मात्रथी कंइ वळे नहिं शुं? समम पूर्वक तेनो स्वीकार करवाथीज इष्ट कार्यनी सफळता थाय शुं?

सुमति—खरेखर उक्त क्रमनो सारी रीते आदर करवाथीज इष्ट कार्यनी सिद्धि थइ शके छे, पण तेना जाणवा मात्रथी कंइ इष्ट सिद्धि थइ शकती नथी.

चारित्र—शास्त्रमां ज्ञाननीज मुख्यता कही छे तेनुं केम?

सुमति—ते बात सत्य छे पण तेनो अंतर हेतु ए छे के स्व कर्तव्य कार्यने प्रथम सारी रीते जाणी-समजीने सेव्युं होय तो तेथी शीघ्र शुभ फळनी प्राप्ति थइ शके छे. बिलकुल समज्या विना करेली अंधकरणी तो उलटी अनर्थकारी थाय छे. माटे समजीने स्व कर्तव्य करवाथीज सिद्धि छे.

चारित्र०—अन्य धर्मावलंबी लोको तो ज्ञान मात्रथी पण सिद्धि माने छे?

सुमति—तेओनी तेवी मान्यता मिथ्या छे; तरतां आवडतुं होय

पण तरवानी अनुकूल क्रिया कर्या विना सामे तीरे जइ शकातुं नथी ज तथा भूख लाग्ये छते भक्षण क्रिया कर्या विना शान्ति थती नथी, तेम खरा चारित्रना अर्थीजनोने पण शुद्ध चारित्रनी अनुकूल क्रिया करवानी खास जरुर छे जेम बे चक्र विना गाडी चालती नथी तथा बे पांख विना पक्षी उडी शकतुं नथी तेम सम्यग् ज्ञान अने क्रिया विना कार्यसिद्धि थइ शकती नथी. आथी आपने समजायुं हशे के सम्यग क्रिया (सदवर्तन) विनानुं एकलुं ज्ञान लूलुं–पांगळुं छे. अने सम्यग ज्ञान (विवेक) विनानी केवळ क्रिया पण आंधळी छे, माटे मोक्षार्थीजनोए ते बन्नेनो साथेज सहाय लेवी जोइए.

चारित्र०—हवे मने समजायु के केवळ लुखी कथनी मात्रथी कार्य सरवानुं नथी. ज्यारे कथनी प्रमाणे सरस करणी थशे त्यारेज कल्याण थवानु छे.

सुमति—आपनी आवी सहनुक श्रद्धाथी हु बहु खुशी थाउछुं, अने इच्छु छुं के आपने बतावेलो उपायक्रम हवे सफळताने पामशे. परंतु कुमतिनो संग सर्वथा वारवानो अने अक्षय सुखना अवंध्य कारणभूत सत्य चारित्र धर्मनी योग्यता पामवानो जे उपाय क्रम में आपने वात्सल्य भावथी बताव्यो छे तेनो पूर्ण प्रीतीथी आदर करवामां आप लगार पण आळस करशो नहि एवी मारी विनंति छे.

चारित्र०—माराज स्वार्थनी खातर केवळ परमार्थ दावे बतावेला सत्यमार्गथी हुं हवे चुकीश नहिं, तुं पण तेमां सहायभूत थया करशे तो ते मार्गनुं सेवन करवुं मने बहुं सुलहुं पडशे.

सुमति—आपने समयोचित सहाय करवी ए मारी पवित्र फरज छे, एम हुं अंतःकरणथी लेखुं छुं, तेथी हुं समयोचित सहाय करती रहीश.

चारित्र—ज्यारे तुं मारे माटे आटली बधी लागणी धरावे छे त्यारे हुं हवेथी सन्मार्ग सेवनमां प्रमाद नहि करुं, तारी समयोचित सहाय छतां सन्मार्ग सेवनमां उपेक्षा करे तेना पूरा कमनसीबज.

सुमति—आपने बतावेलो सन्मार्ग सेवननो क्रम जेओ बेदरकारीथी आदरताज नथी तेओ कदापि सत्य चारित्रना अधिकारी थइ शकताज नथी. परंतु तेनो योग्य आदर करनारा तो तेना अनुक्रमे अधिकारी थइ शके छेज. माटे कदापि तेमां बेदरकारी करवीज नहिं.

चारित्र०—उपरला सद् उपायने सेव्याबाद आत्माने शुं शुं करवुं अवशिष्ट (बाकी) रहे छे ? अने उक्त उपायथी आत्माने शो तात्कालिक लाभ थाय छे ?

सुमति—उक्त उपायना यथार्थ सेवन कर्या बाद पण आत्माने करवानुं बहुज बाकी रहे छे. आथीतो हृदय-भूमिकानी शुद्धि थायछे.

हृदय शोधन-स्वच्छ थया बाद तेमां चारित्र गुणना आधारभूत सद् विवेक प्रगटे छे. आ सद् विवेकनुं बीजुं नाम समकित या तत्त्व-श्रद्धा छे. हृदय भूमि शुद्ध थया बादज तेमां चारित्र-महेलनो सद्विवेक या समकित रूपी पायो नंखाय छे. तेना विना चारित्र-महेल टकी शकतोज नथी.

चारित्र०—उक्त रीते हृदय शुद्धि कर्याबाद जे सद्विवेक या समकित पामवुं इष्ट छे तेनु स्वरूप अने लक्षण जाणवानी मने अभि-लाषा थइ छे. तेथी प्रथम संक्षेप मात्र तेनु स्वरूप अने लक्षण कथन करो.

सुमति—' सदसद्विवेचनंविवेकः ' तत्त्वातत्त्वनी जेवडे यथार्थ समज पडे, गुण, दोष, हिताहित, कृत्याकृत्य, भक्ष्याभक्ष्य, अने पेयापेय विगेरेनी जेथी *यथार्थ ओळखाण थाय*, देव , गुरु अने धर्म संबंधी जेथी संपूर्ण निश्चय थाय, तेवो निर्णय-निर्धार कर्याबाद खोटी बाबतमां कदापि मुंझावाय नहि अने सत्य वस्तुनी खातर प्राण अर्पण करवा पण तैयार थवाय; आ उपरांत उपशम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा अने आस्तिकता ए पांच, समकितनां खास लक्षण छे ए लक्षणथी समकितनी खात्री थइ शके छे. ज्यांसुधी उपशमादिक लक्षण अंतरमां प्रगट थयेलां देखाय नहिं त्यांसुधी सद् विवेक यां समकित प्रगट थयानी खात्री थइ शकती नथी. तेथी पूर्वला क्रमथी हृदय शुद्धि कर्याबाद सद् विवेक या समकित रत्नना अर्थी जनोए

क्त उपशमादि गुणनो अभ्यास करवानी आवश्यकता छे. केमके कारणथी कार्य सिद्धि थायज छे एवो अचळ सिद्धांत छे.

चारित्र०—संक्षेपथी नाम मात्र कहेलां उपशमादिक लक्षणोनुं कंइक स्वरुप समजवानी मारी इच्छा छे ते हुं धारुं छुं के तमे सफळ करशो.

चारित्रराजनो स्वहित मत्ये विशेष आदर थयेलो जाणी सुमति तेनुं समाधान करे छे.

सुमति—आपनी आवी अपूर्व जिज्ञासा थयेली जाणीने हुं विशेष खुशी थइ छुं, अने उक्त पांचे लक्षणोनु अनुक्रमे स्वरुप कहुं छुं ते आप लक्षमां राखवा कृपा करशो. केमके ए पांचे लक्षणथी लक्षित थयेलुं समकित रत्न सकळ गुणोमां सारभूत एटले आधारभूत छे.

चारित्र०—हुं सावधानपणे समकितनां पांचे लक्षणनुं स्वरुप सांभळवाने सन्मुख थयेलो छुं. तेथी हवे तमे तेनुं निरुपण करो.

सुमति—उक्त पांचे लक्षणमां प्रधानभूत उपशमनु स्वरुप आ प्रमाणे छे. अपराधीनु पण अहित करवा मनथी पण प्रवृत्ति थाय नहिं एवी रीते क्रोधादि कषायोने शमावी दीधा होय; साध्य दृष्टिथी सामानुं अंतरथी अहित नहिं करवानी बुद्धिथी तेने योग्य शिक्षा

पण कराय, किंतु विलष्ट भावथी तो मन, वचन के कायानी प्रवृत्ति तेनुं अहित करवा माटे थायज नहिं ते शम अथवा उपशम कहेवायछे.

यतः–अपराधीशुं पण नवी चित्त थकी, चिंतविये प्रतिकूल सुगुणनर.

चारित्र०—खरेखर उपशमनुं आवुं अद्भूत स्वरुप मनन करवा जेवुंज छे. तेमां केवी अद्भूत क्षमा रहेली छे. हवे बीजा संवेगनुं स्वरुप कहो.

सुमति—संसार संबंधी क्षणिक सुखने दुःख रुपज लेखाय अने तेवा कल्पित सुखमां मग्न नहि थातां केवळ मोक्ष सुखनीज चाहना बनी रहे. यथाशक्ति अनुकुळ साधनवडे स्वभाविक सुख प्राप्त करवा प्रयत्न कराय अने प्रतिकूळ कारणोथी डरतां रहेवाय तेनु नाम संवेग छे.

यतः—" सुरनर सुख ते दुःख करी लेखवे, वंछे शिवसुख एक चतुरनर. "

चारित्र०—अहो संवेगनु स्वरुप पण अत्यंत हृदयहारक छे ते अक्षय सुखमां अथवा अक्षय सुखना साधनमां केवी रति करवा अने क्षणिक सुखमां के क्षणिक सुखनां साधनमां केवी उदासीनता करवा बोधे छे. अहो! सत्य मार्ग दर्शकनी बलिहारी छे! हवे त्रीजा निर्वेदनुं कंइक स्वरुप कहो?

सुमति—जेम कोइने केदमांथी वयारे छूटुं अथवा नरक स्थान-मांथी वयारे नीसरुं एवी स्वभाविक इच्छा प्रवर्ते, तेम आ जन्म मरणनां प्रत्यक्ष दुःखथी कंटाळी तेथी सर्वथा मुक्त थवानी बुद्धिथी पवित्र धर्म-करणी करवा स्वभाविक रीते प्रेराय ते निर्वेद नामे त्रीजुं लक्षण छे.

"यतः—नारक चारक सम भव उभग्यो, तारक जाणीने धर्म सुगुणनर;
चाहे नीकलवुं निर्वेदते, त्रीजुं लक्षण मर्म सुगुणनर."

चारित्र०—अहा! आ निर्वेदनुं लक्षण विषय लंपट अने कठोर मनवाळाने पण वैराग्य पेदा करवाने समर्थ छे. तेथी चिर परिचित एवा विषय भोग उपर तेनुं अंतर स्वरुप विचारतां स्वभाविक रीते तिरस्कार छुटे छे. परम उदासीन विना एवुं स्वरुप कोण प्रतिपादन करी शके वारु! हवे अनुकंपानुं कंइक स्वरुप बतावो.

सुमति—दुःखीनुं दुःख दीलमां धरीने तेनुं वारण करवा यथाशक्ति उद्यम करवो, धर्महीन या पतित जीवोने यथायोग्य सहाय आपीने धर्ममां जोडवा, तेमनी लगारे उपेक्षा नहि करतां जेम धर्मनी उन्नति थाय तेम स्व शक्ति अनुसारे प्रयत्न करवो, ते अनुकंपा कहेवाय छे.
यतः—"द्रव्यं थकी दुःखियानी जे दया, धर्महीणानीरे

भाय, सुगुण नर; चोथुं लक्षण अनुकंपा कही, निज शक्ते मन लाय सुगुण नर; श्रीजिन भापित वचन विचारीये॥४॥

चारित्र०—अहो ! आ लक्षणनो जगत् मात्रनो उद्धार करवा समर्थ छे. तेमां दर्शावेली दयालुता केवी उत्तम छे ? एवी उत्तम अने निपुण दयार्थीज जीवनुं कल्याण थइ शके छे. केवळ दया दया पोकारवाथी कदापि कंइ पण वळवानुं नथी. अहो आ दुनियामां धर्मनुं वानुं काढीने पोतानो तुच्छ स्वार्थ साधवाने सेंकडो जीवोनो जान लेवा वाळा केटला बधा दीसे छे. ते बधा हवे तो मने धर्म-ठगज मालम पडे छे. अहो दीन अनाथ एवा ते बापडाओना परलोकमां शा हाल थशे ? उपरनुं अनुकंपानुं लक्षण तो मने अभिनव अमृत जेवुं, नवुं जीवन आपनारुं लागे छे. हवे अवशिष्ट रहेलुं आस्तिक्य केवा प्रकारनुं जोइये ते कंइक समजावो.

सुमति—राग, द्वेष, अने मोहादिक दोष समूहथी सर्वथा मुक्त अने अनंत शक्ति संपन्न सर्वज्ञ सर्वदर्शी श्री जिनेश्वर प्रभु प्रणीत जीव अजीवादिक तत्त्वोनुं स्वरुप समजीने तेनुं यथार्थ श्रद्धान करवुं. गमे तेवी कु-युक्ति कोइ करे तो पण शुद्ध तत्त्व मार्गथी कदापि डगवुं नहिं. आवा तत्त्वाग्रह अथवा तत्त्व श्रद्धानथी कुमतिनो सर्वथा क्षय थइ जाय छे.

यतः-" जे जिन भाष्युं ते नहिं अन्यथा, एवो जे दृढ रंग;
सुगुणनर;

ते आस्तिकता लक्षण पांचमुं, करे कुमतिनो ए भंग
सुगुण० ''

चारित्र०—अहा ! प्राणप्रिये ! सुमति ! आ लक्षण तो आडो आंकज छे. आवा परमात्माना वचनमांज प्रतीति राखवी, ते विनाना कपोळ कल्पित वचनोनो विश्वास न ज करवो ए खरा परीक्षकनुं काम छे केम ?

सुमति—मोटा मोटा गणाता पण अंध श्रद्धालु खरी तत्त्व परीक्षामां पास थइ शकता नथी. तेमने मिथ्यात्वनुं मोटुं आवरण आडुं आवतुं होवुं जोइये, नहिं तो डाही डमरी वातो करी जगतने रंजन करनारा छतां तेओ शुद्ध तत्त्व परीक्षामां केम पसार न थइ शके ? एज तेमनी अंध श्रद्धानी प्रबळ निशानी छे के साक्षात् साची वस्तु तर्फने खोटीनेज झाले छे. शुद्ध देवगुरु अने धर्म संबंधी परिक्षामां पण अंध श्रद्धालु मोटा भूलावामां पडे छे. तेथीज ते रागद्वेष अने मोहादि दोष युक्तने देव तरीके स्वीकारे छे. लोभी लालची अने असंबद्धभाषीने गुरु तरिके स्वीकारे छे. अने उक्त नायकोना कथेला मार्गने धर्म तरीके स्वीकारे छे. देवगुरु अने धर्म जेवा श्रेष्ठ तत्त्वमां आवी गंभीर भूलने करनारा केवळ अंध–श्रद्धालुज कहेवाय माटे तेमनुं खरुं स्वरुप जाणवुं जरुरनुं छे.

चारित्र०—सो मारा हितनी खातर शुद्ध देव गुरु अने धर्मनुं

कंइक स्वरूप समजावशो तो मने अने मारा जेवा बीजा जीवोने पण कंइक लाभ थाशे.

सुमति—प्रथम हुं शुद्ध देवनुं संक्षेपथी स्वरुप कहुं छुं ते आप लक्षमां राखशो. जेनां नेत्र युगळ शान्तरसमां निमग्न होय, वदन (मुखारविंद) सुप्रसन्न होय, उत्संग (खोळो) कामिनीना संगथी शून्य होय, तेमज हस्तयुगळ पण शस्त्रवर्जित होय तोज तेने तेवी प्रमाण-मुद्राथी देवाधिदेव मानी शकाय. तात्पर्यके जेनामां राग, द्वेष, अने मोह सर्वथा विलय पाम्या छे तेथी उक्त दोषोनी कंइपण निशानी देखाती नथी एवा आप्त-महापुरुषनेज देवाधिदेव तरीके मानी शकाय. आ शिवाय उक्त महादेवने ओळखवाना अनेक साधन शास्त्रमां कह्यां छे. विशेष रुचि जीवे ते सर्वनो त्यांथी निर्धार करी लेवो.

चारित्र०—अहो ! आवुं अद्भूत देवनुं स्वरुप कोइकज विरला जाणता हशे, अने कदाच कोइ जाणता हशे तोपण कुळाचार कहो के कदाग्रहने तजीने कोइकज तेनो यथार्थ आदर करता हशे. वहोळो भाग तो गतानुगतिक होवाथी स्व कुलाचारनेज वळगी रहेवामां सार माने छे. एवा बापडा अज्ञान लोको शुद्ध देवने क्यारे ओळखी शकशे ? तेमने ते ओळखावे पण कोण ? खरेखर ते बापडा हतभाग्य छे तेथीज तेओ एवी करुणाजनक स्थितिमां पड्या छे. हवे शुद्ध गुरुनुं स्वरुप कहो.

सुमति—जे अहिंसादिक पांच महाव्रतोने धारण करे छे, रात्री

भोजन सर्वथा तजे छे, निःस्पृहपणे अन्य योग्य अधिकारी जनोने धर्मोपदेश दे छे, रायने अने रंकने समान लेखे छे, नारीने नागणी तुल्य लेखी दूर तजे छे, सुवर्ण अने पथ्थरने समान लेखे छे, निंदा–स्तुति सांभळीने मनमां हर्ष–शोक ल्यावता नथी, चंद्रनी जेवा शीतळ स्वभावी छे, सागरनी जेवा गंभीर छे, मेरुनी जेवा निश्चळ छे, भारंडनी जेवा प्रमाद रहित छे, अने कमळनी जेवा निर्लेप छे; जेवी राग द्वेष अने मोहादिक अंतरंग शत्रुओने जीतवाने पूर्वोक्त महापुरुषना वचनानुसारे पुरुषार्थ फोरव्या करे छे. एवा मवतरणनी जेम स्वपरने तारवा समर्थ सद्गुरु होय छे, एवा शुद्ध गुरुमहाराजनुं मोक्षार्थी जनोए अवश्य शरण लेवुं योग्य छे.

चारित्र०—अहो प्राणवल्लभा ! सुमति ! सद्गुरुनुं आवुं यथार्थ स्वरूप सांभळीने त्यांथा परगलनो प्यारु पडदो मारी मनःस्वरूपमां थइ गयो छे. हवे मारां पडळ खूल्यां. शुद्ध चारित्र पात्र सद्गुरु आवाज होय ते यथार्थ जाणवाथी मारो आगलो भ्रम भागी गयो छे, अने हुं हवे सुगुरुगुरुनुं चाही लेउं छुं के हुं तो नाम मात्रनो चारित्रराज छुं. अहो सुमति ! जो मने तारो समागम थयो न होत तो आ अनादि मायानो पडदो शी रीते दूर थइ शकत अने ते पडदो दूर थया विना मारा शा हाल थात ? हुं दंभशीलपणे मुग्ध जनोने ठगीने केवो दुःखी थात ? अरे मायावी एवा मारा मिथ्यात्वपणथी केटलो बधो अनर्थ थात ? हुं धारुं छुं के मारुं कल्याण थशे !

ते कल्प काल सुधी तारी नामना रहेजो! अने तारा सत्समागमथी सौना आतम कल्याण थाओ! हवे अनुकूळताए मने शुद्ध धर्मनुं स्वरूप समजाववा श्रम लेजो.

सुमति— तमारी सबळ तत्त्व–जिज्ञासाथी हुं अत्यंत खुशी थइ छुं. तेम आपनी इच्छा अनुसारे शुद्ध धर्म तत्त्वनुं स्वरूप समजाववाने यथामति उद्यम करीश. मने आशा छे के ते सर्व सावधानपणे सांभळी तेमांथी सार ग्रही, तेनो यथाशक्ति आदर करीने आप मारो श्रम सफळ करशो.

चारित्र— हुं ए सर्व सावधानताथी सांभळी तेनो सार लइ यथाशक्ति आदर करवा चूकीश नहि. तेथी हवे निःसंशयपणे धर्म तत्त्वनुं स्वरूप समजाववाने सन्मुख थाओ!

सुमति— “ अहिंसा परमो धर्मः ” ए सर्व सामान्य वचन छे. ए वचन जेटलुं व्यापक छे. तेटलुंज गंभीर छे. सर्व सामान्य लोको तेनुं यथार्थ स्वरूप समजी शकता नथी. तेथीज तेओ तेमां क्वचित् भारे स्खलना पामे छे. अथवा तेनो यथार्थ लाभ लही शकता नथी. ‘ नहिंसा–अहिंसा. ’ अर्थात् दया एटले कोइने दुःख नहि देवुं एटलोज तेनो सामान्य अर्थ केटलाक करे छे. परंतु ते करतां घणीज वधारे अर्थ–गंभीरता तेमां रहेली छे ते नीचेनी वातथी आपने रोशन थशे–“ प्रमत्त योगात् प्राण व्यपरोपणं हिंसा. ”

सुमति—प्रथम हुं आपने 'अहिंसा' नुं कंइक सविशेष स्वरुप समजावुं छुं. में आपने पहेलां पण जणाव्युं छे के 'प्रमत्त योगात् प्राण व्यपरोपणं हिंसा' तेथी तेमां कहेला प्रमत्तयोग शी रीते थाय ते पण जाणवुं जोइये. 'मद्य' (Intoxication) विषय (sensual desires) कषाय (Wrath arrogance etc) निद्रा (Idleness) अने विकथा (false gossips) वडे 'राग द्वेष युक्त कलुषित मन वचन अने कायानुं प्रवर्तन थाय ते प्रमत्त योग कहेवाय. एवा प्रमत्तयोगथी आत्मा पोताना कर्तव्यथी भ्रष्ट थाय छे. तेथी ते शास्त्र संबंधी विहित मार्गनो लोप करे छे. शास्त्रनो विहित मार्ग मूळ रुपमां आवो छे के—

मातृवत् परदारेपु, परद्रव्येपु लोष्टवत्;
आत्मवत् सर्व भूतेपु, यः पश्यति स पश्यति.

परस्त्रीने पोतानी माता तुल्य लेखवे, परद्रव्यने धुळना ढेफा जेवुं लेखवे अने सर्व प्राणी वर्गने आत्म समान लेखवे तेज खरो ज्ञानी–विवेकी के शास्त्र श्रद्धालु छे, प्रमत्तयोगथी कोइ पण प्राणी आवा पवित्र मार्गथी पतित थाय छे, अने स्वपरने भारे नुकसान करे छे, तेनुं खरुं नाम हिंसा छे. एवी हिंसाथी पापनी परंपरा वधती जाय छे अने तेथी संसार–संतति वधे छे. आथी पोताने तथा परने अधोगतिनुं वारंवार कारण बने छे. एवी दुःखदायक हिंसाथी दूर

रहेवुं अने पूर्वोक्त मयत्न योगने तजीने अप्रमत्तपणे शास्त्रविहित मार्गेज चालीने स्वपरनुं एकांत हित थाय एवी अनुकूल मवृत्तिज सेववी ते अहिंसा कहेवाय छे. आवी साची अहिंसाज सर्व भयहरी अभयकरी अने कल्याणकारी कही शकाय.

चारित्र०—खरेखर उक्त स्वरूपवाळी अहिंसाज सर्व दुःख हरनारी होवाथी परम सुखदायी अने सर्व कल्याणने करनारी होवाथी उत्कृष्ट मंगळरूप छे. आवी भयहर अहिंसाज जगत मात्रने सेवन करवा योग्य छे. हवे उक्त अहिंसाने उपष्टंभकारी संयमनुं कंइक स्वरूप समजावशो.

सुमति—"संयमनं संयमः" स्वच्छंदपणे चालता आत्मानो निग्रह करवो, तेने खोटा मार्गथी निवर्तावी साचा मार्गमां जोडवो ते संयम कहेवाय छे. हिंसा, असत्य, अदत्त, अब्रह्म तथा मूर्छा (परिग्रह) नो सर्वथा के देशथी (जेटले अंशे बने तेटले अंशे) त्याग करी अहिंसादि ५ महाव्रतोनो अने तथाप्रकारनी शक्ति न होय तो ५ अणुव्रतोनो स्वीकार करी तेमनो यथार्थ आदर-निर्वाह करवो, स्वेच्छा मुजब वर्तती स्पर्शेन्द्रिय विगेरे पांचे इंद्रियोनो निग्रह करवो, क्रोधादिक कषाय चतुष्कनो जय करवो अने मन, वचन, कायारूप योगत्रयनी पाप प्रवृत्तिनो त्याग करीने तेमनी गोपना-गुप्ति करवी. ए प्रमाणे संयमना १७ भेद कह्या छे.

हृदय चोख्खुं-स्वच्छ थया बाद तेमां चारित्र गुणना आधारभूत सद् विवेक प्रगटे छे. आ सद् विवेकनुं बीजुं नाम समकित या तत्त्व-श्रद्धा छे. हृदय-भूमि शुद्ध थया बादज तेमां चारित्र-महेलनो सद्‌विवेक या समकित रुपी पायो नंखाय छे. तेना विना चारित्र-महेल टकी शकतोज नथी.

चारित्र०—उक्त रीते हृदय शुद्धि कर्याबाद जे सद्विवेक या समकित पामवुं इष्ट छे तेनुं स्वरुप अने लक्षण जाणवानी मने अभिलाषा थइ छे, तेथी प्रथम संक्षेप मात्र तेनु स्वरुप अने लक्षण कथन करो.

सुमति—' सदसद्विवेचनंविवेकः ' तत्त्वातत्त्वनी जेवडे यथार्थ समज पडे, गुण, दोष, हिताहित, कृत्याकृत्य, भक्ष्याभक्ष्य, अने पेयापेय विगेरेनी जेथी यथार्थ ओळखाण थाय, देव , गुरु अने धर्म संबंधी जेथी संपूर्ण निश्चय थाय, तेवो निर्णय-निर्धार कर्याबाद खोटी बाबतमां कदापि मुंझावाय नहि अने सत्य वस्तुनी खातर प्राण अर्पण करवा पण तैयार थवाय; आ उपरांत उपशम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा अने आस्तिकता ए पांच, समकितनां खास लक्षण छे ए लक्षणथी समकितनी खात्री थइ शके छे. ज्यांसुधी उपशमादिक लक्षण अंतरमां प्रगट थयेलां देखाय नहिं त्यांसुधी सद् विवेक या समकित प्रगट थयानी खात्री थइ शकती नथी. तेथी पूर्वेना क्रमथी हृदय शुद्धि कर्याबाद सद् विवेक या समकित रत्नना अर्थी जनोए

देश–संयमी श्रावकनी सीमाये ( हदे ) पहोंची शकाय छे. ते देश–विरति गुण स्थानक पांचमुं गणाय छे. तेमां पांच अणुव्रत ३ गुण व्रत अने ४ शिक्षाव्रतनो समावेश थइ जाय छे. दृढ वैरागी श्रावक सद्गुरु योगे श्रावकनी ११ पडिमा ( प्रतिमा ) वहेछे. परंतु पूर्वोक्त व्रतने धारण कर्या पहेलां तेमांना दरेकनो अभ्यास करी जोवे छे, जेथी तेनुं पालन करवुं कंइक वधारे सुतर पडे छे. श्रावक योग्य व्रत अने पडिमाना शुभ अभ्यासथी अनुक्रमे 'सर्व संयमनो' अधिकार प्राप्त थाय छे. पंच महाव्रतादिकनो एमां समावेश थाय छे. ए गुण स्थानक छट्ठुं 'प्रमत्त' नामे ओळखाय छे. लीधेलां महाव्रत विगेरे जो सावधानपणे साचवी तेमनी शुद्धि अने पुष्टि करवामां आवे छे तो परिणामनी विशुद्धिथी अप्रमत्त नामे सातमुं गुण स्थानक प्राप्त थइ शके छे पण जो उक्त महाव्रतादिकनी उपेक्षा करी स्वच्छंद वर्तन करवामां आवे छे तो परिणामनी मलीनताथी पतित अवस्थाने पामी छेवट मिथ्यात्व नामना प्रथम गुण स्थानके जवुं पडे छे, तेथी ज दीर्घदृष्टि थइने जेनो गुरुथी निर्वाह थाय तेवां व्रत ग्रहण करवामां आवे तो तेथी पतित थवानो प्रायः प्रसंग आवे नहि. "स्व स्व शक्ति मुजब बनी शके तेटली धर्म करणी कपट रहितज करवानी जिनेश्वर भगवाननी आज्ञा छे." एवी अखंड आज्ञानुं उल्लंघन करवाथी हानीज थाय छे. तेथी उक्त आज्ञानुं आराधन करवामांज सर्व हित समायेलुं छे. कदाचित् सरल भावथी सर्व संयम आदर्या बाद



वानी पूर्ण अभिलाषा वर्ते छे. एवी मारी उच्च अभिलाषा सफळ थाय माटे सर्वज्ञ प्रभुनी कृपा साथे तारी सतत सहाय मागुं छुं.

सुमति—माराथी बनी शके ते सर्व सहाय समर्पवा हुं सेवामां सदा तत्पर छुं अने खरा जीगरथी इच्छुं छुं के आपनी आवी उच्च अभिलाषा शीघ्र फलीभूत थाओ!

चारित्र०—प्रिये! तारी सत्संगतिथी हुं दिनप्रतिदिन अपूर्व आनंद अनुभवतो जाउं छुं तेथी मने खात्री थाय छे के मारी उच्च अभिलाषा एक दिवस सफळ थाशेज! हाल तो मने धर्मना पवित्र अंगभूत अवशिष्ट रहेला तपनु स्वरुप जाणवानी प्रबळ इच्छा वर्ते छे. तेथी तेनु कंइक विशेष स्वरुप समजावीने समाधान करवुं घटेछे.

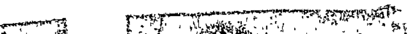
सुमति—जेथी पूर्व संचित कर्ममळ दग्ध थइने शम पामे तेनु नाम तप छे. अनादि अज्ञानना योगथी विविध विषयमां भटकता मननो अने इंद्रियोनो निरोध करी सहज स्वभावमां स्थित थावुं तेज खरो तप छे. ते तपना ६ बाह्य अने ६ अभ्यंतर मळीने १२ भेद छे, जे खास लक्षमां राखवा जेवा छे. आत्म विशुद्धि करवाना कामी जनोने ते सर्वे अत्यंत हितकारी छे. तेमांथी प्रथम ६ बाह्यभेदनु किंचित् स्वरुप कहुं छुं.

१. अनशन-सर्व प्रकारना अन्न पाणी विगेरे भोग्य पदार्थोनो अमुक वखत सुधी अथवा जावज्जीव माटे त्याग करीने सहज संतोष राखवो ते.



विनानी धर्मकथावडे अन्य आत्मार्थीजनोने योग्य अवलंबन देवारूप पांचमकारना स्वाध्यायथी आत्माने अत्यंत उपकार थतो होवाथी ज्ञानी पुरुषोए तेने अभ्यंतर तपरूप लेख्यो छे.

५. अप्रशस्त अने प्रशस्त अथवा शुभ अने अशुभ अथवा शुद्ध अने अशुद्ध एवा मुख्यपणे ध्यानना बे भेद छे. आर्त अने रौद्र ए बे अप्रशस्त तथा धर्म अने शुक्ल ए बे प्रशस्त ध्यानना भेद छे. कोइ पण वस्तुमां चित्तनुं एकाग्रपणुं थवुं ते ध्यान कहेवाय छे. तेथी जो शुभवस्तुमां चित्त परोवायुं होय तो शुभ ध्यान अने अशुभ वस्तुमां चित्त परोवायुं होय तो अशुभ ध्यान कहेवाय छे. मलीन विचारवाळुं ध्यान अशुद्ध कहेवाय छे अने निर्मळ विचारवाळुं ध्यान शुद्ध कहेवाय छे. 'मनुष्योने बंध अने मोक्षनुं मुख्य कारण मनज छे.' एम जे कहेवाय छे ते आवा शुभाशुभ ध्यानने लइनेज समजवानुं छे. क्षणवारमां प्रसन्नचंद्र राजर्षिए जे सातमी नर्कनां दळीयां मेळव्यां अने पाछां विखेरी नांख्यां ते तथा भरत महाराजाए क्षणवारमां आरीसो अवलोकतां केवळ ज्ञान प्राप्त कर्युं ते सर्व ध्याननोज महिमा छे.



धर्म सेवन द्वारा स्वनाम सार्थक करवाने माराथी बनतुं साहस खेडवा यावी राखीश नहि. तारी समयोचित किंमती सहायथी हुं मारी धारणामां अवश्य फतेहमंद नीवडीश.

सुमति—तथास्तु! किंतु आपनो पवित्र हेतु संपूर्ण सिद्ध करवाने सबळ सहायभूत पूर्वोक्त धर्मनुं निश्चय अने व्यवहारथी स्वरूप कंइक बारीकीथी समजी लेवानी आपने जरुर छे.

चारित्र०—व्यवहार धर्म अने निश्चय धर्मनो मुख्य शो तफावत छे अने तेथी शो उपकार थइ शके छे?

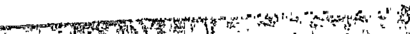
सुमति—व्यवहार धर्म साधन छे, अने निश्चय धर्म साध्य छे. शुद्ध-निश्चय धर्म साक्षात् प्राप्त करवाने व्यवहार धर्म पुष्ट कारणभूत छे. व्यवहार साधन विना निश्चय साधी शकाय नहि.

चारित्र०—पूर्वे बतावेलुं धर्मनुं स्वरूप मुख्यताथी केवा प्रकारनुं छे?

सुमति—धर्मनुं पूर्वोक्त स्वरूप मुख्यताथी व्यवहारनी अपेक्षाये कहेलुं छे तेथी तेमां निश्चयनुं स्वरूप केवळ गौणपणेज रह्युं छे.

चारित्र—त्यारे हवे मने निश्चय धर्मनुं कंइक स्वरूप समजावो.

सुमति—सर्वथा कर्म कलंक रहित निर्मळ ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने वीर्य (शक्ति) रूप आत्मानो सहज (निरुपाधिक) स्वभाव



दुष्ट दोषोनो सर्वथा क्षय थाय नहि त्यां सुधी तेमनो संपूर्ण क्षय क-रवा माटे काळजी पूर्वक जे जे धर्म करणी करवामां आवे ते ते सर्व व्यवहार करणीमांज लेखाय छे. परंतु एटलो विशेष ( तफावत ) छे के जेम जेम आत्मा पूर्वोक्त दोषोनो क्षय करवाने विशेषे सन्मुख थतो जाय छे तेम तेम सहज सन्मुख भावे सेवन करवामां आवतो ते व्यवहार शुद्ध, शुद्धतर, अने शुद्धतम कहेवाय छे.

चारित्र०—पूर्वोक्त निश्चय अने व्यवहार धर्मनुं कंइक वधारे स्फुट थाय तेम समजावो ?

सुमति—अनादि कर्म संयोगथी प्रभवता राग द्वेषादिकने पू-र्वोक्त अहिंसा संयम अने तप रूप धर्मनी सहायथी दूर करीने आ-त्माना स्वाभाविक ज्ञानादिक गुणोने प्रगट करी तेमनुं रक्षण करवुं. पूर्वोक्त प्रमाद योगे तेमनुं विराधन थवा न देवुं तेज निश्चय धर्म छे. सत्तागत रहेला आत्माना स्वभाविक गुणोने ढांकी देनारा कर्म आवरणोने हठाववाने अनुकूळ जे जे सदा-चरण सेववुं पडे ते ते सर्व व्यवहार धर्म कहेवाय छे. आथी स्फुट समजाशे के व्यवहार मार्गनुं विवेकथी सेवन करवुं ए निश्चय धर्म सिद्ध करवानुं अवंध्य ( अमोघ ) साधन छे. एटले के व्यवहार का-रण रूप छे अने निश्चय कार्य रूप अथवा फळ रूप छे.

चारित्र०—उक्त स्वरूपनुं समर्थन करवा सुखे समजी शकाय एवुं कोइ पद्यात्मक प्रमाण टांकी देखाडो ?

जेम निर्मलता रे रत्न स्फटिक तणी, तेम ए जीव स्वभाव;
ते जिन वीरे रे धर्म प्रकाशियो, प्रबल कषाय अभाव.
श्री सीमंधर साहिब सांभलो० १

जेम ते राते रे फूले रातडुं, श्याम फूलथी श्याम;
पुण्य पापथी तेम जग जीवने, राग द्वेष परिणाम.
श्री सीमंधर० २

धर्म न कहिये रे निश्चे तेहने, जेह विभाव वड व्याधि;
पहेले अंगे रे एणी पेरे भाखियुं, कर्मे होय उपाधि.
श्री सीमंधर० ३

जे जे अंशे रे निरुपाधिकपणुं, ते ते जाणो रे धर्म;
सम्यग् दृष्टि रे गुणठाणा थकी, जाव लहे शिव शर्म.
श्री सीमंधर० ४

एम जाणीने रे ज्ञान दशा भजी, रहिये आप स्वरूप;

पर परिणतिथीरे धर्म न छंडीये, नवि पडिये भव कूप.
श्री सीमंधर साहिब सांभलो० ५"

आवी रीते धर्म मार्गनुं योग्य समर्थन करीने उभयनुं आराधन करवा आ प्रमाणे कहेलुं छे.

"निश्चय दृष्टि हृदय धरीजी, पाले जे व्यवहार :
पुण्यवंत ते पामशेजी, भव समुद्रनो पार. सोभागी.
जिन सीमंधर सुणो वात!"

आम टुंकाणमां उक्त महापुरुषे जणाव्युं छे के निश्चयने पामवा इच्छनारे तेनेज हृदयमां स्थापीने-तेना सन्मुखज दृष्टि राखीने विवेक पूर्वक व्यवहार मार्गनुं सेवन करता रहेवुं. एम करवाथीज अंते साध्य सिद्धि-भवसमुद्रनो अंत आवी शकशे. ते विना भवभ्रमणनो कदापि अंत आवी शकशे नहिं. एम समजीने अक्षय सुखना अर्थी सर्वे भाइ बहेनोए स्फाटिक रत्न जेवो निर्मळ आतम स्वभाव प्रगट करवाना परम पवित्र-उद्देशथी तेमां बाधकभूत राग, द्वेष अने मोहादिक कर्ममळ जेम दूर थाय तेम उपयोग राखी सर्वज्ञभाषित अहिंसा, संयम अने तप लक्षण धर्मनुं सदा यत्नथी सेवन करवुंज उचित छे. आपथीनुं पण एथीज कल्याण थवानुं निश्चित छे.

---

गुणगुणीनो कथंचित् अभेद संबंध होवाथीज उपर गुणने बदले गुणीनुं निरुपण कर्युं छे. अर्थात् धर्म रत्नने योग्य आवा गुणी थवुंज जोइये. केवा गुणी थवुं जोइये? तेनुं उपर मुजब प्रथम संक्षिप्त वर्णन करीने पछी कंइक ते संबंधी विशेष वर्णन करवाने बनतो प्रयत्न करशुं.

१. क्षुद्र नहि एटले अक्षुद्र, गंभीर आशयवाळो, सूक्ष्म रीते वस्तुतत्त्वनो विचार करवाने शक्ति धरावनार समर्थ जीव विशेष धर्म रत्नने पामी शके.

२. रुपनिधि एटले प्रशस्त रुपवाळो, पांचे इंद्रियो जेने स्पष्ट रीते प्राप्त थयेल छे एवो अर्थात् शरीर संबंधी सुंदर आकृतिने धारनार आत्मा.

३. सौम्य एटले स्वभावेज पापदोष रहित, शीतळ स्वभाव वान् आत्मा.

४. जनप्रिय एटले सदा सदाचारने सेवनार लोकप्रिय आत्मा.

५. क्रूर नहि एटले क्रूरता या निष्ठुरताबडे जेनुं मन मलीन थयुं नथी एवो अक्लिष्ट याने प्रसन्न चित्तयुक्त शांत आत्मा.

६. भीरु एटले आलोक संबंधी तथा परलोक संबंधी अपायथी डरवावाळो अर्थात् अपवादभीरु तेमज पापभीरु होवाथी बधी

रीते संभाळीने चालनार, उभय लोक विरुद्ध कार्यनो अवश्य परिहार करनार.

७. अशठ एटले छळ प्रपंचवडे परने पासमां नाखवाथी दूर रहेनार.

८. सुदक्षिन्न एटले शुभ दाक्षिणतावंत, उचित प्रार्थनानो भंग नहिं करवावाळो. समय उचितवर्ती सामानुं दील प्रसन्न करनार.

९. लज्जालुओ एटले लज्जाशील, अकार्य वर्जी सत्कार्यमां सहेजे जोडाइ शके एवो मर्यादाशील पुरुष.

१०. दयालुओ एटले सर्व कोइ प्राणी वर्ग उपर अनुकंपा राखनार.

११. सोमदिट्ठि-मध्यस्थ एटले राग द्वेष रहित निष्पक्षपातपणे वस्तुतत्त्वने यथार्थ रीते ओळखी मध्यस्थताथी दोषने दूर करनार.

१२. गुण रागी एटले सद् गुणीनोज पक्ष करनार, गुणनोज पक्ष लेनार.

१३. सत्कथ्य एटले एकांत हितकारी एवी धर्मकथा जेने प्रिय छे एवो.

१४. सुपक्ख एटले सुशील अने सानुकूळ छे कुटुंब जेनुं एवो जाडावळियो.

१५. दीर्घदर्शी एटले मथमथी सारी रीते विचार करीने परिणामे जेमां लाभ समायो होय एवा शुभ कार्यनेज करवावाळो.

१६. विशेषज्ञ एटले पक्षपात रहितपणे गुण दोष, हित अहित, कार्य अकार्य, उचित अनुचित, भक्ष अभक्ष्य, पेय अपेय, गम्य अगम्य विगेरे विशेष वातनो जाण.

१७. वृद्धानुगत एटले परिपक्व बुद्धिवाळा अनुभवी पुरुषोने अनुसरी चालनार, नहिं के जेम आव्युं तेम उच्छृंखलपणे इच्छा मुजब काम करनार.

१८. विनयवंत एटले गुणाधिकनुं उचित गौरव साचवनार सुविनीत.

१९. कृत ज्ञाण एटले कीमाए करेला गुणने कदापि नहिं विसरी जनार.

२०. परहितकारी एटले स्वतः स्वार्थ विना परोपकार करवा मां तत्पर, दाक्षिणतावंत तो ज्यारे तेने कोइ प्रेरणा अथवा प्रार्थना करे त्यारे परोपकार करे अने आतो पोताना आत्मानीज प्रेरणाथी स्व कर्तव्य समजीनेज कोइनी कंइ पण अपेक्षा राख्या विनाज परोपकार कर्या करे एवा उत्तम स्वभावने स्वभाविक रीते धारनार भव्य.

२१. लब्ध लक्ष एटले कोइ पण कार्यने सुखे साधी शके ए
कार्य दक्ष.

हवे उपर कहेला २१ गुणोनुं कंइक सहेतुक ब्यान करवान
उपक्रम करवामां आवे छे. जेम शुद्ध करायेला वस्त्र उपरज रंग जो
इये एवो बराबर चढी शके छे परंतु अशुद्ध एवा मलीन वस्त्र उप
रंग चढी शकतो नथी तेमज उपर कहेला गुण विनाना मलीन आ
त्माने धर्मनो रंग लागतोज नथी. उपर कहेला गुणोवडे विशुद्ध य
येला आत्मानेज धर्मनो रंग चढे छे. वळी जेम खडबचरडी[1] अने
पालीस कर्या विनानी[2] भींत उपर चित्र आवेहूब उठनुं नथी परंत
घठारी मठारीने साफ करेली सरखी भींत उपर चित्र जोइये एवुं
आवेहुब उठी नीकळे छे तेम उपर कहेला गुणोना संस्कार विनाना
असंस्कृत हृदय उपर धर्मनुं चित्र बराबर पडी शकतुं नथी पण उक्त
गुणोथी संस्कारित हृदय उपर सत्य धर्मनुं चित्र बराबर खीली उठे
छे. उक्त गुणोनी प्राप्तिद्वारा भव्य आत्मा सत्य धर्मनो उत्तमोत्तम
लाभ पामी शके छे एथी उपर कहेला सद्गुणोनो खास अभ्यास
करवानी अत्यावश्यकता स्वतः सिद्ध थाय छे, अने तेथीज ते गुण
संबंधी यथी शके तेटली समज लेवी पण जरूरनी छे. एमांज जीवनुं
खरुं हित समायेलुं छे.

१ Rough. २ Unpolished.

१ "क्षुद्र स्वभाववाळो अगंभीर अने उछांछळो होवाथी धर्मने साधी शकतो नथी. ते नथी तो करी शकतो स्वहित के नथी करी शकतो परहित; स्वपरहित साधवानी तेनामां योग्यताज नथी. तेथी स्वपरहित साधवाने अक्षुद्र स्वभावी एवो गंभीर अने ठरेल प्रकृतिवाळोज योग्य अने समर्थ होइ शके छे.

२ हीन अंगोपांगवाळो, नरळा संघयणवाळो, तथा इंद्रियोमां खोडवाळो स्वपरहित साधवाने असमर्थ होवाथी धर्मने अयोग्य कह्यो छे. केमके धर्म साधवामां तेनी खास अपेक्षा रहे छे. ते विना धर्म साधनमां घणीज अडचण आवे छे. तेथी संपूर्ण अंगोपांगवाळो, पांचे इंद्रिय पूरेपुरी पामेलो अने उत्तम संघयणवाळो सुंदर आकृतिवंत प्राणी धर्मने योग्य कह्यो छे. एवी शुभ सामग्रीवाळो जीव शासननी शोभा वधारी शके छे अने सर्वज्ञ भगवाने भाखेला धर्मने सम्यक् पाळी शके छे.

३ प्रकृतिथीज शांत स्वभाववाळो जीव प्रायः पापकर्ममां प्रवृत्ति करतोज नथी अने सुखे समागम करी शकाय एवा शीळा स्वभावने लीधे अन्य आकळा जीवोने पण समाधिनुं कारण थइ शके छे. अर्थात् आकरी प्रकृतिवाळा पण शीळा स्वभाववाळा सज्जनोना समागमथी ठंडी प्रकृतिना थइ जाय छे. तेथी ठंडी प्रकृतिवाळा प्राणी सुखे स्वपरहित साधी शके छे परंतु आकळी प्रकृतिवाळा तेम करवाने असमर्थ होवाथी धर्म साधवाने अयोग्य कह्या छे.

४ ज्ञान विनय अने निर्मळ आचारने सेवनार माणस सर्व जनोने प्रिय थइ शके छे अने ते आलोक विरुद्ध तथा परलोक विरुद्ध कार्यने स्वभाविक रीतेज तजनार होवाथी सम्यग् दृष्टि जीवोने पण मोक्षमार्गमां बहुमान उपजावनार थइ पडे छे. सदाचार सेवी लोकप्रिय पुरुष पोतानी पवित्र कहेणी करणीथी अन्य जनोने पण अनुकरणीय थइ पडे छे, तेवी रीते इच्छा मुजब वर्त्ती अतडो रहेनार माणस कंइ पण विशेष स्वपरहित साधी शकतो नथी.

५ क्रूर माणस क्लिष्ट परिणामथी पोतानुंज हित साधवाने अशक्त छतो परनुं हित शी रीते साधी शके? तेथी ते धर्मरत्नने अयोग्य समजवो. सम परिणामने धारण करनार एवो अनुकंपावान- अक्रूर आत्माज मोक्षमार्ग साधवाने अधिकारी होइ शके छे.

६ आलोक संबंधी तथा परलोक संबंधी दुःखनी विचारणा करनार पाप कर्ममां प्रवृत्ति करतो नथी अने लोकापवादथी पण डरतो रहे छे एवो भवभीरु माणसज धर्मरत्नने योग्य होइ शके छे. परंतु जे निर्भयपणे–लोकापवादनो पण भय राख्या विना स्वच्छंद वर्तन करे छे ते धर्मरत्नने योग्य नथीज.

७ अशठ माणस कोइनी वंचना करतो नथी तेथी ते विश्वासपात्र अने प्रशंसापात्र बनेछे. वळी ते पोताना सद्भावथी उद्यम करेछे तेथी ते धर्मरत्नने योग्य ठरे छे. कपटी माणस तो पर वंचनाथी पो-

साना कुटिल स्वभावने लइ परने अप्रीतिपात्र बने छे तेमज स्वहितथी पण चूके छे माटे ते धर्मने माटे अयोग्य छे.

८ सुदाक्षिण्यतावंत पोतानुं कार्य तजी धनी शके तेटलो बीजा-नो उपगार करतो रहे छे तेथी तेनुं वचन सहु कोइ मान्य गणे छे तेमज सहु कोइ तेने अनुसरीने चाले छे. आवा स्वभावथी गांजे स्वपरहित साधी शकाय छे तेथी ते धर्मरत्नने योग्य छे. जेनामां ए गुण नथी ते स्वार्थसाधक अथवा आपमतलबीयाना उपनामथी निं-दापात्र थाय छे माटे ते धर्मरत्नने अयोग्य ठरे छे.

९ लज्जाशील माणस लगारे पण अकार्य करतां डरे छे तेथी ते अकार्यने दूर तजी सदाचारने सेवतो रहे छे तेमज अंगीकार करेला शुभ कार्यने ते कोइ रीते तजी शकतो नथी. तेथी ते सद्धर्मने योग्य गणाय छे. लज्जाहीन तो कंइपण अकार्य करतां डरतो नथी तेथी ते अशुभ आचारने अनायासे सेवतो रहे छे. गमे तेवा उत्तम कुलमां उत्पन्न थया छतां ते कुळ मर्यादाने तजी देता वार करतो नथी तेथी लज्जाहीन धर्म रत्नने अयोग्य छे.

१० दया ए धर्मनुं मूळ छे अने दयाने अनुसरीनेज सर्व सद्-अनुष्ठान वर्ते छे एम जिन–आगममां सिद्धांत रुपे कहेलुं छे तेथीज सर्वज्ञ भाषित सत्य धर्मनुं यथार्थ आराधन करवाने दयालु होवानी खास जरुर छे अर्थात् दयालुज धर्म रत्नने योग्य छे. दयाहीन कोइ

रीते धर्मने योग्य नथी. समक्ष तथा निदान परिणामवाळानुं सर्व अनुष्ठान निष्फळ थाय छे.

११ मध्यस्थ एटले पक्षपात रहित तथा सौम्य दृष्टि पुरुष राग द्वेष दूर तजीने शांत चित्तथी धर्म विचारने यथास्थित सांभळे छे अने गुणनो स्वीकार तथा दोषनो त्याग करे छे माटे ते धर्मने लायक छे. परन्तु पक्षपात युक्त अविवेकी माणस [illegible] पदार्थी वस्तुतत्त्वनो यथास्थित विचारज करी शकता नथी तो पछी गुणनो आदर अने दोषनो त्याग तो शी रीते करी शके? तेथी पक्षपात बुद्धिथी एकांत खेंचताण करी बेसनार धर्म रत्नने योग्य नथी.

१२ गुणरागी माणस गुणवंतनुं बहु मान करे छे, निर्गुणनी उपेक्षा करे छे, सद्गुणनो संग्रह करे छे अने प्राप्त गुणने सारी रीते साचवी राखे छे. प्राप्त थयेला गुणने मलिन करतो नथी. तेथी ते धर्मने योग्य छे. [illegible] पण पोतानी जेवा लेखे छे तेथी ते [illegible] राग के नथी करतो गुण उपर राग, परंतु उलटो गुणद्वेषी थइ सद्गुणनो पण अनादर करे छे अने आत्म गुणने मलीन करी नाखे छे माटे ते धर्म रत्नने माटे अयोग्यज छे.

१३ विकथा करवाना अभ्यासवडे कलुषित मनवाळो माणस विवेक रत्नने खोइ देछे अने धर्ममां तो विवेकनी खास जरुर छे. तेथी

धर्मार्थी माणसे सत्य प्रिय थवानो अने सत्य-हितकारी वातनेज कहेवानो अथवा सांभळवानो टाळ राखवो जोइये. आवा सत्यप्रिय अने सत्यभाषक जीवथी स्वपरनुं हित सहेजे थाय छे तेथी तेवा गुणवाळाज धर्मरत्नने योग्य छे. विकथावंतथी उभयने हानि पहोंचे छे तेथी ते अयोग्य छे.

१४ जेनो परिवार अनुकूळ वर्तनारो, धर्मशील अने सदाचारने सेववावाळो होय एवो जाडावलियो माणस निर्विघ्नपणे धर्मसाधन करी शके छे. पूर्वोक्त स्वभाववाळा कुटुंबथी धर्मसाधनमां कंइ पण अंतराय आववानो संभव रहेतो नथी केमके एवुं सानुकूळ कुटुंब तो धर्मसाधनमां जोइये तेवी सहाय दइ शके छे. तेथी धर्मशील अने सदाचारवाळा अनुकूळ परिवारवाळो धर्मने दीपाववाने योग्य गणाय छे तेवो प्रतिकूळ आचार विचारवाळा परिवारवाळो योग्य गणातो नथी, केमके तेथी तो धर्म मार्गमां वखतोवखत विघ्न उभा थाय छे. माटे शुद्ध अने समर्थपक्षनी पण खास जरुर छे.

१५ दीर्घदर्शी माणस पूर्वापरनो अथवा लाभालाभ
करी जेनुं परिणाम सारुंज आववानो संभव होय, जे विचार
अने क्लेश अल्प होय अने जे घणा माण तेने प्र
कामनोज आरंभ करेछे. दीर्घदर्शीजनने
म वधारे
थाय होय तेवो
धर्म रत्नने योग्य छे

केमके ते विचारशील अने विवेकवंत होवाथी सफळ प्रवृत्तिने करनारा होय छे. ते कंइपण वगर विचार्युं नहि बनी शके एवुं असाध्य कार्य सहसा आरंभताज नथी. जे कार्य सुखे साधी शकाय एम मालम पडे तेनेज ते विवेकथी आदर करेछे. सहसाकारी बहुधा असाध्य कार्य करवा मंडी जाय छे अने तेमां निष्फळ नीवडवाथी ते पश्चातापनो भागी थाय छे तेथी ते धर्मरत्नने लायक ठरतो नथी.

१८ विशेषज्ञ एटले वस्तुओना गुण दोषने पक्षपात रहितपणे विचारी शके छे तेथी प्रायः तेवा माणसज उत्तम धर्मना अधिकारी कह्या छे. जे अज्ञानतावडे हिताहित, कृत्याकृत्य, धर्माधर्म, भक्ष्याभक्ष्य, पेयापेय के गुणदोष संबंधी बिलकुल अज्ञान छे ते धर्मने अयोग्य छे. केमके ते पोतानुं हित शुं छे तेटलुं समजता पण नथी तेमज हित ... ... अने ... साचववाने पण असमर्थ होवाथी ... ... ... ... ... पशुना जेवा अज्ञान अने अविवेकी जनो धर्मने माटे अयोग्य छे.

१९ परिपक्व बुद्धिवाळा अर्थात् सद्विवेकादिक गुण संपन्न एवा वृद्ध पुरुषो पापाचारमां प्रवृत्ति करतान नथी. एम होवाथी तेवा वृद्धने अनुसरीने चालनार पण पापाचारथी दूरज रहे छे केमके शीलने सोबत प्रमाणे गुण आवे छे, कहेवत छे के 'जेवी सोबत तेवी असर.' तेवा शिष्ट पुरुषोने अनुसारे चालनार धर्मरत्नने योग्य

थाय छे परंतु स्वच्छंदे चालनार माणस कदापि धर्मने योग्य थइ शकतो नथी. केमके ते सदाचारथी तो प्रायः विमुख रहे छे.

१८ सम्यग् ज्ञान दर्शनादिक सर्व सद्गुणोनुं मूळ विनय छे, अने ते सद्गुणो वडेज खरुं सुख मेळवी शकाय छे. माटेज जैनशासनमां विनयवंत-विनीतनने वखाण्यो छे. लौकिकमां पण कहेवाय छे के 'नमो (विनय) वेरीने पण वश करे.' तो पछी शास्त्रोक्त नीति मुजब विनयनो अभ्यास करवामां आवे तो तेना फळनुं तो कहेवुंज शुं? विनयथी सर्व इष्टनी प्राप्ति थाय छे. तेथी इष्टसुखना अभिलाषी जनोए अवश्य विनयनुं सेवन करवुंज जोइये. अविनीत माणस धर्मनो अधिकारी नथीज. केमके ते तेनी अमभ्य वृत्तिथी कंइ पण सद्गुण पेदा करी शकतो नथी, अने उलटो ठेकाणे ठेकाणे क्लेशनो भागी थाय छे.

१९ कृतज्ञ पुरुष धर्मगुरुने तत्त्वबुद्धिथी परोपकारी जाणीने तेनुं बहुमान करे छे. तेथी सम्यग् ज्ञान दर्शनादिक सद्गुणोनि वृद्धि थाय छे तेथी कृतज्ञ माणसज धर्मरत्नने लायक छे. कृतज्ञ माणस उपर सामान्य उपगार कर्यो होय तो तेने पण ते भूलतो नथी तो असाधारण उपगारने करनार उपगारीने तो ते भूलेज केम? कृतघ्न माणस उपगारीए करेला उपगारने विसरी जइ तेनो उलटो अपवाद करवा तत्पर थइ जाय छे. दूध पाइने उछेरेला सापनी जेम कृतघ्न नुकसान करे छे माटे ते धर्मने योग्य नथी.

२० धन्य कृत पुन्य एवो परहितकारी पुरुष धर्मनुं खरुं रह
सारी रीते समजी प्राप्त करीने निस्पृह चित्त छतो पोताना पूर्ण पु
पार्थयोगे अन्य जनोने पण सन्मार्गमां जोडी दे छे. अर्थात् धर्म
खरुं रहस्य जाणनार अने निस्पृहपणे पोतानुं छतुं वीर्य फोरवना
एवा परहितकारी पुरुषोनीज बलिहारी छे. तेवा धन्य पुरुषो स्वपर
हित विशेषे साधी शके छे. तेवा भाग्यशाळी भव्यो धर्मने सारी रीं
दीपावी शके छे तेथी ते धर्मरत्नने अधिक लायक छे. केवळ स्वा
र्थवृत्तिवाळाथी तेवो स्वपर उपगार संभवतो नथी. तेथी निःस्वार्थ
त्ति राखवानी खास जरुर छे. निःस्वार्थी जनो परोपकारने पोता
शुद्ध स्वार्थथी भिन्न समजता नथी. अर्थात् परोपकारने पोतानुं ल
कर्तव्य समजीने कोइनी प्रेरणा विना स्वभाविक रीतेज सेवे छे.

२१ लब्ध लक्ष पुरुष सकळ धर्मकार्यने सुखे समजी शके छे
अने ते दक्ष-चंचळ तथा सुखे केळवी शकाय एवो होवाथी थोड
वखतमांज सर्व उत्तम कळामां पारगामी थइ शके छे. आवो का
दक्ष पुरुष धर्मरत्नने लायक होइ शके छे. परंतु अकुशळ, अशिक्ष
णीय अने मंद परिणामी तेमज अति परिणामी जनो धर्मने लायक
थइ शकता नथी. केमके तेमनी नजर सापेक्षपणे सर्वत्र फरी पहोंती
नथी. तेथी तेओ सत्य धर्मथी बाहेर रह्या करे छे, अर्थात् धर्मना
खरा रहस्यने पामी शकताज नथी. माटे धर्मार्थी जनोए कार्यदक्ष
अने कर्तव्य परायण थवानी पण पूरी जरुर छे."

आ प्रमाणे ए एकवीश गुणोनुं कंइक सहेतुक वर्णन 'धर्मप्रकरण' ग्रंथने अनुसारे करवामां आव्युं छे. ए उपर वर्णवेला गुणो जेमणे संप्राप्त कर्या छे ते भाग्यशाळी भव्य जनो धर्मरत्नने लायक थाय छे. ए एकवीश गुण संपूर्ण जेमने प्राप्त थया छे ते उत्कृष्ट रीते लायक छे. चतुर्थ भागे न्यून गुणवाळा भव्य मध्यम रीत्या लायक छे अने अर्धा भागथी न्यून गुणवाळा भव्यो जघन्य भागे लायक छे. परंतु तेथी पण न्यून गुणवाळा होय तेनो दरिद्रप्राय-अयोग्य समजवाना छे. एम समजीने सर्वज्ञ भाषित शुद्ध धर्मना अभिलाषी जनोए जेम बने तेम उक्त गुणोमां विशेषे आदर करवो योग्य छे. कारण के पवित्र चित्र पण शुद्ध भूमिमांज शोभे छे अने भूमि-शुद्धि उक्त गुणोवडेज थाय छे.

उक्त गुण भूषित भव्य सत्त्वोए शुद्ध धर्मनी प्राप्ति माटे शुद्ध संयमधारी सद्‌गुरु पासे शुश्रुषा पूर्वक धर्मनुं स्वरुप सांभळवा अने तेनुं मनन करवा साथे यथाशक्ति तेनुं परिशीलन करवाने प्रयत्न सेववो जोइये. ते धर्म मुख्यपणे बे प्रकारनो छे. देशविरति धर्म अने सर्व विरति धर्म. देशविरति धर्मना अधिकारी गृहस्थ लोक होइ शके छे अने सर्व विरति धर्मना अधिकारी साधु मुनिराज होइ शके छे. स्थूल थकी हिंसा, असत्य, अदत्त, मैथुननो त्याग अने परिग्रहनुं प्रमाण करवारुप पांच अणुव्रत, दिग् विरमण, भोगोपभोग विरमण अने अनर्थदंड विरमणरुप त्रण गुणव्रत तथा सामायक, देशावगासिक, पौ-

पथ अने अतिथि संविभागरूप द्वादशव्रत गृहस्थ (श्रावक) ने होइ शके छे. साधु मुनिराजने तो सर्वथा हिंसा, असत्य, अदत्त अब्रह्म तथा परिग्रहना परिहारार्थी अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अने असंगतारूप पांच महाव्रतो पाळवा साथे रात्रीभोजननो सर्वथा त्याग करवानो होय छे. (विवेकवंत गृहस्थ पण रात्रीभोजननो त्यागज करे छे.) ते उपरांत साधु मुनिराजने नीचेनी दश शिक्षा सम्यग् रीते पाळवानी होय छे अने गृहस्थने बनी शके तेटला प्रमाणमां ते पाळवानी होय छे.

---

## धर्मनी दश शिक्षा

१ क्षमा अपराधि जीवोनुं अंतःकरणथी पण अहित नहि इच्छता जेम स्वपरहित थाय तेम सहनशीलता राखी उचित प्रवृत्ति या निवृत्ति करवी अने जिन आज्ञानुं पालन करवानो तेनो मर्म समजीने अथवा आत्मानो स्वभाव क्षमा समजीने सहनशीलता धारवी ते.

२ मृदुता—जातिमद, कुळमद, बळमद, प्रज्ञामद, तपमद, रूपमद, लाभमद अने ऐश्वर्यमदनुं स्वरूप सारी रीते समजी तेथी थती हानिने विचारी ते सघळो मिथ्याभिमान तजीने नम्रता याने लघुता धारण करवी. गुणगुणीनो द्रव्य भावथी विनय साचववो, तेमनी उ-

चित सेवा चाकरी करवी तेमनुं अपमान करवाथी सदंतर दूर रहेवुं. विगेरे नम्रताना नियमो ध्यानमां राखीने स्वपरनी परमार्थथी उन्नति थाय एवो सतत ख्याल राखी रहेवुं ते.

३ सरलता—सर्व प्रकारनी माया तजी निष्कपट थइ रहेणी कहेणी एक सरखी पवित्र राखवी. जेम मन, वचन अने कायानी पवित्रता सचवाय, अन्य जनोने सत्यनी प्रतीति थाय तेम प्रयत्नथी स्व उपयोग साध्य राखीने व्यवहार करवो ते.

४ संतोष—विषय तृष्णानो त्याग करी, ते माटे थता संकल्प विकल्पोने शमावी दइ, तुष्ट वृत्तिने धारण करी, स्थिर चित्तथी सम्यग् दर्शन ज्ञान अने चारित्ररुप रत्नत्रयीनुं सेवन करवुं तेमज सर्व पाप उपाधिथी निवर्तवुं ते.

५ तप—मन अने इंद्रियोना विकार दूर करवा तेमज पूर्व कर्मनो क्षय करवा समता पूर्वक बाह्य अने अभ्यंतर तपनुं सेवन करवुं. उपवास आदिक बाह्य तप समजीने समता पूर्वक करवाथी ज्ञान ध्यान प्रमुख अभ्यंतर तपनी पुष्टिने माटेज थाय छे. तेथी ते अवश्य करवा योग्यज छे. तपथी आत्मा कंचनना जेवो निर्मळ थाय छे.

६. संयम—विषय कषायादिक प्रमादमां प्रवर्तता आत्माने नियममां राखवा यम नियमनुं पालन करवुं, इंद्रियोनुं दमन करवुं, कषायनो त्याग करवो अने मन वचन कायाने बनता काबुमां राखवा ते.

७ सत्य—सहुने प्रिय अने हितकर थाय एवुंज वचन विचारीने अवसर उचित बोलवुं, जेथी धर्मने कोइ रीते बाधक न आवे ते.

८ शौच—मन वचन अने कायानी पवित्रता जाळववाने बनतो प्रयत्न सेव्या करवो. प्रमाणिकपणेज वर्तवुं, सर्व जीवने आत्म समान लेखवा. कोइनी साथे अंशमां पण वैर विरोध राखवो नहि. सहुने मित्रवत् लेखवा. तेमने बनतां सहाय आपवी अने गुणवंतने देखी मनमां प्रमुदित थवुं. पापी उपर पण द्वेष न करवो ते.

९ निष्परिग्रहता—जेथी मूर्छा उत्पन्न थाय एवी कोइपण वस्तुनो संग्रह नहि करवो. परिग्रहने अनर्थकारी जाणी तेनाथी दूर रहेवुं, कमलनी पेरे निर्लेपपणुं धारवुं. परस्पृहाने तजी निस्पृहपणुं आदरवुं.

१० ब्रह्मचर्य—निर्मल मन वचन अने कायाथी किंपाकनी जेवा परिणामे दुःखदायक विषयरसनो त्याग करी निर्विषयपणुं याने निर्विकारपणु आदरवुं. विवेक रहित पशुना जेवी कामक्रीडा तजी सुशीलपणुं सेववुं. लज्जाहीन एवी मैथुन क्रीडानो त्याग करी आत्मरति धारवी ते. आ दशविध धर्मशिक्षानुं शुद्ध श्रद्धापूर्वक सेवन करवाथी कोइ पण जीवनुं सहजमां कल्याण थइ शके छे. माटे तेनुं यथाविध सेवन करवानी अति आवश्यकता छे. सम्यग्दर्शन ज्ञान अने चारित्र एज मोक्षनो खरो मार्ग छे.

## ॥ अथ परमातम छत्रीशी. ॥

परम देव परमातमा परम ज्योति जगदीस ॥ परमभाव उरआनकें प्रणमत हुं नीम शीस ॥ १ ॥ एक ज्युं चेतन द्रव्य है, तामें तीन प्रकार ॥ बहिरातम अंतर कह्यो, परमातम पद सार ॥ २ ॥ बहिरातम ताकुं कहै, लखे न ब्रह्म स्वरुप ॥ मगन रहे परद्रव्य है, मिथ्यावंत अनूप ॥ ३ ॥ अंतर आतमा जीव सो, सम्यक दृष्टि होय ॥ चोथें अरु पुनि बारमे, गुणथानक लों सोय ॥ ४ ॥ परमातम परब्रह्मको, प्रगट्यो शुद्ध स्वभाव ॥ लोकालोक प्रमाण सब, झलके तिनमें आय ॥ बाहिर आतम भाव तज, अंतर आतमा होय ॥ परमातम पद भजत है, परमातम वहे सोय ॥ ६ ॥ परमातम सोइ आतमा, अवर न दुजो कोइ ॥ परमातमकुं ध्यावतें, एह परमातम होय ॥ ७ ॥ परमातम परब्रह्म है, परम ज्योति जगदीश ॥ परसुं भिन्न निहारिये, जोइ अलख सोइ इश ॥ ८ ॥ जे परमातम सिद्ध में, सोहि आतमा माहिं ॥ मोह मयल दृग लगी रह्यो, ताथें सूझत नांहि ॥ ९ ॥ मोह मयल रागादिके, जा छिन कीजे नाश ॥ ता छिन एह परमातमा, आपहि लहे प्रकास ॥ १० ॥ आतम सो परमातमा, परमात सोइ सिद्ध ॥ बिचकी दुविधा मीट गइ, प्रगट भइ निज रिद्ध ॥ ११ ॥ मैंहि सिद्ध परमातमा, मैंहि आतमराम ॥ मैंहि ज्ञाता ज्ञेयको, चेतन मेरो नाम ॥ १२ ॥ मैंहि अनंत सुखको धनी, सुखमें मोहि सोहाय ॥ अविनाशी आणंदमय, सोऊं त्रिभुवन

गाय ॥ १३ ॥ शुद्ध हमारो रुपहे, शोभित सिद्ध समान ॥ गुण अनंत करी संयुत, चिदानंद भगवान ॥ १४ ॥ जैसो सिवखेत तहिवे वसे, तेसो या तनमांहि ॥ निश्चय दृष्टि निहारतां, फेर रंच कछु नांहि ॥ १५ ॥ करमनके संजोग ते, भए तीन प्रकार ॥ एक आतमा द्रव्यकुं, करम नटावत हार ॥ १६ ॥ कर्म संघाते अनादिके, जोर न कछु बसाय ॥ पाइ कला विवेककी, राग द्वेष बिन जाय ॥१७॥ करमनकी जर राग हे, राग जरे जर जाय ॥ प्रगट होत परमातमा, भाइ सुगम उपाय ॥ १८ ॥ काहेकुं भटकत फीरे, सिद्ध होनके काज ॥ [illegible] भाइ सुगम इलाज ॥ १९ ॥ परमातम पदको [illegible] प्रीति सों [illegible] नमत बनारसी जाय ॥ २१ ॥ राग द्वेषकी प्रीति तुम, भुल करो जन रंच ॥ परमा- [illegible] ॥ २२ ॥ [illegible] ॥ आतम [illegible] गु- [illegible] राग निवार ॥ [illegible] त्याग वातकी वात इह, ताहि देह चताय ॥ ता परमातम पद [illegible]

[illegible] तम सिद्ध भगवान सिद्धनेयमा [illegible] राग छे, [illegible] अने त्यागिज परमात्मपद प्राप्त थवानुं [illegible] निष्कर्ष

राग द्वेष नम भाइ ॥ २५ ॥ राग द्वेष त्याग विनु, परमातम पद नाहिं ॥ कोटि कोटि जप तप करे, सब अकारथ जाय ॥ २६ ॥ दोष आतमाकुं इह, राग द्वेषको संग ॥ जैसे पास मजीठमें, वस्त्र और हि रंग ॥ २७ ॥ तैसे आतम द्रव्यकुं, राग द्वेषके पास ॥ कर्म रंग लागत रहे, कैसे लहे प्रकाश ॥ २८ ॥ इण पर मनको जीतवो, दुर्धर बात हे वीर ॥ जरे खोदे विनुं नहि मिटे, दुःख जात ने पीरे ॥ २९ ॥ मिथ्यात्वको के कीयो, ए मिटवे के नाहि ॥ ध्यान अग्नी परकाशके, होम देहि ते माहि ॥ ३० ॥ ज्युं दारु के गंजकुं, नर नहि शके उडाय ॥ मनके आग संजोग ते, छिन एकमें उड जाय ॥ ३१ ॥ देह सहित परमातमा, एह अचरिजकी बात ॥ राग द्वेषके त्याग ते, कर्म शक्ति जरी जात ॥ ३२ ॥ परमातम के भेद द्वय, निकल सकल परवान ॥ सुख अनंतमें एकसे कहेवे के द्वय थाय ॥ ॥ ३३ ॥ भाइ एह परमातमा, सोहे तुममें याहि ॥ अपनि भक्ति संभारके लिखो वग देताहि ॥ ३४ ॥ राग द्वेष कुं त्यागके, धरो परमातम ध्यान ॥ युं पावे सुख शाश्वत, भाइ इम कल्यान ॥३५॥ परमातम छत्रीशी को, पढियो प्रीति संभार ॥ चिदानंद तुम मनि भारी आतम के उद्धार ॥ ३६ ॥ इति.

१ मूळ. २ पीड, आपदा. ३ मिथ्यात्वनो वर्ग. देह मात्र धारवाथी वेर बळवानुं नथी. ते माटे तो मजबुत पुरुषार्थनी जरूर छे. ४ मणारो, अल्प मात्र.

नांखो छो तेज दोषोने अन्य तीर्थ नायको आपनी-अमूपावडे जाणे दोय नहिं तेम स्वयं स्वीकारीने सार्थक (सफळ) करे छे. ते आश्चर्यकारक वात छे. केमके गमे तेणे पण दुष्ट राग द्वेषादिक दोषो तो दूरज करवा योग्य छे. छतां तेमणे तो तेज दुष्ट दोषोनो आग्रह पूर्वक स्वीकारज कर्यो लागे छे, एज महा आश्चर्यकारक छे.

५. हे नाथ ? वस्तु स्वरुपने यथास्थित बतावता आप स्हारे आडंबर रचना नथी. बीजा वागाडंबरी तो कइक कपोल कल्पित वातो लावीने खडी करे छे तेवा मिथ्याडंबरी-महा पंडितोथी सर्युं !

७. क्षणे क्षणे शुभ ध्यानना बळथी त्रण जगतने, नित्य मति अत्यंत अनुग्रह करता आप विद्यमान छतां अन्यजनो आप विना नाम मात्र दयाने दाखवनारा बीजा बुद्धादिक देवनो शा माटे आश्रय करता हशे ? खरेखर ते तेओनी शुद्ध देव तत्वादिकनी खरी परीक्षानी गंभीर खामीने लीधेज थवुं संभवे छे. शुद्ध तत्त्व परीक्षको विवेकना सद्भावे सन्य वस्तुनो अनादर करी शकेज नहिं.

७. पोतेज कुमार्गने लवता छता अन्य जनोने पण एवा दुष्ट दोषना भागी करे छे; बीजाने पण एवीज ठगाइ शीखवे छे; अने सन्मार्गगामीनो, सन्मार्गना जाणनो, तथा सन्मार्ग दर्शकनो, केवळ गुणद्वेषथी अंध थयेला साक्षात् अनादर करे छे; एज खेदकारक छे.

८. जो आकाशमां तगतगता खजवा सहस्र कीरणवाळा सूर्यनो पराभव करी शके, तोज अन्य दर्शनी जनो आपना सर्वोत्तम

शासननो पराभव करी शके. सर्वदर्शी एवा आपना स्याद्वाद शासन-नो कोइ वयारे पण पराभव करवा समर्थ थइ शकेज नहिं.

९. आश्रय करवा योग्य अने पवित्र एवा आपना शासनमां जे शंका अथवा गेरविश्वास करे छे; ते खरेखरा स्वादिष्ट अने स्व-हितकारी पथ्यमांज संदेह अने गेरविश्वास करे छे.

१०. अमे परीक्षा पूर्वक कहिये छीए के, हिंसादिक असत् कर्मनो उपदेश करवाथी असर्वज्ञ कथित होवाथी तथा निर्दय अने दुर्बुद्धिजनोए आदर करेलो होवाथी आपना सिवायना अन्यना आगम अप्रमाण छे आ वात अमे निष्पक्षपातपणे विचारीने क-हिये छीए.

११. हितोपदेश करवाथी, सर्वज्ञ प्रणीत होवाथी, मोक्षाभिला-षी उत्तम साधुजनोए स्वीकारेल होवाथी, अने पूर्वापर अर्थ विषये विरोध रहित होवाथी आपना आगमोज उत्तम जनोए आदरवा योग्य-प्रमाणभूत छे. अन्य असर्वज्ञ कथित आगमो तेवा प्रमाणभूत नहि होवाथी मोक्षार्थी जनोए आदरवा योग्य नथी.

१२. आपना चरणमां सुरेन्द्रनुं लुंठन अन्य दर्शनी मानो या न मानो किंतु आपनुं यथावस्थित वस्तुनुं कथन तेमनाथी शी रीते निषेधी शकाशे ! अविरोधि वचननुं उत्थापन करवा कोइ पण समर्थ थइ शकतुंज नथी.

१३. छतां जे आ लोको आपना सर्वोत्तम शासननो अनाद
करे छे; यातो तेमां गेरविश्वास धारे छे; ते दुषमा काळनो दोष
अथवा तो ते तेमना खरेखर उदय प्राप्त थयेला अशुभ कर्मनो
दोष छे.

१४. हजारो गमे वर्षो सुधी तप करो, तथा युगनायुग सुधी
योगनी उपासना करो, तोपण आपना पवित्र मार्गने पकड्या विन
मोक्षनी इच्छा राखता छतां ते यापडा मोक्षने पामता नथी. माटे मो
क्षार्थी सज्जनोए शुद्ध तत्त्वने सम्यग् समजी तेनोज आदर करवो
युक्त छे. शुद्ध तत्त्वने बराबर ओळखीने तेनो पूर्ण प्रेमथी स्वीकार
करी तेमांज तन्मय थइ रहेनार अवश्य मोक्षने पामी शके छे. आप
नी पवित्र भक्तिथी भव्य जनोने दिव्य चक्षुवडे अविरुद्ध मार्गनुं
यथार्थ भान तथा प्रतीति थाओ ! तथास्तु ! !



# ज्ञानसार सूत्र रहस्य-प्रस्तावना.

---

जे सहज स्वरूप साधवाने जेवा लक्षथी जिनेश्वर देवे जिन मतानुयायी जनोने स्व स्व योग्यतानुसारे धर्म साधन करवा फरमाव्युं छे तेनुं संक्षेपथी पण निचोडरूपे स्वरूप आ ग्रंथ उपरथी वारीकीथी जोतां समजाशे. तेथी तत्त्व गवेषी जनोज आ ग्रंथना अधिकारी छे.

आ ग्रंथमां जूदा जूदा ३२ अगत्यना विषयो सचोट युक्ति पूर्वक समजाववामां आव्या छे. ने ते विषयोनुं मध्यस्थताथी मनन करतां कोइपण भव्यात्मा विषय-कामनादिकथी व्यावृत्त थइ सहेजे निवृत्ति मार्गे चडे एवुं तेमां सामर्थ्य छे. रागादिक अंतरंग वैरी मात्रनो जय करनार जिनेश्वर देव आत्म कल्याणार्थीओने केवो सन्मार्ग उपदिशे छे, ते आवा ग्रंथथी सहेजे समजी शकाय छे. आ ग्रंथ तत्त्वज्ञाननो एक नमूनो छे. यद्यपि जैनदर्शनमां तत्त्वज्ञान संबंधी सेंकडो ग्रंथो विद्यमान छे, तोपण ते सर्वेमां जे कंइ वक्तव्य छे तेनुं अत्र दोहनरूपे

कथन करेलुं छे, एम उक्त ग्रंथना नाम तथा तद् अंतरगत विष
उपरथी समजी शकाय छे. आ विषयोनुं स्वरुप एकाएक तेना सा
संस्कार विना वांचवा मात्रथी समजी शकाय एम नथी माटे ते
मनन करवा अने तेम करी जरुर जणाय त्यां गुरु गम्य लही स
जवा दरेक कल्याणार्थीने प्रथम भलामण छे. निश्चय अने व्यवहार
बंने मार्ग जिनोपदिष्ट छे. व्यवहार मार्ग थइने निश्चय मार्ग सांधी श
काय छे. शुद्ध ज्ञान दर्शन चारित्रमां एकता पामी–तन्मय थइ ज
ए निश्चय मार्ग छे. अथवा विभावने वमी–परस्पृहाने तजी स्वभा
रमणी थवुं, स्वरुपस्थ थइ रहेवुं, तेज निश्चय मार्ग छे; तेने पमाडना
व्यवहार मार्ग छे. ते व्यवहारनी उपेक्षा करनार उभय भ्रष्ट थायछे
जे माटे आ ग्रंथकारज अन्य स्थळे कहे छे के—

निश्चय दृष्टि हृदय धरीजी, जे पाळे व्यवहार ॥
पुन्यवंत ते पामशेजी, भव समुद्रनो पार.
॥ मन मोहन जिनजी० ॥

आ अपूर्व ग्रंथना आदर पूर्वक अभ्यासथी भव्यात्माओ अक्षय
सुखना अधिकारी थाओ ! एम इच्छी आ प्रस्तावना पूर्ण करुं छुं.

लेखक स्वपर हितकांक्षी,
**कर्पूरविजयजी.**

# श्री जैनहितोपदेश भाग ३ जो.

## ॥ ज्ञानसार सूत्र ॥

रहस्यार्थ साथे.

१ पूर्णता—अष्टक.

ऐंद्र श्री सुख मग्नेन ॥ लीलाऽग्नमिवाखिलम् ॥
सच्चिदानंदपूर्णेन ॥ पूर्णं जगदवेक्ष्यते ॥ १ ॥
पूर्णता या परोपाधेः ॥ सा याचितक मंडनं ॥
या तु स्वाभाविकी सैव ॥ जात्यरत्न विभानिभा॥२॥
अवास्तवी विकल्पैः स्यात् ॥ पूर्णताब्धे रिवोर्मिभिः॥
पूर्णानंदस्तु भगवाँ ॥ स्तिमितो दधि सन्निभः ॥ ३ ॥
जागर्त्ति ज्ञान दृष्टि श्चेत् ॥ तृष्णा कृष्णाऽहिजांगुली ॥
पूर्णानंदस्य तत्किंस्या ॥ दैन्य वृश्चिक वेदना ॥ ४ ॥
पूर्यन्ते येन कृपणा ॥ स्तदुपेक्षैव पूर्णता ॥
पूर्णानंद सुधा स्निग्धा, दृष्टिरेषा मनीषिणाम् ॥५॥

अपूर्णः पूर्णतामेति, पूर्यमाणस्तु हीयते ॥
पूर्णानंद स्वभावोऽयं ॥ जगदद्भुत दायकः ॥ ६ ॥
परस्वत्व कृतोन्माथा ॥ भूनाथा न्यूनतेक्षिणः ॥
स्वस्वत्व सुख पूर्णस्य ॥ न्यूनता न हरेरपि ॥ ७ ॥
कृष्णेपक्षे परिक्षीणे ॥ शुक्ले च समुदंचति ॥
द्योतेते सकलाध्यक्षा ॥ पूर्णानन्द विधोः कला ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. इंद्रनी साहेबी जेवा सुखमां मग्न थयेलो जीव जेम जगत मात्रने सुखमय देखे छे तेम सहज आत्मसुखथी पूर्ण पण जगत मात्रने पूर्णज देखे छे; जेम संपूर्ण सुखी सर्वने सुखमय देखे छे, तेम सच्चिदानंद पूर्ण दृष्टि पण सर्वने पूर्णज देखे छे. अथवा आत्मानी सहज संपत्ति संबंधी स्वाभाविक सुखमां मग्न थयेल शुद्ध-ज्ञानानंदी पुरुष, आ समस्त जगतने इंद्र-जाल तुल्य कल्पित क्षणिक पुद्गलिक सुखमां मग्न थइ रहेल देखी, तेथी उदासीन-विरक्त थइ रहे छे. कल्पित पुद्गलिक पूर्णतानो परिहार करनार प्राणी सहज स्वाभाविक पूर्णता पामी शके छे.

२. परउपाधिवाळी पूर्णता कोइना मागी लावेला घरेणा जेवी

छे अने स्वभाविक पूर्णता तो जातिवंत रत्ननी कांति जेवी छे. उपाधिमय खोटी मानी लीधेली पूर्णता चिर स्थायि नहि होवाथी क्षणिक छे, अने खरी आत्मिक पूर्णता तो चिर स्थायी होवाथी अविहड छे. पहेलीने पुंठ देवाथी बीजी खरी पूर्णता पामी शकाय छे.

३. समुद्रमां मोजांनी जेम विकल्प तरंगथी मानेली पूर्णता खोटी छे अने तेवा विकल्प रहित खरी पूर्णतावाळा महजानंदी सत्पुरुष तो शान्त महासागर जेवाज निश्चल होय छे. खोटी पूर्णता तोफानी समुद्र जेवी हालकल्लोलवाळी छे तेथी विश्वास राखवा योग्य नथी अने खरी पूर्णता तो शान्त महासागर जेवी निश्चल होवाथी सर्वदा विश्वासपात्र तथा आदरवा योग्यज छे पूर्ण अधिकारीनेज ते प्राप्त थाय छे.

४. तृष्णारूपी काळानागनुं झेर कापवा जांगुली मंत्र जेवी ज्ञानदृष्टि जेने जागी छे एवा पूर्णानंदी पुरुषने दीनतारूपी वींछीनी वेदना शा हीसाबमां छे? खरी वात छे के जेणे तृष्णाने समूळगी छेदी नाखी छे तेने परनी दीनता करवानुं कांइपण प्रयोजन रहेतुं नथी, तृष्णाना तरंगमां तणातानेज परनी दीनता करवी पडे छे.

५. कृपण लोको जेनाथी संतोष माने छे एवी पुद्गलीक वस्तुओनी उपेक्षा करवी तेज साची पूर्णता छे. विवेकी पंडितनी दृष्टि पूर्ण आनंद अमृतथी भरेली होय छे. एवा स्वाभाविक गुणथी कृपण लोको हंमेश कमनसीब रहे छे.

६. उपाधिथी रहित पुरुषज सहज पूर्णता पामे छे, पण उपाधिग्रस्त तो तेथी रहितज रहे छे, एवो पूर्णानंदनो सहज स्वभाव जगतने आश्चर्यकारक लागे छे.

७. परने पोतानुं मानवारूप मोहथी उन्मत थएला पृथ्वीपतियो न्युनतानेज देखे छे, गमे तेटली संपत्तिथी संतोष पामताज नथी अने आत्माना स्वभाविक ज्ञानादिक गुण रत्नोनेज पोताना गणी पूर्ण सुख पामेला पुर्णानंदी पुरुष तो इंद्र करतां कोइ रीते न्युन नथीज पुर्णानंदी पुरुष सदा सहजानंदमां मग्नज रहे छे.

८ जेम कृष्णपक्षनो क्षय थये छते अने शुक्लपक्षनो उदय थये छते चंद्रमानी कला सर्व देखे तेवी रीते खीलवा मांडे छे, तेम सर्व पुद्गल परावर्त्तननो अंत थये छते अने चरम पुद्गल परावर्तन मात्र शेष रह्ये छते असत् क्रियानो त्याग पूर्वक सत् क्रियारुचि जागृत थतां सहजानन्द कलानी अनुक्रमे अभिवृद्धिद्वारा अंते पूर्णानंदचंद्र प्रगटे छे.

पूर्णानंदी पुरुष चंद्रनी पेरे साक्षात् स्वभाविक सुख-चंद्रिकाने अनुभवी अनेक भव्य चकोरोने आनंददायक थइ शके छे. भव्य चकोरो पूर्णानंद चंद्रना वचनामृतनुं पान करी करीने पुष्ट बनी आनंद मग्न थइ जाय छे.

---

॥ २ ॥ मग्नता—अष्टक. ॥

प्रत्याहृत्येंद्रिय व्यूहं ॥ समाधाय मनो निजम् ॥
दधच्चिन्मात्र विश्रांतिं मग्न इत्यभिधीयते ॥ १ ॥
यस्य ज्ञान सुधासिंधौ, परब्रह्मणि मग्नता ॥
विषयांतर संचार, स्तस्य हालाहलोपमः ॥ २ ॥
स्वभाव सुख मग्नस्य, जगत्तत्त्वावलोकिनः ॥
कर्तृत्वं नान्य भावानां, साक्षित्वमवशिष्यते ॥ ३ ॥
परब्रह्मणि मग्नस्य, श्लथा पौद्गलिकी कथा ॥
कामी चामी करोन्मादाः, स्फारा दारादराः कत्र ॥ ४ ॥
तेजो लेश्या विवृद्धिर्या, साधोः पर्याय वृद्धितः ॥
भाषिता भगवत्यादौ, सेत्थं भूतस्य युज्यते ॥ ५ ॥
ज्ञान मग्नस्य यच्छर्म, तद्वक्तुं नैव शक्यते ॥
नोपमेयं प्रियाश्लेषे, नापि तच्चंदनद्रवैः ॥ ६ ॥
शम शैत्य पुषो यस्य, विप्रुषोपि महाकथा ॥
किं स्तुमो ज्ञान पीयूषे, तत्र सर्वांग मग्नता ॥ ७ ॥

यस्य दृष्टिः कृपा वृष्टिः गिरः शमसुधा किरः ॥
तस्मै नमः शुभ ज्ञान-ध्यान मग्नाय योगिने ॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. पुद्गलानंदीपणुं तजी दइ पांचे इंद्रियो उपर काबु मेळवी पोताना मनने समाधिमां स्थापी केवळ ज्ञानामृतनुंज सेवन करनार पुरुष स्वभाव मग्न थयो कहेवाय छे. ज्यां सुधी जीव पोताना मन तथा इंद्रियोने पोतेज वश छे त्यां सुधी ते विभावमां मग्न छे. विभावनो त्याग करनार स्वभावने पामी अनुक्रमे तेमां मग्न थइ शके छे माटे मन तथा इंद्रियोने वश करवा प्रमाद रहित पवित्र ज्ञानामृतनुंज सेवन करवा अहोनिश उजमाळ थइ रहेवुं युक्त छे.

२ ज्ञानामृतना सागर जेवा परब्रह्म-परमात्म स्वरूपमां जे मग्न थयेल छे तेने बीजी बाबत हलाहल झेर जेवी लागे छे. जेणे क्षीर समुद्रना जळनुं पान कर्युं होय तेने खारा जळथी तृप्ति केम वळे? जेणे शान्तरसनुं पान कर्युं तेने विषयरस केम गमे?

३. सहजानंद सुखमां मग्न अने जगत स्वरूपने जोनारने परभावनुं कर्तापणुं घटतुं नथी. तेने तो फक्त सर्वभावमां साक्षीपणुंज होवुं घटे छे. सर्व परभावमां तटस्थपणुं त्यजीने कर्तापणुं करता जता

स्वभाव हानि थाय छे माटे मोक्षार्थी जीवने सर्वत्र कर्तृत्व अभिमान सर्वथा त्यजी तटस्थपणुंज आदरवुं युक्त छे.

४. परब्रह्ममां मग्न थयेल महापुरुषने पुद्गल संबंधी कथाज प्रिय लागती नथी. तो अनर्थकारी सुवर्णादिक द्रव्यनो संचय के मनोहर स्त्रीयोमां आसक्ति तो होयज शानी? स्वरुप सुखमां मग्न थयेलने कनक के कामिनी व्हालां लागतांज नथी.

५. जेम जेम दीक्षानो पर्याय वधतो जाय छे तेम तेम साधु पुरुषने चित्तसमाधिमां वधारो थतोज जाय छे एम भगवती सूत्रादिकमां कह्युं छे ते आवा स्वरुप मग्न साधुओमांज घटमान थाय छे. कह्युं छे के १२ बार मासनी दीक्षावाला मुनि अनुत्तर विमानवासी देवना सुखने उल्लंघी जाय छे. ते देव करतां पण आवा मुनि अधिक सुखी होय छे. कारण के दीक्षा वृद्धिथी तेमनी लेश्याशुद्धि थती जाय छे. अने निर्मल लेश्या योगे चित्तनी अधिक प्रसन्नता होय छे, जेथी स्वभाविक सुखमां वधारो थतो जाय छे. १२ मासमां आटलुं सुख थाय छे तो अधिकाऽधिक दीक्षा पर्यायनुं तो कहेवुंज शुं? प्रबल शान्त वाहितावडे केवल निजस्वरूपमां मग्न थइ रहे छे.

६ ज्ञानामृतमां मग्न थयेलाने जे सुख संभवे छे ते सुखथी कदी अकाय तेवुं नथी. प्रियानुं प्रेमालिंगन के चंदननो रस तेवी शीतलतानुं सुख आपी शकेज नहिं. केमके प्रथमनुं सुख सत्य स्वभाविक

अने अतींद्रिय छे अने मिथ्यादिकनुं सुख क्षणिक कृत्रिम अने इंद्रिय गोचर होवाथी विभाविक अने असत्य भ्रमात्मक छे.

७. सहज स्वभाविक शीतलताने पुष्टि करनार ज्ञानामृतना लेश मात्रनुं सुख अपार छे. तो तेमां सर्वांशे निमग्न थइ रहेनार महापुरुषना महिमानुं तो कहेवुंज शुं ?

८. जेनी दृष्टिमांथी करुणारस वर्षी रह्यो छे अने जेनां वचन समतारूपी अमृतनुं सिंचन कर्या करे छे एवा शुभ ज्ञान अने ध्यानमां मग्न रहेता महापुरुषने नमस्कार ! जेनी दृष्टिमां करुणा भरेली छे, तेमज जेनी वाणी अमृत जेवी मीठी अने शीतल छे, तेने नमस्कार!

---

॥ ३ ॥ स्थिरता—अष्टक ॥

वत्स किं चंचल स्वांतो, भ्रांत्वा भ्रांत्वा विषीदसि ॥
निधिं स्व सन्निधावेव, स्थिरता दर्शयिष्यति ॥ १ ॥
ज्ञान दुग्धं विनश्येत, लोभ विक्षोभ कूर्चकैः ॥
आम्ल द्रव्यादिवाऽस्थैर्या, दिति मत्वा स्थिरो भव ॥२॥
अस्थिरे हृदये चित्रा, वाङ्‌नेत्राकार गोपना ॥
पुंश्चल्या इव कल्याण, कारिणी न प्रकीर्तिता ॥ ३ ॥

अंतर्गतं महाशल्य, मस्थैर्यं यदि नोध्धृतम् ॥
क्रियौपधस्य को दोप, स्तदा गुण मयच्छतः ॥ ४ ॥
स्थिरता वाङ्मनः काये, येषा मंगां गितां गना ॥
योगिनः समशीलास्ते, ग्रामेऽरण्ये दिवा निशि ॥ ५ ॥
स्थैर्यं रत्न प्रदीपश्चे, द्दीप्रः संकल्पदीपजैः ॥
तद्विकल्पैरलं धूमै, रलं धूमैस्तथाश्रवैः ॥ ६ ॥
उदीरयिष्यसि स्वांता, दस्थैर्यं पवनं यदि ॥
समावे धर्म मेघस्य, घटां विघटयिष्यसि ॥ ७ ॥
चारित्रं स्थिरता रूप, मतः सिद्धेष्वपीष्यते ॥
यतं तां यतयो वश्य, मस्या एव प्रसिद्धये ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. स्थिरता आदर्या विना स्वभाविक सुख संप्राप्त थतुं नथी. संपूर्ण स्थिरताना बलेज स्वभाव मग्न थाय छे अने एवा स्वरुप मग्न महापुरुषज पूर्णानंद पामी शके छे. ते विना तो जीव ज्यां त्यां सुखनी भ्रांतिथी मात्र भम्याज करे छे माटे गुरुमहाराज शिष्यने स्थिरता आदरवा उपदेश आपे छे के हे वत्स, तुं अस्थिर चित्तथी अनेक

भ्मले भटकी भटकीने शा माटे खेद धारण करे छे? फक्त अ
रतानु सेवन करवाथी तने सर्व समृद्धि ताग घरमांज देखाशे. वि
रता विना अनंत गुणनिधान स्व समीपे छतां देखी शकातो नथी.

२. जेम खटाशथी दूध फाटी जइ विनाश पामे छे, तेम
स्थिरता योगे थता अनेक संकल्प विकल्पोथी ज्ञान गुण क्षोभ पा
विनाश पामे छे. अने स्थिरता योगे ज्ञान गुणनी वृद्धि थाय छे
समजीने तुं स्थिर था.

३. चित्त अस्थिर छते करवामां आवती अनेक प्रकारनी वि
या कल्याणकारी थती नथी. जेम व्यभिचारिणी स्त्री चतुराइ भरे
वचन बोले छे. अने घुंमटो ताणीने चाले छे छतां अवळी चाल
तेवी चेष्टा तेणीने हितकारी नथी. तेम चपल चित्तवाळानी पण वि
विध क्रिया आश्चर्या जाणवी. पतिव्रता स्त्रीनी पवित्र आशयवाळ
क्रियानी पेरे स्थिरतावंतनी सर्व उचित क्रिया लेखे पडे छे.

४. ज्यां सुधी अस्थिरतारूपी अंतरनु भारे शल्य उद्धर्यु न
त्यां सुधी गमे तेवी उत्तम क्रिया पण यथेष्ट फल आपी शकशे नहीं.
जेम शरीरनी शुद्धि कर्या बाद लीधेलुं औषध तत्काल गुण करी शके छे
तेम अस्थिरता वाळाना अनुष्ठान आश्रयी पण समजवुं.

५. जेमने मन वचन अने कायावडे संपूर्ण स्थिरता व्यापी ग
छे तेवा योगी पुरुषोने गाममां के वनमां दिवसमां के रात्रिमां सम

भाव वर्ते छे. जेमने सर्वांगे स्थिरता थइ छे तेवा महापुरुषने सर्वत्र समपरिणामज वर्ते छे. खरुं कल्याण पण तेमनुंज थाय छे.

६. जो घटमां एक स्थिरता प्रगटे तो अनेक प्रकारना मलीन संकल्प विकल्प स्वतः उपशमे. केमके मलीन संकल्प विकल्पो अस्थिर मनमांज प्रभवे छे. जेम देदीप्यमान रत्ननो दीपक मेहेलमां प्रगट्यो होय, तो धूमाडावडे मंदिरने श्याम करी नांखे एवा कृत्रिम दीवा करवानुं प्रयोजनज न रहे, तेम जो मनमंदिरमां एक स्थिरता गुण प्रगट थाय तो तेमां अन्यथा उठता अनेक प्रकारना संकल्प विकल्प स्वयं उपशम पामे अने आत्मानी सहज ज्ञान ज्योति स्वाधीनपणे प्रसरे जेथी सर्व भावने हस्तामलकनी पेरे देखी शकाय.

७. हे वत्स, जो तुं स्थिरतानो त्याग करीने अस्थिरतानी उदीरणा करीश तो तारी घणी मेहेनतथी साधेली समाधि ढोलाइ जशे. जेम प्रबल पवनना योगे मेघघटा विखराइ जाय छे तेम संकल्प विकल्प करवाथी पूर्वे महा परिश्रमथी पेदा करेली समाधिनो लोप थइ जाशे. माटे जेम बने तेम सर्व संकल्प विकल्पने शमाविने स्थिरता योगे समाधि सुखमांज मग्न रहेवुं उचित छे. अस्थिरता करवाथी तो प्राप्त थयेली समाधिनो पण नाश थइ जाय छे.

८. आत्म गुणमांज स्थिरता करवी तेनुं नाम भाव चारित्र छे. एवुं निश्चय चारित्र तो सिद्ध भगवानमां पण वर्ते छे. एटले के सिद्ध

भगवाने पण स्थिरता—चारित्रनो संपूर्ण स्वीकार करेलो छे. एम समजीने स्थिरता गुणने प्रगट करवा माटे सर्व मुनियोए अवश्य उद्यम करवो युक्त छे. स्थिरता गुण विनानु चारित्र पण निष्फलप्रायज छे.

---

॥ ४ ॥ निर्मोह—अष्टक ॥

अहंममेति मंत्रोऽयं, मोहस्य जगदान्ध्यकृत् ॥
अयमेवहि नञ् पूर्वः, प्रतिमंत्रोऽपि मोहजित् ॥१॥
शुद्धात्मद्रव्य मेवाऽहं, शुद्ध ज्ञानं गुणो मम ॥
नान्योऽहं न ममान्ये चे, त्यदो मोहास्त्र मुल्वणम्॥२॥
यो न मुह्यति लग्नेषु, भावेष्वौदयिकादिषु ॥
आकाशमिव पंकेन, नासौ पापेन लिप्यते ॥ ३ ॥
पश्यन्नेव परद्रव्य, नाटकं प्रतिपाटकम् ॥
भवचक्र पुरस्थोऽपि, नामूढः परि खिद्यते ॥ ४ ॥
विकल्प चषकै रात्मा, पीत मोहासवो ह्ययम् ॥
भवोच्चताल मुत्ताल, प्रपंच मधितिष्ठति ॥ ५ ॥
निर्मल स्फटिक स्येव, सहजं रूपमात्मनः ॥
अध्यस्तोपाधि संबंधो, जड स्तत्र विमुह्यति ॥ ६ ॥

अनारोप सुखं मोह, त्यागादनुभवन्नपि ॥
आरोप प्रिय लोकेषु, वक्तुमाश्चर्यवान् [illegible] ॥ ७ ॥
यश्चिद्दर्पण विन्यस्त, समस्ताचार चारुधीः ॥
क नाम स पर द्रव्ये, ऽनुपयोगि निमुह्यति ॥ ८ ॥

---

॥ रहस्यार्थ ॥

१. हुं अने मारुं ए मोहनो महामंत्र छे. [illegible] आंधळुं कर्युं छे. पण जो तेनी पूर्वे [illegible] " नहि हुं अने नहि मारुं " एवो प्रतिमंत्र [illegible] मोहनोज पराजय थाय छे. मोहे पोताना [illegible] करी मेळवेलुं छे पण जो सद्गुरु द्वारा [illegible] समूळगो मोहनोज पराभव थइ शके छे. [illegible] माटे पोताथीज ए प्रतिमंत्रनेज शरणे रहुं छुं. [illegible] गाथी जाते छेवटथी उक्त मंत्र सिद्ध थइ शके छे.

२. शुद्ध आत्मद्रव्य एज हुं छुं [illegible] ज्ञानदर्शनमय छे. पण आ देह ए हुं [illegible] नथी एवी शुद्ध समज [illegible]

३. गमे तेवा संयोगोमां जे समता धारी राखी मुंझाता नथी ते आकाशनी जेम पाप पंकथी लेपाताज नथी. सम विषम संयोगोमां मुंझाइ जे संकल्प विकल्पने वश थइ आर्त्तध्यानमां पडी जाय छे तेज पाप पंकथी लेपाय छे.

४. संसारमां रह्या छतां ठेकाणे ठेकाणे संसारनुं नाटक जोइने जे खेद पामता नथी तेवा मध्यस्थ दृष्टि मोहथी लेपाता नथी. संसारमां विचित्र संयोगयोगे पण जे समभाव तजता नथी अने सर्वत्र समानभाव राखे छे एवा समभावीने समताना बलथी मोह पराजित करी शकतो नथी.

५. मोहनी प्रबलताथी विविध विकल्पोने वश थइने जीव दीर्घ संसार परिभ्रमण करे छे. जेम उपराउपर दारुना प्याला पीवाथी परवश थयेला जीव अनेक प्रकारनी कुचेष्टा कर्या करे छे तेम मोहना प्रबल वेगमां तणाता जीवना महा माठा हाल थाय छे माटे सुखना अर्थी जीवे मोह मदिराथी दूर रहेवा समताने धारी संकल्प विकल्पोने शमावी देवा यत्न करवो युक्त छे. एम करवाथी सहज स्वभाविक निर्विकल्प शान्त सुखनी प्राप्ति थइ शके छे. प्रबल मोहने पराधीन थयेलो प्राणी स्वप्नमां पण एवुं सुख पामी शकतो नथी.

६. आत्मानु स्वभाविकरूप तो स्फटिक रत्न जेवुं निर्मल छे. परंतु पुद्गलना संबंधथी जीव जड जेवो थइ तेमां मुंझाइ जाय छे.

जेम स्फटिक रत्नने रातुं पीलुं लीलुं के कालुं फूल वगेरेथी ते वगेरेना फूलना प्रसंगथी आवुं रत्न तद्रूपज थइ जाय छे, तेम जीव पण उपाधि संबंधथी जड जेवो बनी जाय छे. पुण्य पाप राग द्वेषादिक जीवने केवल उपाधिरूप छे. ज्यां सुधी जीवने तेनो संबंध रहे छे त्यां सुधी ते तेनुं शुद्ध स्वरूप संपूर्ण रीते प्रगट करी शकतोज नथी. पण तेनो संपूर्ण वियोग थये छते आत्मानुं शुद्ध स्वरूप सहज प्रगट थइ रहे छे.

७ मोहना क्षयथी सहज आत्मसुखने साक्षात् अनुभवतां छतां पुद्गलिक सुखने सारुं मिष्ट माननारा लोकोनी पासे तेनुं कथन करतां आश्चर्य लागे छे. केमके पुद्गलानंदी जीवने आत्मिक सुखनो साक्षात् अनुभव थइ शकतो नथी. अने साक्षात् अनुभव थया विना तेनी प्रतीति पण आवी शकती नथी. तेथी निर्मोही पुरुष अधिकार मुजबज उपदेश आपे छे.

८ जे महाशय शुद्ध समज पूर्वक समस्त सदाचारने सेववा उजमाल रहे छे ते प्रयोजनविनाना परभावमां शा माटे मुंझाय ? जेम निर्मल आरीसामां वस्तुनुं यथार्थ दर्शन थइ शके छे तेम निर्मल ज्ञान दर्पणयोगे आत्मा स्वकर्तव्य सम्यग् समजीने तेनुं निरभिमानपणे आराधन करी शके छे. निर्मल ज्ञानवडे स्व कर्तव्यनुं स्वरूप निर्धारीने जे शुभाशय तेनुं सेवन करे छे ते अवश्य कर्तव्यमंद नीवडे छे.

## ॥ ५ ॥ ज्ञानाष्टक ॥

मज्जत्यज्ञ किलाज्ञाने, विष्टायामिव शूकरः ॥
ज्ञानी निमज्जति ज्ञाने, मराल इव मानसे ॥ १ ॥
निर्वाण पद मप्येकं, भाव्यते यन्मुहुर्मुहुः ॥
तदेव ज्ञान मुत्कृष्टं, निर्बंधो नास्ति भूयसा ॥ २ ॥
स्वभाव लाभ संस्कार, कारणं (स्मरणं) ज्ञान मिष्यते॥
ध्यान्ध्यमात्रमतस्त्वन्य, तथा चोक्तं महात्मना ॥३॥
वादांश्च प्रतिवादांश्च, वदंतोऽनिश्चितांस्तथा ॥
तत्त्वान्तं नैव गच्छंति, तिलपीलकवद्गतौ ॥ ४ ॥
स्वद्रव्य गुण पर्याय, चर्या वर्या परान्यथा ॥
इति दत्तात्म संतुष्टि, र्मुष्टि ज्ञानस्थितिर्मुने ॥ ५ ॥
अस्तिचेद् ग्रंथिभिद् ज्ञानं, किं चित्रैस्तंत्रयंत्रणैः ॥
प्रदीपाः क्वोपयुज्यन्ते, तमोघ्नी दृष्टिरेवचेत् ॥ ६ ॥
मिथ्यात्वशैलपक्षच्छिद्, ज्ञानदंभोलिशोभितः ॥
निर्भयः शक्रवद्योगी, नंदत्यानंदनंदने ॥ ७ ॥

पीयूषमसमुद्रोत्थं, रसायनमनौषधम् ॥
अनन्या पेक्ष मैश्वर्य, ज्ञानमाहुर्मनीषिणः ॥ ८ ॥

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. निर्मल ज्ञानवडे वस्तुतत्वनो निर्धार करीने जे सदाचारने सेवे छे तेज मोहनो विनाश करी शके छे. माटे निर्मल ज्ञान गुण आदरवा शास्त्रकार आग्रह पूर्वक कहे छे जेम भूंड विष्टामां मग्न रहे छे तेम मूढ माणस अज्ञानमांज मग्न रहे छे पण ज्ञानी पुरुष तो जेम हंस मानस जलमां मग्न रहे छे तेम निर्मल ज्ञान गुणमांज मग्न रहे छे. ज्ञानी पुरुष कदापि ज्ञानमां अरति धारतो नथी. अथवा ज्ञानज तेनो खरो खोराक होवाथी ते तेने अत्यंत आदरथी सेवे छे.

२. जेनाथी राग द्वेषनो अत्यन्त क्षय थवा पूर्वक मोक्षपदनी प्राप्ति थइ शके एवा एक पण पदनो वारंवार अभ्यास करी तेमां तन्मय थवुं तेज ज्ञान श्रेष्ठ छे. 'मारुष मातुष' जेवा एक पदथी पण कल्याण साधी शकाय छे. तेवाज वधारे पद होय तेनुं तो कहेवुंज शुं ? पण भारभूत एवा शुष्क ज्ञान मात्रथी कंइ कल्याण नथी.

३. जेथी स्वभाव निर्मल थाय एटले आत्म परिणति सुधरती जाय एवुंज ज्ञान मेळववुं सारुं छे. बाकीनुं ज्ञान तो केवल घोमारूप छे, एवुं शास्त्रकार कहे छे.

४. अनिश्चित वादविवादने वदतां थकां, जेम घांचीनो बळद गमे तेटलुं चाले तोपण तेनो अंत आवतो नथी, तेम तत्त्वनो पार पामी शकातोज नथी. साध्य दृष्टियी धर्मचर्चा करतां के नम्रपणे तत्त्व कथन के श्रवण करतां केवल हित प्राप्तिज थाय छे. माटे शुष्क वादविवाद तजीने केवल तत्त्व खोजना करवी.

५. आत्म द्रव्यना गुण पर्यायनी पर्यालोचना करवीज श्रेष्ठ छे, बीजी नकामी बाबतमां वखत गमाववो युक्त नथी. एवी समज पूर्वक सहज संतोष धारनार मुनि श्रुति ज्ञाननी स्थितिवाला गणाय छे. श्रुतिज्ञान संक्षिप्त छतां सर्वोत्तम छे. तेथी सर्व परभावथी विरक्त मुनि सहज स्वभाव रमणी बने छे.

६. मिथ्यात्वने भेदी समकित प्राप्त करावे एवुं सम्यग् ज्ञान जो प्रगट थाय तो ते सारभूत ज्ञान पामी बीजा शास्त्र परिश्रमनुं कंइ प्रयोजन नथी. जो स्वभाविक दृष्टिथी अंधकार दूर थतो होय तो कृत्रिम दीवानुं शुं प्रयोजन छे ! साचो दीवो जेना घटमांज प्रगटयो छे तेने सहज स्वाभाविक प्रकाश सत्याश करे छे तेथी ते मिथ्यात्व अंधकारनो विनाश करी आनंद मग्न रहे छे. सारभूत ज्ञान विना प्राणीओने प्रेतकारक-शास्त्र विलोडणथी शुं थवानुं ? चोखी दृष्टिवाळाने एक पण दीवो बस छे, अने अंध दृष्टिने हजारो दीवाथी पण उपकार थइ शकवानो नथी. सम्यग् ज्ञानवान् सम्यग् दर्शन या समकित रत्नना प्रभावथी दिव्यदृष्टिज कहेवाय छे.

७. मिथ्यात्व दीप्तने छेदवा समर्थ ज्ञानरूप वज्रथी शोभित मुनि निर्भय छतां शक्र इंद्रनी पेरे आनंद नंदनमां विचरे छे. रत्नत्रयी मंडित मुनि निर्भय छता सहजानन्दमां मस्त रहे छे. तेवा योगी पुरुषने संयममां अरति थवा पामती नथी.

८ माझ पुरुषो कहे छे के ज्ञान, समुद्रथी नहि उत्पन्न थयेलुं अभिनव अमृत छे. औषध विनानुं अपूर्व रसायण छे. अने सर्वथी श्रेष्ट एवुं अनुपम ऐश्वर्य छे. भाग्यवंत भव्योज तेनो लाभ लही शके छे. भाग्यहीनने ते प्राप्त थइ शकतुंज नथी. सौभागी भमरो तेनो मधुर रस पीवे छे. अने दुर्भागी तेनाथी दूरज रहे छे.

---

## ॥ ६ ॥ शमाष्टकम् ॥

विकल्प विषयोत्तीर्णः, स्वभावालंबनः सदा ॥
ज्ञानस्य परिपाको यः, सः शमः परिकीर्त्तितः ॥१॥
अनिच्छन् कर्म वैषम्यं, ब्रह्मांशेन समं जगत् ॥
आत्माभेदेन यः पश्ये, दसौ मोक्षंगमी शमी ॥ २ ॥
आरुरुक्षुर्मुनिर्योगं, श्रयेद्वाद्यक्रियामपि ॥
योगारूढः शमादेव, शुद्ध्यत्यंतर्गतक्रियः ॥ ३ ॥

ध्यानवृष्टेर्दया नद्याः, शमपूरे प्रसर्पति ॥
विकारतीरवृक्षाणां, मूलादुन्मूलनं भवेत् ॥ ४
ज्ञानध्यान तपः शील, सम्यक्त्व सहितो ऽप्यहो ॥
तं नाप्नोति गुणं साधु, यं प्राप्नोति शमान्वितः ॥ ५
स्वयंभूरमणस्पर्द्धि, वर्द्धिष्णु समता रसः ॥
मुनिर्येनोपमीयेत, कोपिनासौ चराचरे ॥ ६ ॥
शमसूक्त सुधासिक्तं, येषां नक्तं दिनं मनः ॥
कदापि ते न दह्यन्ते, रागोरगविषोर्मिभिः ॥ ७ ॥
गर्जद्ज्ञान गजोत्तुंग, रंगद् ध्यान तुरंगमाः ॥
जयन्ति मुनिराजस्य, शमसाम्राज्य संपदः ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१ संकल्प विकल्पने शमावी आत्माने सहज शीतलता सदा आपनार एवा शमगुणने सम्यग् ज्ञानना उत्तम फलरूपे ज्ञानी पुरुषोए वखाणेल छे. उपशमवंत विविध विकल्प जाळथी मुक्त थइ शके एवा परिपक्व ज्ञानना बलथी सहज स्वहित साधी शके छे.

२ जे शान्त आत्मा, कर्मनी विषमताने नहि लेखतां, सर्व जगतंतुने सहज सुख मेलववा एक सरखी सत्ता होवाथी, आत्म समान जलेखे छे, ते अवश्य मोक्षगामी थाय छे अर्थात् जेने सर्वत्र समभाव व्याप्यो छे ते जरूर मोक्ष सुख साधी शके छे.

३ योगारूढ थवा इच्छनार साधुने तो बाह्य ( व्यवहार ) क्रियानी अपेक्षा रहे छे. पण योगारूढ मुनि तो अंतर क्रियानो आश्रय करनार होवाथी केवल शमगुणथीज शुद्ध थाय छे. प्रथम तो योगनी चपलता वारवा अने सहज स्थिरता साधवा आप्त पुरुषे उपदेशेली व्यवहारिक क्रिया करवी पडे छे पण अनुक्रमे अभ्यास वधे मन वचन अने कायानी चपलता शान्त थये छते मुनिने उत्तम क्षमादिक सहज शुद्धक्रिया योगे अंतर शुद्धि थइ शके छे. तेवी योग्यता पामवा प्रथम अभ्यास करी अंते सहज क्षमादिक अंतरंग क्रियाथी आत्म शुद्धि साधवी सुलभ पडे छे. योग्यता विना कार्य साधवा जतां अनेक मुशीबतो आवी पडे छे.

४. ध्याननी वृष्टि थवाथी, शुद्ध करुणारूपी नदी शमपूर्थी एवी तो छलकाय जाय छे के तेना कांठे रहेला विविध विकार-वृक्षो मूलथीज घसडाय जाय छे. ज्यारे निर्मल ध्यानामृतनी वृष्टि थाय छे त्यारे शुद्ध अहिंसक भावनी एवी तो अभिवृद्धि थाय छे के तेना शान्त रसना प्रबल प्रवाहथी सर्व प्रकारना विषयविकारो समूलगा घसडाइ जाय छे, तेथी तेना कटुक फलनी भीति रहेतीज नथी.

५. ज्ञान ध्यान तप शील अने सम्यक्त्व सहित पण स[...]
उपशांत मुनि जेटलो गुण पामी शके नहि सर्व गुणमां उपशम[...]
प्रधान छे. तेथीज उपशांतमुनि सर्वथी वधारे सुखी छे. राग द्वेषा[...]
क दुष्ट दोषोने दूर कर्याथीज सहज क्षमा गुणयोगे शमता आवे[...]
जेथी ते शान्त आत्मा कोइ पण अपराधीनु अंतरथी पण अहित[...]
रवा इच्छतो नथी. गमे तेवा अपराधी उपर पण करुणा रसथी[...]
शके तेटलो उपकार करवा इच्छे छे.

६. स्वयंभूरमण समुद्र करतां अधिक समता रसथी भरेला[...]
निनी बरोबरी करे एवी कोइ पण चीज दुनीया भरमां देखात[...]
नथी. स्वयंभू रमणमां पण परिमित जल छे अने उपशान्त मुनि[...]
तो क्षणे क्षणे समता रसनी अभिवृद्धि थयाज करे छे.

७. जेनुं मन सदा समता अमृतथी भीनुंज रहे छे, तेने [...]
भुजंगमनु झेर कदापि चडी शकेज नहि. जेना हृदयमां समता[...]
अमृतनी वृष्टी थइ छे तेने रागद्वेषादिक बाली शकेज नहि. कप[...]
कलुषित मनवाळाओमांज राग द्वेषादिक दुष्ट विकारो संभवे छे.

८. गाजता ज्ञानरूपी हाथीओ तथा उंचा अने नाचता ध्य[...]
रूपी घोडाओवाली मुनिराजनी शम साम्राज्यनी संपदा सदा ज[...]
यंति वर्ते छे. उपशान्त मुनिराजने अति उत्तम ज्ञान अने ध्यान[...]
अनुपम लक्ष्मीद्वारा श्रेष्ठ अखंड सुख स्वाधीन थाय छे.

॥ ७ ॥ इंद्रियपराजयाष्टकम् ॥

बिभेपि यदि संसारा, न्मोक्ष प्राप्तिं च कांक्षसि ॥
तदेंद्रिय जयं कर्तुं, स्फोरय स्फार पौरुषम् ॥ १ ॥
वृद्धास्तृष्णा जलापूर्णै, रालवालैः किलेंद्रियैः ॥
मूर्च्छामतुच्छां यच्छन्ति, विकार विप पादपाः ॥ २ ॥
सरित् सहस्र दुःपूर, समुद्रोदर सोदरः ॥
तृप्तिमान्नेंद्रिय ग्रामो, भव तृप्तोऽन्तरात्मना ॥ ३ ॥
आत्मानं विषयैः पाशै, र्भववासपराङ्मुखम् ॥
इंद्रियाणि निबध्नंति, मोह राजस्य किंकराः ॥ ४ ॥
गिरिमृत्स्नां धनं पश्यन्, धावतींद्रिय मोहितः ॥
अनादि निधनं ज्ञानं, धनं पार्श्वे न पश्यति ॥ ५ ॥
पुरः पुरः स्फुरत्तृष्णा, मृगतृष्णानुकारिषु ॥
इंद्रियार्थेषु धावन्ति, त्यक्त्वा ज्ञानामृतं जडाः ॥ ६ ॥
पतंग भृंग मिनेभ, सारंगा यान्ति दुर्दशाम् ॥
एकैकेंद्रिय दोपाश्चे, द्दुष्टै स्तैः किं न पंचभिः ॥ ७ ॥

विवेकद्विपहर्यक्षैः, समाधि धन तस्करैः ॥
इंद्रियैर्नजितोयोऽसौ, धीराणां धुरि गण्यते ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. जो तुं संसार परिभ्रमणना दुःखथी डरतो होय अने अखंड एवुं मोक्ष सुख स्वाधीन करवा इच्छतो होय तो इंद्रिय वर्गने दमवा प्रबल प्रयत्न कर. विविध विषय सुखनी वासना मोक्षार्थी जीवने पण बाधक थाय छे. माटे प्रथमज विविध विषयमां भटकता मन अने इंद्रियोने दमीने वश करवा युक्त छे. अन्यथा तेओने वश पडि रहेवाथी उद्धत घोडानी पेठे तेओ जरुर जीवने विषम एवा दुर्गतिना मार्गमांज खेंची जायछे. पण जो तेमनेज आगम युक्तिथी वश करी लेवामां आवशे तो आत्मा अने अखंड सुख साधी शकशे.

२. तृष्णा–जलथी परिपूर्ण एवा इंद्रिय–क्यारार्थी वृद्धि पामेला विकार विषयवृक्षो जीवने महा मूर्छा उपजावे छे. जेम जेम जीव विविध विषयने सेवे छे तेम तेम तेनी तृष्णा सतेज थाय छे, अने अंते असंतुष्ट रही आर्त्तध्यान योगे महाविकारने ते भजे छे, एम समजी संतोषने सेवनारा जीवो मन अने इंद्रियो उपर अच्छो काबु देखवी अने अवश्य अखंड सुख साधी शके छे, बाकी कामान्ध थो

क्षणिक सुख माटे अनंत अने अक्षय सुखने गमावी अनंत अपार दुःखनेज व्होरी लेछे. संतोषी जीव सर्व दुःखने सहजमां जलांजली दइ अपार सुखमां अवगाही रहे छे, एम समजी संतोष गुणने से-ववो युक्त छे.

३. जेम हजारो गमे नदीओथी पण समुद्र पूरातो नथी तेम गमे तेटला विषय संयोगथी पण इंद्रियवर्ग धरातो नथी, जेम ईंधन-थी आग उलटी वधे छे तेम अनुकूल विषय योगे उलटी तृष्णा वृ-द्धिगत थाय छे माटे सहज संतोषी थवुं युक्त छे. जेम जेम संतोष गुण वाधे छे तेम तेम सहज सुखनी वृद्धि थाय छे.

४. संसारथी उद्वेग पामेला जीवने पण इंद्रियो विषय-पाश-थी बांधी लेछे तो संसारमां रच्या पच्या रहेनारनुं तो कहेवुंज शुं ? तेवाने तो ते सदा संताप्याज करे छे पण मोक्षार्थी जीवने पण लाग मळ्ये छोडती नथी. केमके ते मोहराजानी चाकरडीओज छे, माटे मोक्षार्थीए तेमनाथी वधारे चेतता रहेवुं युक्त छे.

५. इंद्रिय संबंधी विषय सुखमां मुंझायेलो जीव धनने अर्थे डुंगरनी मटोडी जोवे छे पण आत्म समीपेज रहेलुं शाश्वतुं ज्ञान-धन तपासतो नथी, खरुं जोतां विषय विरक्त जीवनेज साचुं ज्ञान-धन हाथ लागे छे. विषयान्ध जीवने सत्य अने अपथ्य प्रिय होवाथी

तेने खरी प्रीति विना तत्त्व–धन हाथ लागतुंज नथी, माटे अनादिनी विषयवासना तजीने सत्य ज्ञानमां प्रीति धारवी युक्त छे.

६. अधिका अधिक तृष्णाने वधारनार विषय सुखमांज मूढ जीवो मग्न रहे छे, पण ज्ञानामृतनो आदर करी शकता नथी. खरुं छे के खाखरानी खीसकोली आंबाना रसमां शुं जाणे ? अमृत समान ज्ञान तो विषय सुखथी विरक्तनेज प्राप्त थइ शके छे.

७. एक एक इंद्रियना दोषथी, पतंगिया, भमरा मांछला, हाथी तथा हरण दुर्दशाने पामे छे तो दुष्ट एवी पांचे इंद्रियोने परवश थइ वर्तनारा मूढ जीवोनुं तो कहेवुंज शुं ?

८. विवेकरूप कुंजरने विदारवा केशरीसिंह समान तथा समाधि धनने हरवा साक्षात् चोर समान एवी इंद्रियोथी जेओ जीताया नथी तेओज धीर पुरुषोमां धुरंधर छे. जितेंद्रिय पुरुषोज खरा शूरवीर गणाय छे.

---

## ॥ ८ ॥ त्यागाष्टकम् ॥

संयमात्मा श्रये शुद्धो, पयोगं पितरं निजम् ॥
धृतिमंबांच पितरौ, तन्मां विसृजतं ध्रुवम् ॥ १ ॥

युष्माकं संगमोऽनादि, र्बधवोऽनियतात्मनाम् ॥
ध्रुवैक रुपान् शीलादि, बंधूनित्यधुनाश्रये ॥ २ ॥
कान्ता मे समतै वैका, ज्ञातयोमे समक्रियाः ॥
बाह्य वर्गमिति त्यक्त्वा, धर्म संन्यासवान् भवेत्॥३ ॥
धर्मास्त्याज्याः सुसंगोत्थाः, क्षायोपशमिका अपि ॥
प्राप्य चंदन गंधाभं, धर्म संन्यास मुत्तमम् ॥ ४ ॥
गुरुत्वं स्वस्य नोदेति, शिक्षा सात्म्येन यावता ॥
आत्म तत्त्व प्रकाशेन, तावत् सेव्यो गुरुत्तमः ॥ ५ ॥
ज्ञानाचारादयोपीष्टाः, शुद्ध स्व स्वपदावधि ॥
निर्विकल्पे पुनस्त्यागे, नविकल्पो न वा क्रिया ॥ ६ ॥
योग सन्यासतस्त्यागी, योगानप्यखिलां स्त्यजेत् ॥
इत्येवं निर्गुणं ब्रह्म, परोक्तमुपपद्यते ॥ ७ ॥
वस्तुतस्तु गुणैः पूर्ण, मनंतै र्भासते स्वतः ॥
रूपं त्यक्तात्मनः साधोर्निरभ्रस्य विधोरिव ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. संयमी आत्मा शुद्ध उपयोगरूपी पितानो तथा धृतिरूपी मातानो आश्रय करी लौकिक मनाता मातापितानो संग निश्चय पूर्वक तजी दे छे. ज्यां सुधी लौकिक संबंधीओ साथे स्नेह बांध्यो रहे छे, त्यां सुधी निर्मळ ज्ञान, ध्यान तथा सदाचारमय आत्म संयममां रति पडती नथी. शुद्ध संयममां रंग लाववा माटे अने सहज आनन्द लूंटवा माटे लौकिक स्नेह अवश्य तजवो युक्त छे.

२. संयमार्थी आत्मा स्वार्थी संबंधोनो त्याग करीने शील संतोष प्रमुख परमार्थी अने निश्चय परिणामवाळा बंधुओनो आश्रय करवा उजमाळ रहे छे. ज्यां सुधी कृत्रिम स्वार्थी बंधुओमां प्रीति छे त्यां सुधी सत्य परमार्थी शीलादिक सद्गुणोमां प्रीति जागे नहि. माटे शीलादिक सत्य बंधुओमां स्वाभाविक प्रेम जगाववा अने अनादि अविवेकथी मानेला स्वार्थी कृत्रिम बंधुओ प्रतिनो कृत्रिम राग अवश्य तजवोज जोइए. कृत्रिम रागनो त्याग करवा सहज सात्विक प्रेम अवश्य जागवानो.

३. संयमार्थी पुरुष समतारूपी स्त्रीनो तथा साधर्मीरूपी ज्ञाति जनोनोज आदर करे छे, पण परकीना मनकल्पीत लौकिक संबंधीओनो त्यागज करे छे. लौकिक संबंधने विवेकथी छेदीने आत्म संयमने साधवावाळो उत्तम त्यागी कहेवाय छे.

पण तारवा समर्थ थाय छे, उपर बतावेला सद्गुणो विनानो बाह्याडंबरी स्वपरने तारवा शक्तिवान नथी.

२. क्रिया-आचरण विनानुं केवळ शुष्कज्ञान निष्फळ छे, अने सदाचरण युक्त सर्व ज्ञान सफळ छे केमके मार्गनो जाण छतां पणि गमन क्रिया विना इच्छित स्थाने पहोंची शकतो नथी. अने गमन क्रिया योगे सुखे समाधियी इष्ट स्थाने पहोंची शके छे. एम निर्धारीने म्होटी म्होटी वातो करीने नहि विरमतां साक्षात् क्रियारुचि थवुं.

३. जेम दीवो स्वपरप्रकाशक छतां तेलवाट विगेरेनी अपेक्षा राखे छे तेम संपूर्ण ज्ञानीने पण काळे काळे योग्य अनुकूळ क्रिया करवी पडे छे. जेम तेलवाट विगेरे अनुकूळ साधन विना दीवो बळी शकतो नथी; फक्त तेलवाट विगेरे पहोचे त्यां सुधीज दीवो बळी पछी ओल्वाइ जाय छे तेम ज्ञानीने पण अनुकूळ क्रिया कर्या विना चालतुं नथी. जेम तरना रस जळथी न्यारो रहेतोज नथी तेम सत्य-परमार्थिक ज्ञान पण तदनुकूळ क्रिया विनानुं होतुं नथी. संपूर्ण ज्ञानी पण स्वानुकूळ क्रिया करे छे तो संपूर्ण ज्ञानी थवा इच्छता एवा अल्पज्ञानीनुं तो कहेवुंज शुं?

४. क्रिया करवी ते तो बाह्य भाव छे एम कहीने जेओ सत्य व्यवहारना निषेध करे छे, तेओ सम्यग् क्रिया नाव्या विनाज बुद्धिने इन्द्रिय जय करे छे जेम जप्या विना शुद्ध शान्त थती नथी

तेम सत्य व्यवहार सेवन विना शुद्ध निश्चय मार्ग पण मली शकतो नथी. माटे शुद्ध निश्चयार्थीने व्यवहारनो अनादर करवो युक्त नथी. पण शुद्ध मार्ग माटे सत्य व्यवहारनुं विशेषे सेवन करवुं घटे छे.

५. गुणवंतनुं बहुमान बनी शके तेटलुं करवा पूर्वक तेनुं नित्य स्मरण करवा प्रमुख सत् क्रियाथी उत्पन्न थयेला भावने टकावी राखवा साथे नवा भावने पण पेदा करवानुं बनी आवे छे. माटे गुणना अर्थीए हमेशां सत् क्रियानुं आलंबन लीधाज करवुं.

६. प्रथम अभ्यासरूपे जे सत् क्रिया करवामां आवे छे तेथी एवो संस्कार जामी जाय छे के ते क्रिया अंते शुद्ध अने असंगपणे थया करे छे. तेमज कचित् दैववशात् पतित थयेलाने पण पूर्वला भावनी प्राप्ति थइ आवे छे. परंतु जेओ प्रमादने पराधीन पडया छतां सत् क्रियानुं सेवनज करता नथी तेवा मंदभागीने तो गुणमां आगल वधवानुं साधनज मली शकतुं नथी.

७. माटे सद्गुणोनी वृद्धि माटे तेमज प्राप्त थयेला सद्गुणोथी भ्रष्ट नहि थवा माटे सदा सत् क्रिया सेव्याज करवी युक्त छे. एवो शुभ अभ्यास वीतराग दशा प्राप्त थतां सुधी सेववा योग्य छे. समस्त मोहनो क्षय थवा पामे त्यां सुधी एवा शुभ अभ्यासमां प्रमाद करवो अयुक्त छे. प्रमाद सेवनथी तो उलटो अनर्थ पेदा थाय छे. माटे परमात्म दशा प्राप्त थतां सुधी अप्रमत्त भावज आदरवा योग्य

छे. वीतराग दशा प्राप्त थया पछी पतीत थवानो क्यारे भय नथी. वीतराग दशा तो कायम एक सरखीज होय छे. वीतराग दशामां कांइ पण क्रिया करवा संबंधी विकल्पज होतो नथी.

८. वीतराग वचनानुसार वर्तन करतां अने असंग वृत्ति प्राप्त थता ज्ञान अने क्रियानी अभेद भूमी–एकता अभंद आनंदथी प्राप्त होय छे. तथास्तु.

--

॥ १० ॥ तृप्त्यष्टकम् ॥

पीत्वा ज्ञानामृतं भुक्त्वा क्रियासुरलताफलम् ॥
साम्यताम्बूलमास्वाद्य तृप्तिं याति परां मुनिः ॥१॥
[illegible] नश्वरी ॥
[illegible] त्तिरित्वरी ॥ २ ॥
[illegible] तीन्द्रिया ॥
[illegible] दनाद्भवेत् ॥ ३ ॥
[illegible] स्यादाभिमानिकी ॥
[illegible] सात्मवीर्यविपाककृत् ॥४॥
पुद्[illegible] नरात्मना ॥

परतृप्ति समारोपो, ज्ञानिनस्तन्न युज्यते ॥ ५ ॥
मधुराज्य महाशाका, ग्राह्ये बाह्ये च गोरसात् ॥
परब्रह्मणि तृप्ति र्या, जनास्तां जानतेऽपि न ॥ ६ ॥
विषयोर्मिविषोद्गारः स्यादतृप्तस्य पुद्गलैः
ज्ञान तृप्तस्य तु ध्यान, सुधोद्गार परंपरा ॥ ७ ॥
सुखिनो विषयातृप्ता, नेंद्रोपेंद्रादयोऽप्यहो ॥
भिक्षुरेकः सुखी लोके, ज्ञानतृप्तो निरंजनः ॥८॥

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. ज्ञानामृतनुं पान करीने तथा क्रिया कल्पलतानां फल खा-ईने तथा समतारूपी तांबूल चावीने मुनि श्रेष्ठ तृप्तिने पामे छे. ज्ञा-नामृत ज्ञान अने क्रिया वडे थती तृप्ति शाश्वती छे. ते सिवायनी पौद्गलिक तृप्ति कल्पित मात्र छे.

२. स्वगुणो वडेज आत्म अने आनंद तृप्ति थती होय तो क्ष-णिक तृप्ति करनारा विषयोनुं ज्ञानीने शुं प्रयोजन छे ? वस्तुगत शब्द-अर्थ आसार आत्म तृप्तिने अनुभवनारा ज्ञानी पुरुषो विषय रूप विषय सुखनो आदर करता नथी.

परब्रह्ममां जे तृप्ति रहेली छे ते विषयरसना आशीजनो जाणी पण शकता नथी. पुद्गलिक सुखना रसीया तो विविध विषय रसमांज सार सुख समजी नित्य रच्या पच्याज रहे छे. सिद्ध परमात्मदशामां केवुं अने केटलुं सुख रहेलुं छे, तेनो तेमने स्वप्नमां पण ख्याल नथी

७. सत्य संतोष रहित–असंतोषीने पुद्गलो वडे विविध विषयमय विषनाज उद्गार आवे छे. अने सत्य ज्ञान–संतोषीने तो उत्तम एवा ध्यानामृतनाज उद्गारनी परंपरा आवे छे. जीव जेवो आहार करे छे तेवोज तेने ओडकार आवे छे. निरंतर पुद्गलिक सुखमांज रच्या पच्या रहेनाराने विषय वासनानीज प्रबलताथी तेनाज झेरी उद्गार आवे छे, अने सत्य ज्ञानमांज तृप्ति मानी मग्न रहेनारा महा पुरुषने तो निर्मळ ध्यानामृतनाज उत्तम ओडकार आव्या करे छे. एम निर्धारीने सर्व प्रकारनी विषय आशा तजीने तत्त्व ज्ञानमांज प्रीति जगाववी, जेथी शुद्ध चैतन्यनी जागृतिथी अनुपम ध्यानामृतनी दृष्टि थशे अने अनादि अविवेक जन्य विषमतापनी उपशांतिथी सहज शीतळता छवाये जशे. परंतु याद राखवुं के आ सर्व विविध विषयपाशने छेदवाथी बनी शकशे.

८. विषय सुखथी तृप्ति नहि पामेला–असंतुष्ट एवा ईंद्र उपेंद्रादिक पण तत्त्वतः सुखी नथी. किंतु तत्त्वज्ञानथी तृप्त थयेलो भ-

...ान क्रिया समावेशः, सहैवोन्मीलने द्वयोः ॥
...भूमिका भेदतस्त्वत्र, भवेदेकैक मुख्यता ॥ ७ ॥
...सज्ञानं यदनुष्ठानं, न लिप्तं दोष पंकतः ॥
...शुद्ध बुद्ध स्वभावाय, तस्मै भगवते नमः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. संसारमां वसता अने स्वार्थ साधवामांज तत्पर एवा सर्व कोइ प्राणी कर्मथी लेपाय छे. अथवा काजलनी कोटडीमां रहेतां कोण कोरो रहीज शके ? फक्त ज्ञान सिद्ध पुरुषज निर्लेप रही शके छे. तत्त्वज्ञानी अने विवेकी महात्माज मात्र कोरो रही कर्म अंजनथी मुक्त थइ शके छे. एवा सत्पुरुषोने संसारना कोइपण पदार्थमां आसक्ति होती नथी, अने अंतर आसक्ति विना रागद्वेषादिकना अभावे कर्म बंध पण थइ शकतो नथी.

२. हुं परभावने करुं नहिं, कराबुं नहिं तेमज अनुमोदुं नहिं, विभावमां रमवानो मारो धर्मज नथी, मने स्वभावमांज रहेवुं युक्त छे. आ प्रमाणे अंतरमां समजनार आत्म ज्ञानी कर्म अंजनथी केम लेपाय ? जे विभावथी विरमीने केवल स्वभाव रमणी थाय छे, ते... खरो आत्म ज्ञानी छे अने तेवा आत्म ज्ञानीज सकल कर्म कलंक... थी सर्वथा मुक्त थइ अंते परम पदने प्राप्त थाय छे.

[illegible] पुग्गल-

[illegible] आत्मा

[illegible]

पाणमोए कर्तृत्व अभिमान तजवुं युक्त छे. कोइ पण जातनो मद करवाथी प्राणी पतितपणुं पामे छे. अने मद तजी निर्मद थइ नम्र पणे स्वकर्तव्य समजी जे सद् क्रिया करे छे ते स्व उन्नतिने सुखे साधे छे.

६. निश्चय-तत्त्व दृष्टिथी जोतां आत्मा अलिप्त छे, अने व्यवहार दृष्टियी जोतां तेज आत्मा कर्मथी लिप्त देखाय छे. तत्त्वदृष्टि पुरुष अलिप्त दशाथी आत्मानी शुद्धि करे छे, अने क्रियावान व्यवहार दृष्टि पुरुष स्वानुकूल उचित आचरणथी शुद्ध थाय छे. बंनेनुं साध्य एकज होवाथी स्व स्व अनुकूल साधनवडे उभय सिद्धि संपादन करी शके छे. साध्य विकल कोइ पण प्राणी स्वानुकूल साधन विना सिद्धि साधी शकता नथी.

७ निश्चय अने व्यवहार दृष्टिनुं साथेज प्रगटन-विकास थवाथी ज्ञान अने क्रिया ए उभयनो समावेश थइ जाय छे, परंतु स्यान विशेषथी तो ज्ञाननी के क्रियानी मुख्यता होय छे. व्यवहार साध वडे निश्चय साध्य थाय छे, अने निश्चय साधनथी मोक्ष साध्य था छे. व्यवहार ए मोक्षनुं परंपर कारण छे अने निश्चय अनंतर का छे. उभयनुं मीलन थवाथी शीघ्र मोक्ष साधना सिद्ध थाय छे. मोक्षार्थीये निश्चय दृष्टि हृदयमां धारीने व्यवहार मार्गनुं अव अवश्य करवुं युक्त छे. एम करवाथी साधक शीघ्र साध्य सि करी शके छे.

६. निःस्पृही पुरुष लोकरंजनीकताथी पोतानी वडीलता, प्रतिष्ठाथी श्रेष्ठता अने जातिगुणथी ख्यातिने प्रगट करताज नथी. जे लोक पूजा, प्रतिष्ठा के ख्यातिनो विकल्प नहि करतां स्वकर्तव्य बजाव्या करे छे तेज खरा निस्पृही छे. खरा निःस्पृही स्वप्नमां पण परोपकारनो बदलो इच्छता नथी.

७. भूमी एज जेनी शय्या छे, माधुकरी वृत्तिथी जेने भोजन करवानुं छे, देहने ढांकवाने जेने जीर्णप्राय वस्त्र छे, अने वनमां जेने वसवानुं छे, एवा निःस्पृही पुरुषने उत्तम प्रकारना संतोषना योगथी चक्रवर्ती करतां पण अधिक सुख छे. जेणे संसारनो खोटो वैभव तजीने सहेज आत्म ऐश्वर्य पामवा उत्तम संयमनुं सेवन आदर्युं छे, एवा आत्म संयमी महापुरुष चक्रवर्तीथी ओछा सुखी नथी. खोटो कल्पित आनंद तजी सहज आनंद साधनार सत्पुरुष सर्वोत्तम सुखी छे. परस्पृहा रहित-निःस्पृही निर्ग्रंथ एवुं सर्वोत्तम सु[illegible] साधी शके छे.

८. सुखनुं अने दुःखनुं संक्षेपथी आवुं लक्षण शास्त्रमां क[illegible] छे के परस्पृहा एज महा दुःख छे अने निःस्पृहता एज परम [illegible] छे. माटे मोक्षार्थीए परस्पृहा तजी निःस्पृह थवुं युक्त छे.

—

ज्योतिर्मयीव दीपस्य, क्रिया सर्वापि चिन्मयी ॥
यस्यानन्य स्वभावस्य, तस्य मौन मनुत्तरम् ॥८॥

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. जे समस्त तत्त्वने यथार्थ जाणे छे ते मुनि कहेवाय छे, जे वस्तु तत्त्वने सम्यग् समजी सर्वत्र मध्यस्थ रहे छे, खोटी बाबतमां कदापि मुंझातोज नथी ते मुनि छे. तेवुं मुनिपणुं एज खरुं समकित छे. अने निर्मल समकित एज मुनिपणुं छे. शुद्ध समकित विना खरुं मुनिपणुं संभवतुंज नथी. मुनिपणुं ज्यां सुधी जाळवी रखाय छे, त्यां सुधी समकित कायम रहे छे.

२. आत्मा पोते पोतामां रहेलुं जे शुद्ध स्वरुप जे वडे जाणे छे तेज मुनिनी रत्नत्रयीमां ज्ञान दर्शन अने चारित्रनी एकता रुप छे. सम्यग् ज्ञानथी स्व स्वरुपने सारी रीते समजी शके छे. सम्यग् दर्शनथी स्व स्वरुपनी यथार्थ श्रद्धा प्रतीति थइ शके छे. अने सम्यग् चारित्रथी आत्म-स्थीरता एटले स्वरुप रमण थइ शके छे. सम्यग् ज्ञान दर्शन अने चारित्रनी एकता एज मुनिपणुं छे.

३. ज्ञान दर्शन अने चारित्र मुनिपणानां भाववीज साधक छे, विभावनो त्याग अथवा स्वभावनो स्वीकार करवो एज मुनि

पणुं छे. तेवा आचरण विनानो मुनि वेष विडंबना रूपज छे, ज्ञान-वडे शुद्धाशुद्धनो हिताहितनो विवेक जागे छे. दर्शनवडे तेनी यथार्थ प्रतीति बेसे छे, अने चारित्रथी अहितना त्याग पूर्वक हित प्रवृत्ति थाय छे. उक्त ज्ञान दर्शन अने चारित्र मळीने रत्नत्रयी कहेवाय छे ए रत्नत्रयीने सम्यग् सेवनारा मुनि कहेवाय छे, उक्त मुनिनी रहेणी कहेणी एक सरखी होय छे केमके ते ज्ञान अने क्रियानो एक सरखी रीते स्वीकार करे छे अने अन्य मोक्षार्थीने पण तेवोज हितकारी मार्ग बतावी जन्म मरणनां अनंत दुःखमांथी मुक्त करवा यत्न सेवे छे.

४. मणि-रत्न हाथमां आव्या छतां तेनो आदर करी शकाय नहि तेमज तेनुं फल मेलवी शकाय नहि तो जाणवुं के मणीनी पीछानज थइ नथी के मणिनी प्रतीतिज बेठी नथी. अन्यथा मणिनुं मूल्य समजीने तेनो आदर जरुर करायज.

५. तेम जो शुद्ध आत्म स्वभावमां रमण थइ शके नहि तथा रागद्वेष मोहादिक दुष्ट दोषोनो त्याग थइ शके नहि तो ते ज्ञान के दर्शन कंइ कामनाज नथी. खरां ज्ञान अने दर्शनथी स्वरूप मगनता अने दोष हानिरुप उत्तम फल थवुंज जोइए, सहज आनंदमां मगनता थवी ए जेम उत्तम लाभ छे, तेम दुष्ट दोषोनुं दमन करी तेमनो समूलगो नाश करवो ए पण अति उत्तम लाभरुपज छे. खरं

मुनिपणुं भजनारा निर्ग्रंथ साधुओ एवो उत्तम लाभ हांसल करी शके छे.

६. जेनुं शोफ ( सोजा ) नुं पुष्टपणुं, अथवा वध्य ( वध करवा लइ जवामां आवनार ) ने शणगारवुं नकामुं छे, तेवीज आ संसारनो उन्माद अनर्थकारी छे, एम समजीने मुनि सहज संतोषी थइ रहे छे. संसारनुं असारपणुं सम्यग् विचारी संतोष वृत्तिथी जे सहजानंदमां मग्न थइ रहे छे तेज खरो मुनि-निर्ग्रंथ छे.

७. वचन नहि उच्चारवारूप मौन तो एकेंद्रियादिकमां पण होइ शके छे तेवा मौनथी आत्माने कंइ विशेष लाभ नथी, खरो लाभ तो ए छे के पुद्गलिक प्रवृत्तिमांथी विरमी सहज आत्म स्वभावमां ज मग्न थवा मन, वचन अने कायानो सदा सर्वदा सदुपयोग कर्या करवो.

८. जे समजीने विवेकथी स्वकर्तव्य बजावे छे, जेनी क्रिया दीपकना जेवी ज्ञान-ज्योतिमय छे, तेवा सम स्वभावी महापुरुषनुं ज मौन श्रेष्ट छे. समतावंत महा मुनिज श्रेष्ट मौन सेवी शके छे.

॥ १४ ॥ विद्याष्टकम् ॥

नित्य शुच्यात्मनास्थानि, रनित्याशुच्यनात्मसु ॥
अविद्या तत्त्वधीर्विद्या, योगाच [illegible] र्कीर्तिता ॥१॥
यः पश्येन्नित्य मात्मान, मनित्यं परसंगमं ॥
छलं लब्धुं न शक्नोति, तस्य मोहमलिम्लुचः ॥२॥
तरंग तरलां लक्ष्मी, मायुर्वायुवदस्थिरम् ॥
अदभ्रधीरनुध्याये, दभ्रवद् भंगुरं वपुः ॥३॥
शुचीन्यप्यशुचीकर्तुं, समर्थेऽशुचीसंभवे ॥
देहे जलादिना शौचं, भ्रमो मुढस्य दारुणः ॥४॥
यः स्नात्वा समता कुंडे, हित्वा कश्मलजं मलम् ॥
पुनर्न याति मालिन्यं सोऽन्तरात्मा परः शुचिः ॥५॥
आत्मबोधो नव [illegible] देहे [illegible] ॥
[illegible] जायते ॥६॥
[illegible] ॥
चिन्मात्र [illegible] ७ ॥

अविद्यातिमिरध्वंसे, दृशा विद्यांजनस्पृशा ॥
पश्यन्ति परमात्मान, मात्मन्येव हि योगिनः ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. अनित्य, अशुचि, अने अनात्मिक परवस्तुने नित्य पवित्र अने पोतानी लेखवी ए अविद्यानुं लक्षण छे, अने वस्तुने वस्तुगत—यथार्थ जेवा रूपमां होय तेवा रूपमां बराबर समजवी ए विद्यानुं लक्षण छे, एम योगाचार्योए शास्त्रमां कह्युं छे.

२. आत्मा नित्य अविनाशी छे, तेनो कदापि नाश थवानो नथी. सदा सर्वदा तेनी अस्तिता छे; अने आ आत्माने थतो पर संयोग विनाशशील छे, तेनो तो अवश्य वियोग थवानोज छे. एवो जेने निश्चय थयो छे तेने मोह चोरटो छली शकतो नथी. सद्विद्या संपन्न आत्मा मोहनोज जय करी अखंड सुख साधी शके छे, पण सद्विद्या विहीनने तो मोह चोरटो सदा संतापमान करे छे. माटे मोक्षार्थीए सद्विद्या संपन्न थया सर्वदा सदुद्यम सेववो.

३. निर्मल बुद्धिवालो आत्मा लक्ष्मीने जलतरंगनी जेवी चंचल लेखे छे, आयुष्यने वायुनी जेवुं अथीर लेखे छे, अने शरीरने शरदना मेघनी जेवुं क्षणभंगुर लेखे छे. एवी अथीर परवस्तुओमां विवेकवान् मुंझातो नथी.

## ॥ १४ ॥ विद्याष्टकम् ॥

नित्य शुच्यात्मताख्याति, रनित्याशुच्यनात्मसु ॥
अविद्या तत्त्वधीर्विद्या, योगाचा[illegible]कीर्तिता ॥१॥
यः पश्येन्नित्य मात्मान, मनित्यं परसंगमं ॥
छलं लब्धुं न शक्नोति, तस्य मोहमलिम्लुचः ॥२॥
तरंग तरलां लक्ष्मी, मायुर्वायुवदस्थिरम् ॥
अदभ्रधीरनुध्याये, दभ्रवद् भंगुरं वपुः ॥ ३ ॥
शुचीन्यप्यशुचीकर्तुं, समर्थेऽशुचीं संभवे ॥
देहे जलादिना शौच, भ्रमो मूढस्य दारुणः ॥४॥
यः स्नात्वा समता कुंडे, हित्वा कश्मलजं मलम् ॥
पुनर्न याति मालिन्यं सोन्तरात्मा परः शुचिः ॥५॥
आत्मबोधो नवः पाशो, देह गेह धनादिषु ॥
यः क्षिप्तोप्यात्मना तेषु, स्वस्य बंधाय जायते ॥६॥
मिथो युक्तपदार्थाना, मस[illegible]क्रिया ॥
चिन्मात्र परिणामेन, वि[illegible] ॥ ७ ॥

॥ २२ ॥ विद्याष्टकम ॥

नित्य शुच्यात्मताख्याति, रनित्या[illegible]नात्मसु ॥
अविद्या तत्त्वधीर्विद्या, योगा[illegible] [illegible]र्तिता ॥१॥
यः पश्येन्नित्य मात्मान, मनित्यं परसंगम ॥
छलं लब्धुं न शक्नोति, तस्य मोहमलिम्लुचः ॥२॥
तरंग तरलां लक्ष्मी मायुर्वायुवदस्थिरम ॥
अदभ्रधीरनुध्याये, दभ्रवद् भंगुरं वपुः ॥ ३ ॥
शुचीन्यप्यशुचीकर्तुं, समर्थेऽशुची संभवे ॥
देहे जलादिना शौच, भ्रमो मुढस्य दारुणः ॥४॥
य. स्नात्वा समता कुंडे, हित्वा कश्मलजं मलम् ॥
पुन र्न याति मालिन्यं सोऽन्तरात्मा परः शुचिः ॥५॥
आत्मबोधोनव पाशो, देह गेह धनादिषु ॥
यः क्षिप्तोप्यात्मना तेषु, स्वस्य [illegible]य जायते ॥६॥
मिथो युक्तपदार्थाना, मसंक्रमचमत्क्रिया ॥
चिन्मात्र परिणामेन, विदुषैवानुभूयते ॥ ७ ॥

४. अपवित्र एवा वीर्य तथा रुधिर विगेरेथी जेनी उत्पत्ति छे अने अशुचिमय होवाथी पवित्र वस्तुने पण अपवित्र करी नांखे छे एवा देहने जळ विगेरेथी साफ करवानो प्रयास गमे तेटलो करवामां आवे तोपण ते सर्व निष्फळज थाय छे, छतां मूढ लोकोने देह शौच करवानो मोटो भ्रम लागेलो होय छे, तेथी अशुचि मय देहने साफ सुफ करवा अहोनिश यत्न कर्या करे छे.

५. खरेखरा पवित्र शौचना अर्थीए समता रसना कुंडमां स्नान करीने सर्व पापमळनो त्याग करी पावन थवुं, जेथी पुनः मलीनपणुं थायज नहि. पूर्व महापुरुषोए आवोज उत्तम शौच पोते सेवी सर्वने हित माटे बताव्यो छे. ते मुजब जेओ वर्ते छे तेओ परम पवित्र महापुरुषोनी गणनामां आवे छे.

६. जेओ देहादिक परवस्तुओमां ममता बांधे छे तेओ बापडा पोतेज बंधाइ जाय छे, एम समजीने सुविवेकी जनो परवस्तुओमां आसक्ति धारता नथी.

७. विद्वान् पुरुष ज्ञान चक्षुथी सर्व पदार्थने स्वस्वभावमांज रहेता देखे छे. संयुक्त वस्तुनो वियोग थाय छे, पण कोइ वस्तु पोतानो मूळ स्वभाव तजी देती नथी, एम ज्ञानी पुरुषो साक्षात् अनुभवी पोते स्वस्वभावमांज स्थित रहे छे. रागद्वेषने तजी सर्वत्र समभावथीज अनुवर्तन करनाराज विद्वान् गणाय छे.

८. सद्विचाररूपी अंजनशलाका (सळी) थी अविवेकरूपी अंधकार नष्ट थये छते योगी पुरुषो पोताना घटमांज परमात्माने साक्षात् देखे छे. सद्विवेकवान् योगी सर्व विभावने दूर करीने परमात्म भावने साक्षात् अनुभवे छे.

---

## ॥ १५ ॥ विवेकाष्टकम् ॥

कर्म जीवं च संश्लिष्टं, सर्वदा क्षीर नीरवत् ॥
विभिन्नी कुरुते यो ऽसौ, मुनिहंसो विवेकवान् ॥१॥
देहात्माद्य विवेको ऽयं, सर्वदा सुलभो भवे ॥
भव कोट्यापि तद् भेद, विवेकस्त्वति दुर्लभः ॥२॥
शुद्धे ऽपि व्योम्नि तिमिरा, द्रेखाभिमिश्रता यथा ॥
विकारे र्मिश्रता भाति, तथात्मन्य विवेकतः ॥ ३ ॥
यथा योधैः कृतं युद्धं, स्वामिन्येवोपचर्यते ॥
शुद्धात्मन्य विवेकेन, कर्म स्कंधो ऽर्जितं तथा ॥ ४ ॥
इष्टकाद्यपि हि स्वर्णं, पीतोन्मत्तो यथेक्षते ॥
आत्माभेदभ्रमस्तद्व, देहादावविवेकिनः ॥ ५ ॥

तेम अविवेकीने पण देहादिक बाह्य पदार्थोमां आत्म भ्रम पेदा थाय छे, जेम धतूरो पीवाथी सर्वत्र देखातुं सोनुं साचुं नथी तेम अविवेकथी देहादि पदार्थोमां मानी लीधेलुं पोतानापणु पण मिथ्याज छे. जेम चढेलो छाक उपशान्त थये छते मामी वस्तु जेवी होय तेवी देखाय छे. तेम सद्विद्यायोगे सुविवेक जागवाथी देहादिक बाह्यभावोमां प्रथम थयेलो भ्रम भांगी केवल साक्षीपणुंज राखवुं सूजे छे. ए सर्व सद्विवेकनोज प्रभाव छे. ॥

६. बाह्यभावने इच्छनो छतो जीव विवेक थकी चूके छे, अने उच्च–अंतरभावनी अभिलाषायकी जीवने विवेकथी चूकवानुं बनतुं नथी. पुद्गलिक सुखनी वांछाथी जीव सद्विवेकने चूकी अविवेकने आदरे छे. जेम डुंगर उपर चढतां आडुं अवलुं जोनार सरत चूकथी नीचे पडे छे, तेम स्वार्थ अंध बनी परमार्थ पंथ चूकवाथी प्राणी अधोगति पामे छे, माटे मोक्षार्थी पुरुषोए तुच्छ इच्छाओने शमावी दइने सद्विवेकपूर्वक सदा परमार्थ दृष्टि ज राखी रहेवुं युक्त छे. परमपदना अभिलाषी पुरुषो पुरुषार्थ योगे परमपदने साधी शके छे. ॥

७. जे सर्व बाह्य भावने छंडीने अंतर आत्मपणाथी सहज स्वभावनेज सेवे छे, सदा आनंदमां जे मस्त रहे छे तेवा महा पुरुषने अविवेकजन्य जड भावमां मग्नता क्यांथी होय ? जे स्व-

थावमां मग्न रहे छे तेनो कदापि अविवेक पराभव करी शकतोज नथी. अविवेकज सर्व दुःखनुं मूळ छे. ॥

८- जेणे विवेक-शराणथी उत्तेजित करेलुं निर्मल परिणामनी धारवाळुं संयम-शस्त्र धारण कर्युं छे, ते सुखेथी कर्म शत्रुने विदारी शके छे. जो विवेक पूर्वक संयम सेववामां आवेतो परिणामनी शुद्धिथी शीघ्र पाप कर्मनो क्षय थइ शके छे. सद्विवेक विना सर्वज्ञ कथित स्याद्वादमार्ग आराधी शकातो नथी. सद्विवेक वडे द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भावने सम्यग् समजी संयम सुखे सेवी शकाय छे. विवेक विना संयममार्गमां स्थाने स्थाने स्खलना थाय छे, माटे सद्विवेक सर्वदा सेव्य छे. ॥

॥ १६ ॥ माध्यस्थाष्टकम् ॥

स्थीयतामनुपालंभं, मध्यस्थेनां तरात्मना ॥
कुतर्क कर्करक्षेपै, स्त्यज्यतां बालचापलं ॥ १ ॥
मनो वत्सो युक्ति गवीं, मध्यस्थस्यानुधावति ॥
तामाकर्षति पुच्छेन, तुच्छाग्रहमनः कपिः ॥ २ ॥
नयेषु स्वार्थ सत्येषु, मोघेषु परचालने ॥

५. ज्यां सुधी पोतानुं मन पारका गुणदोष जोवा दोराइ ज
होय त्यां सुधी मध्यस्थ माणसे तेने आत्मभावमां जोडी देवुं योग
छे. ज्यां सुधी मन स्वगुणमां स्थिर न थाय अथवा आत्म अवगु
ओळखी तेने दूर करवा तत्पर न थाय त्यां सुधी पवित्र ज्ञान ध्या
-ना अभ्यासथी समतानी वृद्धि करवी.

६. जेम नदीओना रस्ता जूदा जूदा छता ते सर्वे समुद्रने ज
मळे छे, तेम जूदां जूदां साधनो छतां मध्यस्थमनो अवश्य मोक्ष पा
छे. मध्यस्थता सर्व सुखनुं मूळ छे. मध्यस्थ माणस सर्व साथे मैत्री
-भाव राखी शके छे, तेमज सर्व गुणवंतमांथी गुण ग्रहीशकेछे. म
-ध्यस्थनुं हृदय दयार्द्र होय छे तथा मध्यस्थ गमे तेवा निर्दय उप
-पण रोष राखतो नथी. मध्यस्थज मोक्ष सुखनो अधिकारी छे.

७. अमे राग मात्रथी जिन आगमने मानता नथी, तेमज द्वे
-मात्रथी अन्य आगमनी उपेक्षा करता नथी किंतु मध्यस्थ दृष्टिथी स
-त्यासत्यनो निर्णय करीने तेम करीये छीये.

८. तेमज मध्यस्थ दृष्टिथीज सर्वनुं हित इच्छी अधिकारी वर्गने
-माटे आवो हितोपदेश आपीये छीये. तेमांथी कोइ अंश रुचिथी सें
-चनार मध्यस्थनुं अवश्य कल्याण थवुं संभवे छे.

## ॥ १७ ॥ निर्भयाष्टकम् ॥

यस्य नास्ति परापेक्षा, स्वभावा द्वैतगामिनः ॥
तस्य किं न भयभ्रान्ति, क्लान्तिसंतान तानवं ॥१॥
भव सौख्येन किं भूरि, भयज्वलन भस्मना ॥
सदा भयोज्झितं ज्ञानं, सुखमेव विशिष्यते ॥ २ ॥
न गोप्यं क्वापि नारोप्यं, हेयं देयं च न क्वचित् ॥
क भयेन मुनेः स्थेयं, ज्ञेयं ज्ञानेन पश्यतः ॥ ३ ॥
एकं ब्रह्मास्त्रमादाय, निघ्नन् मोहचमूं मुनिः ॥
बिभेति नैव संग्राम, शीर्षस्थ इव नागराट्॥ ४ ॥
मयूरी ज्ञान दृष्टिश्चेत्, प्रसर्पति मनोवने ॥
वेष्टनं भयसर्पाणां, न तदानंदचंदने ॥ ५ ॥
कृतमोहास्त्रवैफल्यं, ज्ञानवर्म बिभर्त्ति यः ॥
क भीस्तस्य क वा भंगः, कर्म संगरकेलिषु ॥६॥
तूलवल्लघवो मूढा, भ्रमन्त्यभ्रेभयानिलैः ॥
नैकं रोमापि ते र्ज्ञान, गरिष्ठानां तु कंपते ॥ ७ ॥

चित्ते परिणतं यस्य, चारित्रमकुतोभयं ॥
अखंडज्ञानराज्यस्य, तस्य साधोः कुतो भयं ॥ ८ ।

॥ रहस्यार्थ ॥

१. जेने कोइनी कंइपण परवा नथी एवा एक सरखा उद
सीन स्वभाववाळा महापुरुषने भय भ्रांति जन्य कष्ट परंपरा होय
केम ? मध्यस्थ दृष्टि महापुरुष सदा निर्भय भयभ्रांतिथी मुक्त
रहे छे.

२. भारे भयथी भरेला संसार सुखथी शुं ? तेथी सर्युं. भय
भरेलुं सुख ते दुःखरूपज छे. सर्वथा भय रहित सहज आत्मिक
सुखज सुखरूप गणवा योग्य छे. आधि व्याधि अने उपाधि जन्य दुःखथी
भरेला संसारमां सुखमात्र नामनुंज छे. जन्म मरणथी मुक्त करे एवं
स्वभाविक ज्ञान सुखज सायुं छे.

३. सम्यग् ज्ञानवडे ज्ञेय-पदार्थने यथार्थ जोनार मुनिने भय
राखवानुं शुं प्रयोजन छे ? सहज सुखमां झीली रहेला मुनिने पुद्
गलिक सुखनुं प्रयोजन नथी. पुद्गल उपरथी मूर्च्छा उठी जवाथी
सहज निवृत्ति सुख संपजे छे.

४. निर्मल ज्ञानरूपी-शस्त्रने धारी, मोहनी फोजनो घात करनार मुनि संग्रामना मोखरे उभेला हाथीनी पेरे लगारे बीता नथी. तीक्ष्ण ज्ञान धारावडे सावधानपणे सकळ मोह सुभटोने विदारी नांखी शिवश्रीने संपादन करे छे.

५. जेना मनमां खरी ज्ञानकला जागी छे ते सदा भय रहित आनंदमां मस्त रहे छे, जे वनमां मयूरो विचरे छे त्यां भुजंगनो भय होयज केम ? ज्यां केसरी क्रीडा करतो होय त्यां गजनो प्रचार संभवेज केम ? ज्यां जळहळतो सूर्य उदय पाम्यो होय त्यां अंधकार रहेवा पामेज केम ? तत्त्व दृष्टि पण तेवीज प्रभाववाळी छे.

६. मोहास्त्रने निष्फल करवा समर्थ ज्ञान बख्तर जेणे धार्युं छे तेने कर्म संग्राममां भय के भंग होयज शानो ? तत्त्व दृष्टिने मोहनो भयज नथी. ते गमे तेवा सम या विषम संयोगोमांथी सावधानपणे पसार थइ जाय छे.

७. मोहथी मुंझायेला जीवो भयभीत थका भव अटवीमां भम्याज करे छे. मूढ जीवो भयभीत थका कंप्याज करे छे. परंतु प्रबळ ज्ञानवंतनुं तो एक पण रुंवाडुं कंपतुं नथी. ते तो निर्भयपणे स्वभाविक आत्म सुखमां मग्न रहे छे.

८. जेना चित्तमां निर्भय चारित्र परिणम्युं छे एवा अखंड

ज्ञान नेत्रथी नयना साधु मुनिराजने शाथी भय संभवे ? शुद्ध चारित्रवंतने कशो भय नथी. शुद्ध चारित्र सर्व भयने दूर करी अखंड अनंत सुख साधी शके छे.

॥ १८ ॥ अनात्मशंसाष्टकम् ॥

गुणैर्यदि न पूर्णोऽसि, कृतमात्म प्रशंसया ॥
गुणैरेवासि पुर्णश्चेत्, कृतमात्म प्रशंसया ॥ १ ॥
श्रेयोद्रुमस्य मूलानि, स्वोत्कर्षांभः प्रवाहनः ॥
पुण्यानि प्रकटी कुर्वन्, फलं किं समवाप्स्यसि ॥ २॥
आलंबिता हिताय स्युः, परैः स्वगुणरश्मयः ॥
अहो स्वयं गृहीतास्तु, पातयन्ति भवोदधौ ॥३॥
उच्चत्व दृष्टि दोषोत्थ, स्वोत्कर्षज्वर मंज्ञिकं ॥
पूर्वपुरुष सिंहेभ्यो, भृशं नीचत्व भावनं ॥ ४ ॥
शरीररुप लावण्य, ग्रामारामधनादिभिः ॥
उत्कर्षः परपर्यायै, श्चिदानन्द घनस्यकः ॥५॥
शुद्धाः प्रत्यात्म साम्येन, पर्यायाः परिभाविताः ॥
अशुद्धाश्चा ऽपकृष्टत्वान्, नोत्कर्षाय महामुनेः ॥ ६ ॥

क्षोभं गच्छन् समुद्रोऽपि, स्वोत्कर्षपवनेरितः ॥
गुणौघान् बुद् बुदी कृत्य, विनाशयसि किं मुधा ॥७॥
निरपेक्षानवच्छिन्ना, नंतचिन्मात्रमूर्तयः ॥
योगिनो गलितोत्कर्षा, प्रकर्षानल्पकल्पनाः ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. जो तुं गुणोथी पूर्ण नथी तो आत्म-प्रशंसा करवाथी सर्युं तेमज जो तुं गुणथी पूर्ण छे तोपण आत्म-प्रशंसा करवानुं कंइपण प्रयोजन नथी. केमके गुणहीनने खोटी आत्म प्रशंसाथी कंइ फायदो थतो नथी. तेमज संपूर्ण गुणवंतने कृत कृत्यपणाथी स्पृहा नष्ट थइ जवाथी पोतानी प्रशंसा पोताना मुखे करवानुं कंइ पण प्रयोजन रहेतुंज नथी.

२. जेम जलना प्रबल प्रवाहथी वृक्षनां मूलाडीयां उघाडां पडी जवाथी तेने फल बेसतां नथी, तेम आत्म-उत्कर्षथी करेलां सुकृतोने प्रगट करी वखाणवाथी विशिष्ट आत्म लाभ संपादन थइ शकतो नथी.

३. आपणा गुणोनुं बीजा अवलंबन करे ते हितकारी थाय छे, पण जो पोताना गुण पोतेज गावा बेसे तो तेथी अधोगतिनी प्राप्ति थाय छे. गुणग्राही जनोने गुणीना गुण गावा उचित अने हितकारी छे पण गुणी माणसे स्वमुखे स्वगुण गावा अनुचित अने अहितकारीज छे. माटे मोक्षार्थी जनोए सदा गुणग्राही थवा साथे आत्मश्लाघानो सर्वथा त्याग करवो उचित छे. स्वश्लाघार्थी प्राणी लघुताने ज पामे छे.

४. आपणामां अन्य करतां अधिकता मानवारूपी दोषथी उत्पन्न थयेला स्वाभिमानरूपी ज्वरने शान्त करवानो उत्तम उपाय एज के आपणे पूर्व पुरुष सिंहोथी लघुता भाववी. पूर्व पुरुष सिंहोना पवित्र चरित्रने सारी रीते संभारी याद लावतां आपणुं गुमान आपो आप गळी जाय छे.

५. शरीर, रूप, लावण्य, ग्राम, आराम, अने धन विगेरे पर पर्यायोवडे स्व उत्कर्ष मानवो आत्मानंदी जीवने बिलकुल उचित नथी. तेवी वस्तु वडे तो केवळ पुद्गलानंदी जीवोज गर्व करे छे, पण आत्मानंदी करता नथी.

६. ज्ञानादिक शुद्ध पर्यायो पण प्रत्येक आत्माने सरीखा होवाथी अने शरीर विगेरे अशुद्ध पर्यायो अपकृष्ट ( नजीवा ) होवाथी ते वडे महामुनिने स्वोत्कर्ष करवो लायक नथी. शुद्ध पर्यायोवडे

पण गर्व करवो युक्त नथी तो नजीवा शरीररूप लावण्यादिक अशुद्ध पर्यायोवडे तो गर्व करवोज केम घटे ?

७. गुरु महाराज शिष्यने उपदेशेछे के भाइ तुं दीक्षित छतां स्वोत्कर्ष वडे संयमनो शोष करीने गुण रत्नोनो व्यर्थ विनाश शा माटे करे छे ? गमे तेटला गुणने पामेलो संयमी स्वगुणनो गर्व करवाथी हानिज पामे छे.

८. स्पृहा रहित अने अखंड अनंत ज्ञाननाज नमुनारूप योगी जनो स्व उत्कर्ष अने पर अपकर्ष संबंधी सर्व कल्पनाओथी मुक्तज रहे छे. स्व स्वरूपमां स्थित योगीजनो केवल निःस्पृह होवाथी आप बढाइ के परनिन्दा करताज नथी. तेओ तो परम गुणमय निवृत्ति मार्गज पसंद करे छे, पर परिणतिरूप कुत्सित प्रवृत्ति तेमने पसंद पडतीज नथी.

---

॥ १९ ॥ तत्त्वदृष्ट्यष्टकम् ॥

रूपे रूपवती दृष्टि, र्दृष्ट्वा रूपं विमुह्यति ॥
मज्जत्यात्मनि नीरूपे, तत्त्वदृष्टिस्त्वरूपिणी ॥ १ ॥
भ्रमवाटी बहिर्दृष्टि, र्भ्रमच्छाया तदीक्षणं ॥

अभ्रान्तस्तत्त्वदृष्टिस्तु, नास्यां शेते सुखाशया॥ २ ॥
ग्रामारामादि मोहाय, यद्दृष्टं बाह्ययादृशा ॥
तत्त्वदृष्ट्या तदेवांत, र्नीतं वैराग्य संपदे ॥ ३ ॥
बाह्यदृष्टिः सुधा सार, घटिता भाति सुंदरी ॥
तत्त्वदृष्टेस्तु सा साक्षा, द्विण्मूत्रपिठरोदरी ॥ ४ ॥
लावण्य लहरी पुण्यं, वपुःपश्यति बाह्यदृक् ॥
तत्त्वदृष्टिः श्वकाकानां, भक्ष्यं कृमिकुलाकुलं ॥ ५ ॥
गजाश्वैर्भूपभवनं, विस्मयाय बहिर्दृशः ॥
तत्राश्वेभवनात्कोऽपि, भेदस्तत्त्वदृशस्तुन ॥ ६ ॥
भस्मना केशलोचेन, वपु र्धृतमलेन वा ॥
महान्तं बाह्यदृग्वेत्ति, चित्साम्राज्येन तत्त्ववित्॥७॥
न विकाराय विश्वस्यो, पकारायैवनिर्मिताः ॥
स्फुरत्कारुण्यपीयूष, वृष्टयस्तत्त्व दृष्टयः ॥ ८ ॥

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. बाधदृष्टि जीव पुद्गलिक रूप जोइने मुंझाय छे–मूढ बनी जाय छे, पण अरूपी एवी तत्त्व दृष्टि तो निर्मल निराकार आत्म स्वरूपमांज मग्न थइ रहेछे. बाधदृष्टि बहार दोडे छे. अने अंतरदृष्टि स्वभावमां रमे छे.

२. बाधदृष्टि ए भ्रमनी वाडी छे अने बाह्यदृष्टिथी जोवुं ए भ्रमनी छाया छे. तेमां भ्रांति रहित तत्त्वदृष्टि तो सुखनी आशाथी सूतो नथी. पण पुद्गलानंदी–बाधदृष्टि जरूर तेमां सुख बुद्धिथी विश्रांति करे छे.

३. गाम, आराम आदि बाधदृष्टिथी जोतां जरूर जीवने मोह उपजावे छे, पण तत्त्वदृष्टिथी जोतां तो ते वैराग्यरसनी वृद्धि माटेज थाय छे. बाधदृष्टि जीव मधनी मांखीनी जेम तेमां मुंझाइ मरे छे, पण तत्त्वदृष्टि तो साकरनी मांखीनी पेरे मिष्ट स्वाद लइ तेमांथी सुखे मुक्त थइ शके छे. तत्त्वदृष्टिपणुं जागतां चक्रवर्ती पोते पोतानी सकल समृद्धिने सहजमां तजी दइ संयमनो स्वीकार करे छे. परंतु मूढ दृष्टि एवो भीखारी पोतानुं रामपात्र पण त्यजी शकतो नथी. ए सर्व मोहनोज महिमा छे.

४. बाधदृष्टि जीव, सुंदरी ( स्त्री ) ने अमृतना निचोडथी घ-

देखी माने छे, पण तत्त्वदृष्टि तो तेणीने विष्टा मूत्रादिक अशुचियुक्त देहवालीज माने छे. बाह्यदृष्टि कोइ सुंदर स्त्रीने देखी तेणीना रूप-लावण्यमां मुंझाइ तेमां पतंगनी पेरे झंपलाय छे, पण तत्त्वदृष्टि तो तेणीने अशुचिमय समजीने तेथी तदन दूरज रहेवा इच्छेछे. तत्त्वदृष्टि विषय सुखने विष समानज लेखे छे.

५. बाह्यदृष्टि जीव शरीरने लावण्य लहरीथी पवित्र माने छे, पण तत्त्वदृष्टि तो नाना प्रकारना कर्मीयां विगेरेथी भरपूर देहने फक्त कागडा कुतरावडे भक्षण करवा योग्यज माने छे. तेने बाह्यदृष्टिनी पेरे क्षणिक, अशुचि अने भौतिक देह प्रपंचमां मुंझाइ स्वकर्तव्य विमुख थवानुं होतुं नथी. ते तो क्षण विनाशी देह द्वारा बनी शके तेटलुं स्वहित साधी लेवा सावधान थइ रहे छे पण विनाशी देहनो विश्वास करतोज नथी.

६. बाह्यदृष्टि जीव राजाना महेलमा हाथी घोडानी साहेबी जोइ चकित थइ जाय छे, परंतु तत्त्वदृष्टिने तो तेमां हाथी घोडाना वनथी कंइ विशेष लागतुं नथी. तेने तो तेवो महेल अने तेवुं वन समानज लागे छे.

७. बाह्यदृष्टि जीव, भस्म लगाववाथी, केशनो लोच करवाथी अने मलमलीन देह राखवाथी कोइने महंत माने छे. पण तत्त्वदृष्टि तो तेनी अंतर समृद्धिथीज तेने तेवो लेखे छे. तत्त्वदृष्टि आत्मा

बाह्यदृष्टिनी पेरे उपरना ढोलदिमाक मात्रथी कोइने मोटो मानी लेता नथी. तेतो तेना सद्भूत गुणोनी सारी रीते परीक्षा करीनेज तेम माने छे.

८. अत्यंत करुणारुपी अमृतने वर्षनारा तत्त्वदृष्टि पुरुषो विश्वना तिलमात्र अहितने माटे नहिं, किंतु केवळ उपकारने माटेज निर्माण थयेला छे तत्त्वदृष्टि महापुरुषोनो जन्म लोकना अभ्युदय माटेज थाय छे. तेओ परमार्थथी अंधलोकोने, आंखो आपीने उद्धरेछे. तेओ परमार्थ पंथ थवाथीने अवळे रस्ते चडेलाओने रावळे रस्ते दोरे छे. तेओज अनाथना नाथ अने अशरणना शरण छे. तेओज विश्वना खरा मित्र, बंधु के पिता छे, अने तेथीज सदा शुखना अर्थी जनोवडे अवलंबवा योग्य छे. तेवा निःस्वार्थ मित्र विना विश्वनो कदापि उद्धार थवानोज नथी. ज्यारे त्यारे तेवा निष्कारण बंधु मध्येज मुक्ति मळवानी छे तेथी मोक्षार्थी जनोए तेवा जगत् बंधुनीज जपमाळा गणवी योग्य छे. तेवा परोपकारी हितानी सेवा साचा दिलथी करनारा साधक पुरुषोनी सिद्धि ज्यां त्यां सुखेथी थइ शके छे, माटे तेम करवा योग्य छे.

## ॥ २० ॥ सर्व समृद्धि—अष्टकम् ॥

बाह्यदृष्टि प्रचारेषु, मुद्रितेषु महात्मनः ॥
अंतरेवावभासन्ते, स्फुटाः सर्वास्समृद्धयः ॥ १ ॥
समाधि नंदनं धैर्यं, दंभोलिः समता शची ॥
ज्ञानं महा विमानं च, वासवश्रीरियं मुनेः ॥ २ ॥
विस्तारित क्रिया ज्ञान· चर्म छत्रो निवारयन् ॥
मोहम्लेच्छ महावृष्टिं, चक्रवर्ती न किं मुनिः ॥ ३ ॥
नवब्रह्मसुधाकुंड, निष्ठाधिष्ठायको मुनिः ॥
नागलोकेशवद् भाति· क्षमां रक्षन् प्रयत्नतः ॥ ४ ॥
मुनिरध्यात्म कैलाशे विवेक वृषभ स्थितः ॥
शोभते विरतिज्ञप्ति, गंगागौर्य्युत शिव ॥ ५ ॥
ज्ञानदर्शनचंद्रार्क, नेत्रस्य नरकच्छिदः ॥
सुखसागर मग्नस्य, किं न्यूनं योगिनो हरेः ॥ ६ ॥
या सृष्टिर्ब्रह्मणो बाह्या, बाह्यापेक्षावलंबिनी ॥
मुनेः परान पेक्षांत, गुणसृष्टि स्ततो ऽधिका ॥७॥

रत्नै स्त्रिभिः पवित्रा या, श्रोतोभि रिव जान्हवी
सिद्धयोगस्य साप्यर्हत्, पदवी न दवीयसी ॥८॥

## ॥ रहस्यार्थ ॥

बाघदृष्टिपणानो दोष नष्ट थये छते महात्मा पुरुषने अंतर
सर्व समृद्धि स्फुटतर भासे छे. आम थवाथी तत्त्वदृष्टिपणुं अ
कायिक निर्मल थतुं जाय छे निर्मल तत्त्वदृष्टिना योगे सकल स
सहज धर्मो प्रगटे छे. जेथी सहजानन्द युक्त थवाथी विषया
विगेरे विकारो स्वतः विनाश पामे छे. अने निर्मल ज्ञानादि
गुणो पूर्ण रीते प्रगटे छे.

२. समाधिरूपी नंदनवन, धैर्यरूपी वज्र, समतारूपी इंद्र
अने ज्ञानरूपी विशाल विमान, एवी इंद्रनी साहेबी मुनिने घ
प्रगटे छे. तत्त्वदृष्टि निर्ग्रंथ मुनिराजने इंद्रथी अधिक साहेबी
मां प्रगटे छे.

३. विशाल ज्ञान अने क्रियारूपी धर्मरत्न अने छत्र
मोहरूपी म्लेच्छ राजानी महावृष्टिने निवारता मुनिराज चक्र
बराबरी करे छे. निर्मल ज्ञान दर्शन अने चारित्ररूपी रत्नत्रयी

बाधक मुनिराज कोइ रीते शकरार्थी न्युन नथीज, किंतु अधिक ज छे.

४. ज्ञानना ज्ञानामृतना कुंडमां मग्न रही प्रयत्नथी क्षमानुं पालन करनारा मुनि, पृथ्वीनुं पालन करनारा नागेंद्रनी पेरे शोभे छे. अध्यात्म ज्ञानरुपी अमृतना कुंडमांज मग्न रही सहज शांतिने साक्षात् अनुभवनारा क्षमाश्रमणो आत्मगुणथी नागेंद्र करतां अधिक शोभे छे.

अध्यात्मरुपी कैलाशमां विवेकरुपी वृषभ उपर आरुढ थयेला मुनिशक्ति (ज्ञान) अने निवृत्ति ( चारित्र ) युक्त होवाथी गंगा अने गौरी युक्त शिव-शंकरनी पेरे शोभे छे. तत्वथी जोतां अध्यात्म गिरिना उच्च शिखर उपर रहेला अने सद्विवेक वृषभ उपर स्वार थइ सम्यग् ज्ञानक्रियाने समतार्थी सेवनारा निर्ग्रंथ अणगारो सद्-गुणोमां कोइ रीते शिव-शंकरथी उतरता नथी.

६. ज्ञान अने दर्शनरुपी चंद्र अने सूर्य जेवां निर्मल नेत्रोवाळा, नरकने छेदवावाला अने सुखसागरमां शयन करनारा मुनिराज कोइ रीते हरिथी न्युन नथी. परमार्थथी विष्णु करतां वधारे समृद्ध छे

७. परस्पृहारहित सहज अंतरगुण सृष्टिने करनारा मुनिराज बाह्य वस्तुओनी अपेक्षावाली बाह्य सृष्टिने रचनार ब्रह्मा करतां बहु चढि-

[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥

[illegible] ॥
[illegible] ।

[illegible] ।

[illegible]
[illegible] के
[illegible] ने
[illegible] विषा-
[illegible]

२. जेमनी भृकुटी फरतां पर्वतोनो पण भुक्को थइ जाय एवा भूपोने विषमकर्म योगे भिक्षा सरखी पण मळती नथी. दैव विपरीत छते मोटा भूपालने पण पेट भरवाने फांफां मारवां पडे छे.

३. उत्तमजाति अने चतुराइ रहित छतां अत्यंत अनुकूल कर्म योगे क्षणवारमां रंक पण एक छत्र राज्य पामे छे. प्रबळ पुन्यनो उदय थये छते भीखारी जेवो माणस पण विशाळ राज्यवाळो राजा थइ पडे छे.

४. कर्मनी रचना ऊंटना अढारनी जेवी वांकीज छे जेमके, जाति-कुळ, बुद्धि, बळ, ऐश्वर्य मनुष्यमां प्रगट विषमता देखाय छे, सर्व कोइने ते एक सरखां होतां नथी. पूर्वकृत कर्मअनुसारे ते सारां नरसां के चढतां पडतां होइ शके छे. कर्मनी विचित्रता प्रमाणे फळनी विचित्रता समजनारा सुज्ञजनोने तेवी विषम स्थितिमां रति-प्रीति होवी घटे नहिं, तेमने मात्र सुख दुःखमां समभावज राखवो युक्त छे.

५. अहो ! अति आश्चर्यनी वात छे के उपशमश्रेणि उपर आरूढ थयेला श्रुतकेवळी ( चौद पूर्वधर ) मुनियो पण दुष्ट कर्मना योगे पतित थइने अनंत संसार परिभ्रमण करे छे. त्यारे आवा सर्व पुरुषोने पण कर्मविपाक छोडे छे तो बीजा सामान्य प्राणीओनुं

तो शुं कहेवुं ? दुष्ट कर्मनी प्रबलता पासे प्राणीओनुं कंइ पण चालतुं नथी.

६. आत्म साधकनी सकल सामग्री कार्यसिद्धि थया पहेलांज थाकी गइ होय तेम अटकी पडे छे. पण कर्म–विपाक तो स्वकार्य पर्यन्त कर्मकारकने अनुसर्या करे छे. ते तो तेनुं शुभाशुभ फल तेना करनारने चखाड्या विना निरांतोज नथी. कर्मना प्रबल वेगने कोइ रोकी शकतुं नथी. कर्मनो विपाक पोतानी पूर्ण सत्ता कर्मना करनारनी उपर वजावे छे. कायर पुरुष तेनी पासे फावी शकतो नथी. समर्थ साधक तो रागद्वेष कर्मनी जड काढी सकल कर्मनुं मूलथीज निकंदन करे छे.

७. आ कर्म विपाक [illegible] संसारी जीवना कर्मने जोतां ओर्ता- [illegible] जोइने भारे दुःखी थाय छे. [illegible] अत्यार सारी छे. ते परम पवित्र धर्म महाराज [illegible] छे. धर्मराजानुं शरण लेनार प्राणि पोतानुं वैर [illegible] करे छे. अने [illegible] तो वैर वाळवानुं भूलतो नथी. सर्व तेवडी आपत्ति उपाधि पापीओने [illegible] दुःखी थइने रखडवा पडे छे. आवा दुष्ट कर्म- [illegible] तेनी [illegible] सामे [illegible] अंगे, रागद्वेषना समूळगो नाश करवाथी मोहनो [illegible]

क्षय थाय छे, अने मोहनो क्षय थवाथी सकल कर्म वर्गनो स्वतः क्षय थइ जाय छे.

८. कर्मना विपाकने हृदयमां चिंतवतो छतो जे सम विषम स्थितिमां समभावज राखे छे—तेवे वखते जे हर्ष विषाद पामतो नथी, तेज महापुरुष ज्ञानामृतनो रस चाखवा समर्थ थइ शके छे. तेवा समर्थ पुरुष सहज सहजानंद मग्न थइ अंते अखंड शाश्वत सुखना भागी थइ शके छे.

---

## ॥ २२ ॥ भव-उद्वेगाष्टकम् ॥

यस्य गंभीर मध्यस्या, ज्ञानं वज्रमयं तलं ॥
रुद्धा व्यसनशैलौघैः, पंथानो यत्र दुर्गमाः ॥१॥
पाताल कलशा यत्र, भृतास्तृष्णा महानिलैः ॥
कषायाश्चित्त संकल्प, वेला वृद्धिं वितन्वते ॥२॥
स्मरौर्वाग्निर्ज्वलत्यंत, र्यत्र स्नेहेंधनः सदा ॥
यो घोर रोगशोकादि, मत्स्यकच्छप संकुलः ॥३॥
दुर्बुद्धि मत्सरद्रोहै, र्विद्युद्दुर्वात गर्जितैः ॥
यत्र सांयात्रिका लोकाः, पतन्त्युत्पात संकटे ॥४॥

ज्ञानी तस्माद् भवांभोधे, र्नित्योद्विग्नोऽति दारुणात् ।
तस्य संतरणोपायं, सर्वयत्नेन कांक्षति ॥ ५ ॥
तैल पात्रधरो यद्व, द्राधावेधोद्यतो यथा ॥
क्रिया स्वनन्य चित्तःस्या, द्भवभीत स्तथा मुनिः ॥६॥
विषं विषस्य वन्हेश्च, वन्हिरेव यदौषधं ॥
तत्सत्यं भवभीताना, मुपसर्गेऽपि यन्नभीः ॥ ७ ॥
स्थैर्यं भवभयादेव, व्यवहारे मुनिर्व्रजेत ॥
स्वात्माराम समाधौ तु, तदप्यंतर्निमज्जति ॥ ८ ॥

---

॥ रहस्यार्थ ॥

[illegible] मां उद्विग्न–उदासी थयो छतो जेम [illegible] करे छे [illegible] भव समुद्रनुं स्वरूप [illegible] छे–[illegible] बहु ऊंडो छे. जन्म मरणादिक जन्य अनंत दुःखरूप जल राशिथी अगाध भरेलो छे. तेनुं अज्ञान रूप वज्रमय तळुं छे–अज्ञान अविवेक या मिथ्या [illegible] स्थिति रहेली छे. अज्ञानना जोरथीज चार गति या ८४ लाख जीवायोनिमां पुनः पुनः भटकवा करी

संसार भ्रमण थाय छे; तथा आधि, व्याधि अने उपाधि जन्य अनेक कष्ट रूपी पर्वतोथी जेनो थाट विषम छे. आवी विषम स्थितिमां जीवने परिभ्रमण करवुं पडे छे. छतां अज्ञान वशवर्ती जीवो तेथी उद्विग्न (विरक्त) थता नथी.

२. वळी जेमां तृष्णारूपी तोफानी पवनथी प्रेरेला क्रोधादि कषायोरूपी चार मोटा पाताल कलशा विविध विकल्परूपी वेलाने वृद्धि करे छे, संसारी जीव तृष्णा तरंगमां तणाता कषायने वशवर्ती चित्तमां संकल्प विकल्पोने पेदा करी परम दुःखनो भागी थाय छे, छतां अज्ञानना जोरथी विषय तृष्णाने तजी तेओ क्लिष्ट कषायोने जीती मुख्य समाधि साधवा अल्प पण प्रयत्न सेवी शकता नथी. एवा अज्ञानी जीवो आप मतिथी अवळा चाली दुःख दावानलमां स्वयंपपात तेमां आश्चर्य शुं ?.

३. वळी जेमां काम–अग्निरूपी वडवानल बळी रह्यो छे, जे स्नेहरूपी इंधनथी सदा जाज्वल्यमान रहे छे, अने भयंकर रोग शोकादि मच्छ कच्छपोथी जे चोतरफ व्याप्त दीसे छे, छतां अविवेकी जीवो तेमांज रति धारण करी मुंझाय छे पण अत्यन्त दुःखराशिथी मुक्त थवा प्रयत्न करता नथी. आवा विवेक शून्य संसारीनी वारंवार विडंबना थया करे छे. ॥

४. वळी दुर्बुद्धि, मत्सर, अने द्रोहरूपी विजळी, वंटोळीया:

अने गर्भारत्र वडे जेमां भ्रमण करनारा लोको विविध उत्पातना संकटमां आवी पडे छे छतां जड–यात्रा (पुद्गल–प्रेम) ने तजी तन्मयपणे तीर्थ–यात्रादिक धर्मकरणी करता नथी. आवा पुद्गलानंदी जीवोने पराधीनपणे अनेक आपदाओ वेठवी पडे छे. एम समजीने आत्मकल्याण साधवाने समयज्ञ पुरुष शुं करे छे ते शास्त्रकार पोतेज जणावे छे. ॥

५ आवा भयंकर भवसमुद्रथी अत्यन्त उद्वेग पामेलो ज्ञानी पुरुष तेने तरी पार जवानो उपाय सर्व यत्नथी आदरे छे. समयज्ञ पुरुष आवा भयंकर संसारने तरवा प्रमादने तजी रत्नत्रयीनुं सम्यग् सेवन करे छे. ॥

६. जेवी रीते संपूर्ण तेलना पात्रने हाथमां लइ चालनार तेम ज गागरने धारनार सावधान थई रहे छे तेवीज रीते भवभीरु मुनी [illegible] क्रियामां सावधान थई रहे छे. जन्म मरणनां अनंतदुःखथी बीकेला भवभीरु मुनि धर्मकरणीमां प्रमादशील थता नथी. प्रत्यक्ष पुद्गलिक सुख तजीने देहने दमता केम उन्मत्त थता हशे? एवी शिष्यनी शंकानुं शास्त्रकार समाधान करे छे.

७. जेम विषनुं औषध विष छे. तेम अग्निथी दग्ध थयेलानुं औषध अग्नि ज छे तेम भवभीरु मुनिने उपसर्ग संबंधी दुःखनो डर लागतो नथी. जेम कांटाने साफ काढ्या होय त्यारे तेने ईलाजे

घवरावे छे, अने अग्निथी दाझेलाने अग्निनोज शेक करे छे, तेम जन्म मरणनां दुःखथी त्रास पामेला मुनि ते दुःखने कापवा माटे विविध उपसर्ग संबंधी दुःखने समभावे सहन करे छे जेथी ते भव दुःखथी मुक्त थइ शके छे. एवी संपुर्ण खात्रीथीज विविध उपसर्ग परिषहादिक संबंधी दुःखने समपक्ष मुनि स्वाधीनपणेज समभावथी सहन करवा तत्पर रहे छे. ॥

८. भवभीरुपणाथीज विवेकवान मुनि धर्म व्यवहारने स्थिरताथी सेवे छे. जन्म मरणना भयथीज समपक्ष मुनि व्यवहार मार्गनुं दृढ आलंबन लइ निश्चय मार्गने साधे छे. वीतरागप्रणीत स्याद्वाद मार्गनुं सावधानपणे सेवन करवा समपक्ष मुनि चूकता नथी तेनुं मुख्य कारण भवभयज छे. एम साध्य दृष्टिथी शुद्ध व्यवहारनुं सेवन करतां करतां ज्यारे पोताना आत्मामां सहज समाधि जागे छे. ज्यारे साक्षात् आत्म-अनुभव जागे छे त्यारे भवभय पण अंतर शमाइ जायछे.

---

## ॥ २३ ॥ लोकसंज्ञात्यागाष्टकम् ॥

प्राप्तः षष्ठगुणस्थानं, भवदुर्गाद्रिलंघनम् ॥
लोकसंज्ञारतो न स्याद्, मुनिर्लोकोत्तर स्थितिः ॥१॥
यथा चिंतामणिं दत्ते, बठरो बदरीफलैः ॥

हाहा जहाति सद्धर्मं, तथैव जनरंजनैः ॥ २ ॥
लोकसंज्ञा महानद्या, मनुश्रोतोऽनुगान के ॥
प्रतिश्रोतोऽनुगस्त्वेको, राजहंसो महामुनिः ॥ ३ ॥
लोकमालंब्य कर्तव्यं, कृतं बहुभिरेव चेत् ॥
तथा मिथ्यादृशां धर्मो, न त्याज्यः स्यात्कदा च न ॥४॥
श्रेयोर्थिनो हि भूयांसो, लोके लोकोत्तरे च न ॥
स्तोकाहि रत्नवणिजः, स्तोकाश्चस्वात्म साधकाः ॥५॥
लोकसंज्ञाहताहंत, नीचैर्गमन दर्शनैः ॥
शंसयन्ति स्व सत्यांग, मर्मघातमहाव्यथां ॥ ६ ॥
आत्मसाक्षिक सद्धर्म, सिद्धौ किं लोकयात्रया ॥
तत्र प्रसन्नचंद्रश्च, भरतश्चनिदर्शने ॥ ७ ॥
लोकसंज्ञोज्जितः साधुः, परब्रह्मसमाधिमान् ॥
सुखमास्ते गतद्रोह, ममता मत्सर ज्वरः ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. संसाररूपी विषम घाटीनो पार पमाडनार प्रमत्तगुणस्था-

नथ जेने मात्र थयुं छे एवा लोकोत्तर स्थितिवाला मुनि लोकसंज्ञानो त्याग करे छे. विषय कषायने विवश थइ जेम दुनीया दोराय छे तेम श्रेष्ठ मर्यादाशील मुनिराज लोकप्रवाहमां खेंचाइ जता नथी. तेतो स्वभावमां स्थिर छता संयम आचरणमां सदा सावधान थइ रहे छे.

२. जेम कोइ मूर्ख बोरडीनां फल लइ बदलामां चिंतामणीरत्न आपी देछे तेम मूढ माणस जनरंजन माटे श्रेष्ठ धर्मने हारी जाय छे. जेने सत्य धर्मनी कदर नथी ते बापडाथी चिंतामणि जेवो अमूल्य धर्म साचवी शकातो नथी. लोकरंजन माटे श्रेष्ठ लाभने चूकी जाय छे. पाछलथी तेने दुनियानी देखादेखी करवाथी बहु कष्ट सहन करवुं पडेछे.

३. लोकसंज्ञाए एक मोटी नदीनो प्रबल प्रवाहछे तेमां प्रवेशेला कोण कोण तणाया नथी ? तेने तरीने पार जवाने समर्थ तो केवल सामेपूरे चालनारा राजहंस समान महामुनिराजज छे. जे लोकसंज्ञानो सर्वथा त्याग करवा अनुकूल प्रयत्न सेवे छे तेज मुनिराज तेनो त्याग करी शके छे. बाकीना तो लोकप्रवाहमां तणाया जाय छे. लोकप्रवाहमां तणाता पुरुषार्थहीनने तारवा कोइ समर्थ थतुं नथी. जो जनरंजन तजी केवल स्वपर कल्याणार्थे संयम मार्गनुं सारी रीते सेवन कराय तो प्रबल पुरुषार्थ योगे जरूर तेनो जय करी शकाय.

[illegible]

[illegible]

[illegible] ज्ञाननो [illegible] तेनो [illegible] करवुं. [illegible] करवुं. ते विना तो [illegible] आवे नहि [illegible] शके नहि. [illegible]

५. श्रेयना [illegible] जीवो [illegible] दीसे छे. जेम रत्नना व्यापारी थोडा होयछे [illegible] पण थोडाज होयछे. जेम [illegible] दुर्लभ [illegible] उत्तम जीवो पण दुर्लभज होय छे [illegible] दुर्लभ छे ते विना सत्यमार्गने शोधी तेने दृढपणे अवलंबवा [illegible]

६. लोकसंज्ञाथी परभव पामेला प्राणी स्वश्रेयथी चूक छे. ज्यां लोक देखावो करवा जे तेओ नीचा वर्तीने चाले छे ते एम जणावे छे के तेमना सत्य-अंगमां मर्मघातनी महाव्यथा थयेली छे, तेथीज तेओ वांका वर्तीने चालता लागे छे. लोक संज्ञानो आमां आ लेख कर्यो लागे छे.

७. श्रेष्ट धर्मनी सिद्धि आत्म-साक्षिक छतां लोक देखावो करवानुं काम शुं? मनथी जीव कर्म बांधे छे अने मनथीज छोडी शके छे तो पछी लोक देखावो करवाथी शुं वळे? जेम प्रसन्नचंद्र राजऋषिने तथा भरत महाराजाने साक्षात् अनुभवायुं तेम सम्यग् विचारी स्वकल्याणना अर्थी जीवोए लोक देखावो करवानी बुद्धि तजी देवी.

८. लोकसंज्ञा रहित साधु परद्रोह, ममता, अने मत्सर दोषथी मुक्त होवाथी सहज समाधिमां मस्त थइ रहे छे. जे महाशय मुमुक्षुए लोकसंज्ञा तजी दीधी छे तेने उक्त दोषोनुं सेवन करवुं परवडतुं नथी. तेथी ते शुद्ध संयमने साधतां स्वभाविक सुखमां मग्न थइ रहे छे. परउपाधि रहित होवाथी निर्ग्रंथ मुनि उत्तम निरुपाधारी सहज समाधि सुखने पामी शके छे, पण परउपाधि मग्न एवुं कोइपण तेवुं स्वभाविक सुख स्वप्नमां पण पामी शकतो नथी. एटलाज माटे मोक्ष सुखना अर्थी जनोए लोक संज्ञानो जरुर त्याग करवो जोइये, अन्यथा जप तप संयम सर्वथी सकळ धर्म करणी केवळ कष्टरूप थइ पडशे. उक्त सर्व धर्म करणी जो विवेकथी आत्म कल्याण अर्थेज करवामां आवशे तो ते सघळी लेखे पडशे. कोइ केवळ गतानुगतिकता नहीं वस्तु स्वरूप समजीनेज साधन करवुं हितकारी छे.

---

॥ २४ ॥ शास्त्राऽष्टकम् ॥

चर्मचक्षुर्भृतः सर्वे, देवाश्चावधिचक्षुषः ॥
सर्वतश्चक्षुषः सिद्धाः, साधवः शास्त्रचक्षुषः ॥ १ ॥
पुरस्थितानिवोर्ध्वाधः, स्तिर्यग्लोक विवर्तिनः ॥
सर्वान् भावानपेक्षन्ते, ज्ञानिनः शास्त्रचक्षुषा ॥ २ ॥
शासनात् त्राणशक्तेश्च, बुधैः शास्त्रं निरुच्यते ॥
वचनं वीतरागस्य, तत्तु नान्यस्य कस्यचित् ॥ ३ ॥
शास्त्रे पुरस्कृते तस्माद्, वीतरागः पुरस्कृतः ॥
पुरस्कृते पुनस्तस्मिन्, नियमात् सर्वसिद्धयः ॥ ४ ॥
अदृष्टाऽर्थेऽनुधावंतः, शास्त्र दीपं विना जडाः ॥
प्राप्नुवन्तिपरं खेदं, प्रस्खलन्तः पदे पदे ॥ ५ ॥
शुद्धोंच्छाद्यपि शास्त्राज्ञा, निरपेक्षस्य नो हितं ॥
भौतहंतुर्यथा तस्य, पदस्पर्श निवारणं ॥ ६ ॥
अज्ञानाहि महामंत्रं, स्वाच्छंद्यज्वर लंघनं ॥
धर्मारामसुधाकुल्यां, शास्त्रमाहुर्महर्षयः ॥ ७ ॥

शास्त्रोक्ताचारकर्ता च, शास्त्रज्ञः शास्त्रदेशकः ॥
शास्त्रैकदृग्, महायोगी, प्राप्नोति परमं पदम् ॥ ८ ॥

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. सर्व मनुष्य तिर्यंचो चर्मचक्षुने धारण करनारा छे. पण ले के तेमने चामडानी चक्षु छे. देवता मात्रने अवधिज्ञानरूपी चक्षु छे. सर्व सिद्ध भगवानोने प्रदेशे प्रदेशे चक्षु छे केमके तेओ अनंत ज्ञान ने दर्शन गुणथी युक्त छे. अने साधु मुनिराजोने शास्त्ररूपी दिव्य चक्षु होय छे. हवे शास्त्रचक्षु केवी उपयोगी छे ते बतावे छे.

२. ज्ञानी पुरुषो शास्त्र चक्षुवडे उर्ध्व अधो अने तीर्छा-प्रणे लोकमां वर्तता सर्व भावोने प्रत्यक्षनी पेरे देखे छे. जेम निर्मळ आरसामां सामी वस्तुओनां प्रतिबिंब सारी रीते पडी रहे छे तेम निर्मळ ज्ञानचक्षुथी पण त्रिभुवनवर्ती सर्व पदार्थोनुं यथार्थ भान थइ शके छे. माटेज मुमुक्षुजनो विनय पूर्वक अहोनिश ज्ञाननुं आराधन करवा उजमाळ रहे छे. हवे प्रसंगोपात ग्रंथकर्ता शास्त्रनुं लक्षण कहे छे.

३. मोक्ष मार्गनुं शासन-यथार्थ कथन करवाथी अने त्राण-रक्षण करवा समर्थ होवाथी शास्त्र शब्द सार्थक थाय छे. एवुं शास्त्र

भाववाळा, शास्त्रना मार्गनेज वशवर्त्तवाळा अने शास्त्र सन्मुखज
राखवावाळा महायोगी-मुनि निश्चे परमपदने पामे छे. माटे मोक्षा
जनोए एवा सत्शास्त्र-सेवी सत्पुरुषोज सदा सेववा योग्य छे.

---

॥ २५ ॥ परिग्रहाष्टकम् ॥

न परावर्त्तते राशे, र्वक्रतां जातु नोज्झति ॥
परिग्रह ग्रहः कोऽयं, विडंबित जगत्त्रयः ॥ १ ॥
परिग्रहग्रहावेशा, दुर्भाषित रजः किरां ॥
श्रूयन्ते विकृताः किं न, प्रलापा लिंगिना मपि ॥२॥
यस्त्यक्त्वा तृणवद्बाह्य, मान्तरं च परिग्रहं ॥
उदास्ते तत्पदांभोजं, पर्युपास्ते जगत्त्रयी ॥ ३ ॥
चित्तेन्तर् ग्रंथ गहने, बहिर्निर्ग्रंथता वृथा ॥
त्यागात्कंचुक मात्रस्य, भुजगो नहि निर्विषः ॥४॥
त्यक्ते परिग्रहे साधोः, प्रयाति सकलं रजः ॥
पालित्यागे क्षणादेव, सरसः सलिलं यथा ॥ ५ ॥
त्यक्तपुत्रकलत्रस्य, मूर्च्छा मुक्तस्य योगिनः ॥

चिन्मात्र प्रतिबद्धस्य, का पुद्गल नियंत्रणा ॥ ६ ॥
चिन्मात्रदीपको गच्छेद्, निर्वात स्थानसंनिभैः ॥
निष्परिग्रहतास्थैर्यं, धर्मोपकरणै रपि ॥ ७ ॥
मूर्च्छाछन्नधियां सर्वं, जगदेव परिग्रहः ॥
मूर्च्छयारहितानां तु, जगदेवाऽपरिग्रहः ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. शास्त्र उपदेश सांभळी-सद्दहीने परिग्रहनुं स्वरूप समजीने तेनो विवेक धारवो जरूरनो छे. प्रायः परिग्रहज प्राणिओने पीडानुं कारण छे. माटे तेनो अवश्य परिहार करवो जोइये तेम वात स्फुट बतावे छे. वळी जगत्‌ना जीवोनी विविध विडंबना करनार परिग्रह एवो तो आकरो ग्रह छे के जे मूळ राशिथी खसवानो नथी तेमज वक्रता त्यजनो नथी.

२. परिग्रहरूपी पिशाचथी पराभव पामेला लिंगधारी साधुओ पण पोतानी (साधु) मर्यादाने तजी जेम तेम लवता फरे छे, अनेक उन्माद करे छे, वेष विगोवणा करे छे अने अंते अधोगतिमां जाय छे ए सर्व परिग्रहनोज प्रभाव समजवो.

३. धनधान्यादिक ए बाह्य परिग्रह छे अने वेदोदयथी थती विषय–अभिलाषा, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, दुगंछा, मिथ्यात्व अने कषाय ए अभ्यंतर परिग्रह छे. ते बंने परिग्रहने तृणनी जेम तजीने जे जगतथी उदासी (न्यारा) रहे छे, तेना चरण कमळने जगत् मात्र पूजे छे. पण जे ते परिग्रहमां मुंझाइ परस्पृहा करे छे ते तो जगत मात्रना दासज छे. मूर्छा–ममतानेज ज्ञानी पुरुषो परिग्रह कहे छे.

४. जेम सर्प कांचळी उतारी नांखवाथी निर्विष थइ जतो नथी तेम बाह्य परिग्रहना त्याग मात्रथी खरुं साधुपणुं प्राप्त थतुं नथी. केमके विवेक विना धन विगेरे तजवा मात्रथी कांइ विषय अभिलाषादिक अंतर विष टळी शकतुं नथी. माटे मुमुक्षुजनोए तो विषय अभिलाषादिक अंतर विष वमवा प्रथम खपी थवुं जोइए. ज्यां सुधी विषयवासना जागृत छे, ज्यां सुधी हास्यादिक दोषोनुं मुक्तकंठी जेम सेवन कराय छे, ज्यां सुधी तत्त्व दृष्टि थवा यत्न करातो नथी अने ज्यां सुधी क्रोध, मान, माया अने लोभनो सेवा कर्या कराय छे, त्यां सुधी साधुपणुं छेटुंज समजवुं. अंतर विष टळतांज साधुपणुं संपजे छे.

जेम सरोवरनी पाळ तोडी नांखवाथी मांहेनुं सर्व जळ क्षण मात्रमां बहार वही जाय छे, तेम परिग्रहरूपी पाळ तोडवाथी–मुर्छानो

रणनुं सार्थकपणुं थाय तेम विवेकथीज वर्तवुं युक्त छे.

८ आवां कारणसर शास्त्रकार कहे छे के मूर्छावडे जेनी बुद्धि अं-
ाइ गइ छे तेने आखुं जगत परिग्रहरुपज छे, अने जे महात्माए
मूर्छा ( ममता ) ने समूलगी मारी छे, तेने तो जगतमां जरा पण
परिग्रहनो लेप लागेज नहि. आ उपरथी मूर्छा उतारवी केटली त्रि-
न छे ते तथा मूर्छा उतार्याथी केटलुं बधुं सुख थाय छे, तेनुं सहज
ान थइ शके छे. गमे एवुं दुष्कर कार्य पण पुरुषार्थथी साधी श-
ाय छे. एम समजी कायरता तजी परिग्रहनो प्रसंग तजवा प्रयत्न
रवो घटे छे.

---

## ॥२६॥ अनुभवाऽष्टकम् ॥

संध्येव दिन रात्रिभ्यां, केवलश्रुतयोः पृथक् ॥
बुधैरनुभवो दृष्टः, केवलाऽर्कारुणोदयः ॥ १ ॥
व्यापारः सर्वशास्त्राणां, दिक्प्रदर्शन मेव हि ॥
पारं तु प्रापयत्येकोऽ, नुभवो भव वारिधेः ॥ २ ॥
अतींद्रियं परब्रह्म, विशुद्धाऽनुभवं विना ॥
शास्त्रयुक्ति शतेनापि, न गम्यं यद् बुधाजगुः ॥ ३ ॥

ज्ञायेरन् हेतुवादेन, पदार्था यद्यतींद्रियाः ॥
कालेनैतावता प्राज्ञैः, कृतःस्यात्तेषु निश्चयः ॥ ४ ॥
केषां न कल्पना दर्वी, शास्त्रक्षीरान्नगाहिनी ॥
विरला स्तद्रसास्वाद, विदोऽनुभवजिह्वया ॥ ५ ॥
पश्यतु ब्रह्म निर्द्वंद्वं, निर्द्वंद्वाऽनुभवं विना ॥
कथं लीपीमयी दृष्टि, र्वाङ्मयी वा मनोमयी ॥ ६ ॥
न सुषुप्ति रमोहत्वा, न्नाऽपि च स्वाप जागरौ ॥
कल्पनाशिल्पविश्रान्ति, स्तुर्येवानुभवो दशा ॥ ७ ॥
अधिगत्याखिलं शब्द, ब्रह्म शास्त्रदृशा मुनिः ॥
स्वसंवेद्यं परंब्रह्मा, नुभवेनाधिगच्छति ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. जेम दिवस अने रात्रिथी संध्या जूदी छे, तेम अनुभव ज्ञान पण केवल ज्ञान अने श्रुत ज्ञानथी जूदुं छे. जेम सूर्य-उदय पहेलां अरुणोदय थाय छे तेम केवल ज्ञान प्रगटयां पहेलां अनुभव ज्ञाननो उदय थाय छे. पछी अवश्य अल्पकालमां केवल ज्ञान प्रगट थाय छे. जेम अरुणोदय रात्रिना अंते थाय छे, तेम अनुभव ज्ञान

पण श्रुत ज्ञानना अंते प्रगटे छे. एटले के श्रुत ज्ञान कारण छे अने अनुभव ज्ञान कार्यरूप छे. सम्यग् ज्ञान विना कदापि कोइने पण अनुभव प्रगटे नहि. माटे कार्यार्थी जेम कारणनुं सेवन करे तेम अनुभवना अर्थीए श्रुत ज्ञाननु अवश्य सेवन करवुं.

२. शास्त्रो तो फक्त दिग्दर्शन करावे छे. बाकी संसारनो पार तो अनुभवज करावे छे. जेम कोइ मार्गमां मळेलुं माणस मार्ग भ्रष्टने स्वरा मार्गनी दिशा बतावी दे छे तेम शास्त्र पण मोक्षनो मार्ग आम छे एम बतावी दे छे. पण जेम साथे लीधेलो भूमियो ठेठ मार्ग पहोंचाडी आपे छे. तेम सहज अनुभव ज्ञान पण ठेठ पार पहोंचाडे छे.

३. विशुद्ध अनुभव विना शास्त्रनी सेंकडो युक्तिवडे पण परमात्मतत्त्व समजी शकाय तेवुं नथी. जेनु स्वरूपज शब्द, रूप, रस, गंध, अने स्पर्शरहित होवाथी अतींद्रिय छे, तेनु प्रतिपादन अक्षर-वर्ण वाक्य मात्रथी शी रीते थइ शके एक तो अरूपी आत्मद्रव्य अने बीजुं दृष्टांत दइने ते पुरेपुरुं समजी शकाय एवुं कंइ उपमान नजरे ज पडतुं नथी, तेथी अंते प्रमाण निश्चय उपर आवी शकाय के परमात्मतत्त्व जेवुं कंइ बीजुं छेज नहि, ते तत्त्व पामेला सर्वे समानज छे, तथा तेवो सत्य अनुभव थयेज ते तत्त्व समजी शकाय एम छे, पण अनुभव ज्ञान प्रगटया विना परमात्मतत्त्व यथार्थ समजी शकाय तेम नथी. माटे तेवो अनुभव प्रगटाववा श्रुत ज्ञान विषे पूरतो प्रयत्न करवो युक्त छे.

४. जो हेतुवादे करी आवा अतींद्रिय पदार्थोनो निश्चय थातो होत तो तो ते वयारनो करवा पंडितो चूकत नहि. पण तेम करवुं अशक्य जाणीने तेओ करी शक्या नथी. तर्क, अनुमान के युक्ति विगेरेथी लेओए आत्मादि अरुपि-द्रव्यनो निश्चय कर्यो होत ते संबंधी कोइ जातनो विवाद रहेनज नहि. पण तेम थइ शकेज नहि. तेम करवाने अनुभव ज्ञाननी खास जरुर छे. स्वानुभवी पण परमात्मतत्त्वने यथार्थ जाणतां छतां पोतेज जाणीने विरमे छे. ते पदार्थ अतींद्रिय होवाथी स्वानुभव विना श्रोताना मागमां आवतो नथी- आवी शकतो नथी. स्वानुभव थये ते सहेज यथार्थपणे समजी शकाय छे.

५. केटलाक पंडितोनी कल्पना-कडछी, शास्त्र-क्षीरमां फरी, छतां तेओ अनुभव-जीभ विना तेनो स्वाद मेळवी शक्या नहि. अनुभव ज्ञान प्रगट थयेज सर्वज्ञ प्रणीत शास्त्रनो यथार्थ स्वाद चाखी शकाय छे.

६. अद्वितीय अनुभव जाग्या विना लिपीवाळी, वाणीवाळी, अने मनवाळी रुपि दृष्टिथी अरुपि-अद्वितीय अनुपम परमात्म तत्त्व ने केम जोइ शकाय ! ज्यारे अपूर्व साम्य सेवनथी अनुपम अनुभव जागशे त्यारेज अतींद्रिय तत्त्वनुं यथार्थ भान थशे ते विना केवळ अ क्षरमय लीपी, वाणी, के मनवाळी रुपी दृष्टिथी अरुपी एवा शुद्ध

आत्म तत्त्वनुं यथार्थ भान थइ शकवानुं नथी. अनुकूल कारणोनुं सेवन करवुंज जोइए. ते वि... नथी. माटे शुद्ध आत्म तत्त्वना कामी पुरुषे ... शुद्ध) अनुभव माटे यत्न करवो.

७. सुषुप्ति, शयन, जागर अने उजागर ... दशाओ वर्णवी छे. तेमां प्रथम मोहना उदयथी ... विविध कल्पनाओवाळी (मलिनतावाळी) शयन अने ... नुभव ज्ञानमां गति थइ नहिं. तेमां तो सातमा ... शान्तिथी निर्विकल्प थयेली उजागर दशाज होय ...

८. आम रीते ... शुद्ध आत्मने ... अनुक्रमे शुद्ध आत्मतत्त्वने अनुभव ज्ञानादि ... तत्त्वना ... ज्ञानना अभ्यासथी अनुभव ज्ञान ... आत्मने ...-ओळखे छे.

---

## ॥ २७ ॥ योगाष्टकम् ॥

मोक्षेण योजनायोगः, सर्वोप्याचारइष्यते ॥
विशिष्य स्थानवर्णार्थ, ... गोचरः ॥

कर्मयोग द्वयं तत्र, ज्ञान योग त्रयं विदुः ॥
विरतेष्वेव नियमाद्, बीज मात्रं परेष्वेपि ॥ २ ॥
कृपा निर्वेद संवेग, प्रशमोत्पत्तिकारिणः ॥
भेदा प्रत्येकमत्रेच्छा, प्रवृत्तिस्थिर सिद्धयः ॥ ३ ॥
इच्छा तद्वत्कथाप्रीतिः, प्रवृत्तिः पालनंपरः ॥
स्थैर्य बाधकभी हानिः, सिद्धिरन्यार्थ साधनं ॥४॥
अर्थालंबनयोश्चैत्य, वंदनादौ विभावनं ॥
श्रेयसे योगिनः स्थान, वर्णयोर्यत्नएव च ॥ ५ ॥
आलंबनमिह ज्ञेयं, द्विविधं रूप्य रूपि च ॥
अरूपिगुणसायुज्यं, योगोऽनालंबनं परः ॥ ६ ॥
प्रीतिभक्ति वचोऽसंगैः, स्थानाद्यपि चतुर्विधं ॥
तस्मादयोग योगाप्ति, र्मोक्षयोगः क्रमाद् भवेत् ॥७॥
स्थानाद्ययोगिनस्तीर्थो, च्छेदाद्यालंबनादपि ॥
सूत्रदाने महादोष, इत्याचार्याः प्रचक्षते ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. जीवने मोक्ष सुख साथे जोडी आपे एवो सर्व सदाचार 'योग' ना नामथी ओलखाय छे. तेना पांच प्रकार आ प्रमाणे छे १ स्थान ( आसन-मुद्रा विशेष ) २ वर्ण ( अक्षर विशेष ) ३ अर्थ ४ आलंबन ( प्रतिमादि ) अने ५ एकाग्रता ( मननी निश्चलता. )

२. तेमां पूर्वला बे कर्मयोग कहेवाय छे. अने पाछली त्रण, ज्ञान योग कहेवाय छे. आ योग विरति ( निवृत्तिशील ) वंतमां निश्चयथी होय छे. अने बीज मात्र तो अनेरामां पण होय छे. ए वचनमां एवो ध्वनि थाय छे के योगना अर्थीए निवृत्तिशील थवुं जोइये.

३. आ पांचे योगमांना प्रत्येकना कृपा, निर्वेद, संवेग अने शीतलताने करनारा १ इच्छा, २ प्रवृत्ति, ३ स्थिरता अने सिद्धि एवा च्यार च्यार भेदो कहेला छे. ते दरेकनुं लक्षण आ प्रमाणे.

४. तेवा योग-सेवीनी कथामां प्रीति थाय ते इच्छा योग उक्त योगनुं पालन करवामां तत्परता तजाय ते प्रवृत्ति योग. ते योगनुं सेवन करतां अतिचारादिक दूषण लागे नहिं, लागवानी बीक पण रहे नहिं, ते स्थिरता योग अने स्वयं योगनी सिद्धि पूर्वक अन्य (भव्य ) जीवोने योगनी प्राप्ति करावनी तेनुं नाम सिद्धि योग समजवो.

५. पूर्वोक्त योगोमांना अर्थ अने आलंबन योगनुं चैत्यवंदन, तथा गुरुवंदनादिक करतां स्मरण राखवुं. तेमां तथा स्थान अने वर्णयोगमां योगी पुरुषे स्वश्रेय माटेज प्रयत्न करवानो छे. उक्त योगा सेवनमां जेम अधिक प्रयत्न तेम एकाग्रता द्वारा अधिक श्रेय स-धाय छे.

६. आलंबन बे प्रकारे छे. १ रूपी अने २ अरूपी तेमां जिन मुद्रादिकरूपी आलंबन छे. अने अरूपी एवा सिद्ध भगवानना अनंत ज्ञानादिक गुणोमांज एकाग्र उपयोग देवो ते अरूपी आलंबन छे. तेनुं बीजुं नाम निरालंबन योग छे. अनालंबन योग उत्कृष्ट योग छे.

७. वळी प्रीति, भक्ति, वचन अने असंगभेदे वर्णने स्थाना-दियोग चार चार प्रकारे छे. पूर्वोक्त इच्छादिक च्यार प्रकारवाळा स्थानादिक पांच योगोना २० भेद थाय छे. अने तेमना प्रत्येक प्रीति विगेरे च्यार च्यार भेद गणतां योगना ८० भेद थाय. छेवटी 'अयोग' योगनी अनुक्रमे प्राप्ति थतांज मोक्ष योगनी–अक्षय अ-व्याबाध सुखनी संप्राप्ति थाय छे. एम सुखनी मोक्षार्थी सज्जनोए उपर बतावेला योगनां अंगोनुं आदरथी सेवन करवुं घटे छे. केट-लांक अनुष्ठान प्रीतिपूर्वक अने केटलांक भक्ति पूर्वक ज करवानां कह्यां छे. जेमके देववंदन, गुरुवंदन, विगेरे भक्तिपूर्वक करवानां छे. अने प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग ( काउस्सग्ग ), पच्चखाण विगेरे बी-

तिपूर्वक करवानां. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव ने लक्षमां राखी सर्व कथित सिद्धान्तने अनुसरीने विधिपूर्वक धर्मवर्तन करवुं ते वच अनुष्ठान छे. पूर्वोक्त प्रीति–भक्ति युक्त वचन अनुष्ठानने आचर अनुक्रमे अभ्यास वलथी मन, वचन, कायानी, एकाग्रता सधा असंग क्रियानो अपूर्व लाभ मळे छे. असंग क्रिया साधनारने मो सुलभ छे. माटे मोक्षार्थीजनोए मन, वचन, अने कायाना योगो परभावमां जतां वारी स्वभाव सन्मुख करवा जोइये. पुद्गलिक सु खनी इच्छा तजीने सहज आत्म सुखमांज प्रीति करवी जोइये. क रवामां आवती धर्मक्रियाना पण पवित्र हेतु–फल संबंधी सारी सम मेळवी तेमां योग्य आदर करवो जोइये. जेम बने तेम अविधि दो वजी विधि रसिक थवुं जोइये.

८. उक्त स्थानादिक योगनो अनादर करनारा अने स्वच्छंदे चालनारने सूत्र–दान देवामां मोटो दोष छे, एवो समर्थ आचार्योनो अभिप्राय छे. शासननो उच्छेद थइ जशे एवी बीकथी पण प्रभुनी पवित्र आज्ञाथी विमुखने शास्त्र शिखववामां मोटामां मोटुं पाप छे.

---

## ॥ २८ ॥ नियागाष्टकम् ॥

यःकर्महुतवान् दीप्ते, ब्रह्माग्नौ ध्यान धाय्यया ॥
स निश्चितेनयागेन, नियागप्रतिपत्तिमान् ॥ १ ॥

पापध्वंसिनिनिष्कामे, ज्ञानयज्ञे रतो भव ॥
सावद्यैः कर्मयज्ञैःकिं, भूतिकामनयाविलैः ॥ २ ॥
वेदोक्तत्वान्मनः शुध्या, कर्मयज्ञोऽपि योगिनः ॥
ब्रह्मयज्ञ इतीच्छंतः, श्येनयागं त्यजन्ति किम् ॥३॥
ब्रह्मयज्ञं परं कर्म, गृहस्थस्याधिकारिणः ॥
पूजादिवीतरागस्य ज्ञानमेव तु योगिनः ॥ ४ ॥
भिन्नोद्देशेन विहितं, कर्म कर्मक्षयाक्षमं ॥
क्लृप्तभिन्नाधिकारं च, पुत्रेष्ट्यादिवदिष्यतां ॥ ५ ॥
ब्रह्मार्पणमपि ब्रह्म यज्ञांतर्भावसाधनं ॥
ब्रह्माग्नौ कर्मणो युक्तं, स्वकृतत्व स्मये हुते ॥ ६ ॥
ब्रह्मण्यर्पित सर्वस्वो, ब्रह्मदृग् ब्रह्मसाधनः ॥
ब्रह्मणा जुहृदब्रह्म, ब्रह्मणि ब्रह्मगुप्तिमान् ॥ ७ ॥
ब्रह्माऽध्ययननिष्ठावान्, परब्रह्म समाहितः ॥
ब्रह्मणो लिप्यतेनाघै, र्नियागप्रतिपत्तिमान् ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. निश्चित याग (पूजा) ते नियाग कहेवाय छे. तेनुं स्वरूप समजावे छे. जे शुद्ध ब्रह्माग्निमां ध्यान-साधनथी विविध कर्मने होमे छे ते निश्चित यागवडे नियागी कहेवाय छे.

२. पापना क्षय करनार एवा निष्काम (पुद्गलिक कामना रहित ज्ञान यज्ञमां रति करवी युक्त छे. वैभववी इच्छाथी मैथील एव पापयुक्त कर्म यज्ञ करवानुं शुं प्रयोजन छे ? जेमने पापनो क्षय करवो [illegible] होय तेमने तो पापयुक्त कर्मयज्ञोनो अनादर करी केवळज्ञान-यज्ञनो ज आदर करवो घटे छे. केमके लोही खरडेलुं वस्त्र लोहीथी साफ थइ शके नहिं, पण शुद्ध जल विगेरेथी ज साफ थइ शके [illegible] तेम पापथी खरडायेलुं मन पापयुक्त कर्म-यज्ञथी शुद्ध [illegible] पण पापरहित एवा ज्ञान यज्ञथी तो ते अवश्य शुद्ध थइ शके. [illegible] निष्काम एवा ज्ञान-यज्ञमां रक्त थवुं, ज्ञानी-विवेकीने उचित छे, पण पापयुक्त कर्म-यज्ञ करवो तो उचित नथीज.

३. कर्म-यज्ञ पण करवानुं वेदमां कथन होवाथी मननी शुद्धिथी ते पण ज्ञान-यज्ञनुं फळ आपे छे एवुं इच्छनारा ब्रह्म-ज्ञानीओ श्येन यागने केम वर्जे छे ? जो बीजा कर्म-यज्ञथी मननी शुद्धि थती होय तो आथी केम नहि ? एम समजी विवेकी सज्जनोए पाप-युक्त सर्व कर्म-यज्ञनो परिहार करवो घटे छे.

४. श्री वीतरागनी पूजा, सद्गुरुने दान, दीन दुःखीनो उद्धार विगेरे गृहस्थ-अधिकारीने योग्य श्रेष्ठ आचरण द्रव्ययोगनुं कारण होवाथी ज्ञान योग कही शकाय छे, परंतु ज्ञानी-मुनिने तो फक्त ज्ञान-योगज सेववा योग्य छे. गृहस्थ योग्य आचार साधुने सेववानो नथी. केमके बन्नेनो अधिकार भिन्न छे.

५. क्षुद्र हेतुथी करेली क्रिया क्लिष्ट-कर्मोनो क्षय करी शके नहिं. एतो पाप-कर्मने क्षय करवानी पवित्र बुद्धिथी ज उचित क्रिया विवेकथी करवामां आवे तो ज तेथी पाप-कर्मनो क्षय थाय छे. पण तेथी विरुद्ध आचरणथी तो कदापि थइ शके नहिं. स्व स्व अधिकार मुजब करेली करणी गुणदायी निवडे छे. साधु साधु योग्य अने गृहस्थ गृहस्थ योग्य करणी करतां सुखी थाय छे. पण साधु पोते गृहस्थ योग्य अने गृहस्थ पोते साधु योग्य करणी करवा जतां उलटा अनर्थ पामे छे. पुत्रेष्टिनीपेरे (पुत्र माटे करवामां आवतो यज्ञ विशेष "पुत्रेष्टि" कहेवाय छे, तेनीपेरे) अधिकार विरुद्ध अने निर्दोष शास्त्र विरुद्ध आचरणथी अनर्थज संभवे छे एम समजीने सुनिपुण जनो पाप पुनः पक्षोथी सदंतर दूर रहे छे. आ पवित्र धर्म करणी पण पवित्र उद्देशथी करे छे.

६. ब्रह्मार्पण करवुं एनेज जो ज्ञान यज्ञनुं सरेराहे साधन करवामां आवे तो तेथी पण स्वकर्तृत्व-अहंकार एटले पोते कर्ताप-

णानो गर्व गाली नांखी ज्ञानाग्निमां कर्मनोज होम करवो घटे छे. प्रथम अहंकारनो होम करतां कर्मनोज होम करवो ठरेछे. माटेज पापयुक्त कर्म-यज्ञ करवानो कदाग्रह तजी गृहस्थोए तेमज साधुओए उपरनी युक्ति युक्त वात विवेकथी विचारी स्व स्वउचित सदाचार सेववो ज योग्य छे.

७-८. आत्म समर्पण करनार, तत्त्वदर्शी, तत्त्वसाधक, तत्त्वज्ञानवडे अज्ञाननो उच्छेद करनार. शुद्ध ब्रह्मचर्य सेवनार, तत्त्वअभ्यासमां रक्त रहेनार, अने स्वरूपमांज रमण करनार एवा निश्चित याग संयमे साधुओ कदापि पापकर्मथी लेपाता नथी, निर्लेप रहेवा इच्छनार साधुए अनंतरोक्त लक्षण धारवां जोइये. बाकी तो अहंता-ममता, अज्ञान, अविवेकाचरण, अने स्वार्थ अंधतादिक सर्व अपलक्षणो तो केवळ दुर्गतिनां ज कारक छे, माटे ए सर्वथी अळगा थइ स्वहित साधवुं घटे छे.

---

## ॥ २९ ॥ पूजाष्टकम् ॥

दयांभसा कृत स्नानः, संतोष शुभवस्त्रभृत् ॥
विवेक तिलकभ्राजी, भावना पावनाशयः ॥ १ ॥
भक्ति श्रद्धान घुसृणो, न्मिश्रपाटी रज द्रवैः ॥

नव ब्रह्मांगतो देवं, शुद्धमात्मानमर्चय ॥ २ ॥
क्षमा पुष्पस्रजं धर्म, युग्म क्षौमद्वयं तथा ॥
ध्यानाभरणसारं च, तदंगे विनिवेशय ॥ ३ ॥
मदस्थान भिदा त्यागै, र्लिखाग्रे चाष्ट मंगलीं ॥
ज्ञानाग्नौ शुभ संकल्प, काकतुंडं च धूपय ॥ ४ ॥
प्राग् धर्म लवणोत्तारं, धर्मसंन्यास वन्हिना ॥
कूर्वन् पूरय सामर्थ्य, राजन्नी राजना विधिं ॥ ५ ॥
स्फुरन् मंगलदीपं च, स्थापयानुभवं पुरः ॥
योग नृत्य परस्तौर्य, त्रिक संयमवान् भव ॥ ६ ॥
उल्लसन्मनसः सत्य, घंटां वादयत स्तव ॥
भाव पूजा रतस्येत्थं, करक्रोडे महोदयः ॥ ७ ॥
द्रव्य पूजोचिता भेदो, पासना गृहमेधिनां ॥
भाव पूजा तु साधूना, मभेदो पासनात्मिका ॥ ८ ॥

---

॥ रहस्यार्थ ॥

१. पूज्य पूजा बे प्रकारनी छे. एक द्रव्यपूजा तथा भावपूजा. शुद्ध लक्षथी करवामां आवती द्रव्यपूजा भावपूजानुं कारण होवाथी अधिकारी जीवनें अधिक उपकारी थाय छे. गृहस्थ द्रव्यपूजानो मुख्यपणे अधिकारी छे, अने मुनि भावपूजानाज अधिकारी छे. परंतु गृहस्थ पण शुद्ध लक्षथी द्रव्यपूजावडे भाव साधी शके छे. तेथी ते अंते भावपूजानो पण अधिकारी थइ शके छे. माटे स्व स्वउचित कर्तव्य करवामां प्रमाद नहिं करतां शुद्ध लक्षपूर्वक आत्मार्पण करतां रहेवुं जोइये. प्रथम भावपूजानुं स्वरूप प्रतिपादन करेछे, एवा शुद्ध लक्षथी जो गृहस्थ द्रव्यपूजा करवामां आदरवंत थाय तो ते पण अंते ते भावने पामे. मुनिनुं तो ए खास कर्तव्यज छे. माटे तेने उद्देशीने मुख्यपणे अत्र कथन छे, पण एवुं लक्ष गृहस्थने पण कर्तव्य छे.

२. हे भाइ! निर्मलदया–जलथी स्नान करी संतोषरूपी शुभ वस्त्रने धारी, विवेकरूप तिलक करी, भावनावडे पवित्र आशय वनी, भक्तिरूप केशर घोळी, श्रद्धारूप चंदन भेळवी, नैमम अन्य उत्तम गुणरूप कस्तूरी प्रमुख संयोजी नवविध ब्रह्मचर्यरूप नवअंगे शुद्ध आत्मारूप देवाधिदेवनी तुं भावथी पूजा कर.

३. क्षमारूपी सुगंधी पुष्पमाळा तथा द्विविध धर्मरूप वस्त्र युगल तथा शुभ ध्यानरूप श्रेष्ठ आभरण हे महानुभाव! ते प्रभूना

अंगे तुं स्थाप. अर्थात् एवा सद्गुणोने तुं धारण कर. ए सद्गुणो तारे अवश्य धारवा जेवाज छे.

४. वळी आठे मदना त्याग करवारूप अष्टमंगलने तुं आगळ स्थापन कर. तथा ज्ञान-अग्निमां शुभ अध्यवसायरूप कृष्णागुरुनो धूप कर.

५. शुद्ध धर्मरूपी अग्निवडे अशुद्ध धर्मरूपी लुण उतारीने देदीप्यमान वीर्योल्लासरूपी आरती उतारो. एटले सरागवृत्ति तजी वीतराग वृत्ति धारी-धारवाना खपी थाओ. सरागदशा ए अशुद्ध धर्म छे. अने वीतराग दशा ए शुद्ध आत्मधर्म छे. माटे अशुद्ध आत्मदशाने तजी शुद्ध आत्मदशाना कामी थाओ.

६. शुद्ध आत्म-अनुभवरूप देदीप्यमान मंगलदीवाने नथे प्रभुनी आगळ स्थापो, अने योगाभ्यसन रूप नृत्य करतां गुणंथय रूप विविध वाजित्र बजावो. अर्थात् सद्बुद्धिथी तत्त्व परीक्षा करी शुद्ध अनुभव जगावो, अने तेम करी प्रमाद वैरीने दूर तजी सावधान थइ शुद्ध संयमनुं सेवन करवा सज्ज थाओ. रत्नत्रयीनुं पालन करो.

७. आ प्रमाणे सत्य-पंचावादने करनारा उल्लसित मनवाळा, भाव पूजामां मग्न थयेला महापुरुषनो महोदय सुलभ छे. तात्पर्य के श्री वीतराग वचनानुसारे वर्ती सत्य प्ररूपणा करनारा प्रसन्न चित्तवाळा सात्विक पुरुषोज परमात्म प्रभुनी पवित्र आज्ञाना अखंड

पालनरूप भावपूजाना पूर्ण अधिकारी होवाथी परमपदने सुखेथी पामी शके छे, पण स्वच्छंदचारी, कलुषित मनवाला, कायर माणसो कंइ पामी शकता नथी, एम समजी परमपदना अर्थीए स्वच्छंदचारिता, कलुषता, तथा कायरता, परिहरी, शास्त्र परतंत्रता, कषायरहितता, तथा अप्रमत्तता अवश्य आदरवा खपी थवुं.

८. आ भाव पूजामां प्रस्तावे कहेली द्रव्य पूजा मुख्यपणे व्यवहारदृष्टि एवा गृहस्थोनेज आदरवा योग्यछे. अने भावपूजा तो मुख्यपणे निश्चयदृष्टि एवा मुनिराजोनेज उपासवा योग्यछे. कल्याण पण तेमज संभवे छे. इत्यलम्. ॥

---

## ॥ ३० ॥ ध्यानाष्टकम् ॥

ध्याता ध्येयं तथा ध्यानं, त्रयं यस्यैकतां गतं ॥
मुनेरनन्य चित्तस्य, तस्यदुःखं न विद्यते ॥ १ ॥
ध्यातान्तरात्मा ध्येयस्तु, परमात्मा प्रकीर्तितः ॥
ध्यानं चैकाग्र्य संवित्तिः समापत्ति स्तदेकता ॥ २ ॥
मणाविव प्रतिच्छाया, समापत्तिः परात्मनः ॥
क्षीणवृत्तौ भवेद्ध्याना, दंतरात्मनि निर्मले ॥ ३ ॥

आपत्तिश्च ततः पुण्य, तीर्थकृत् कर्मबंधतः ॥
तद्भावा भिमुखत्वेन, संपत्तिश्च क्रमाद्र भवेत् ॥ ४ ॥
इत्थं ध्यानफलाद्युक्तं, विंशति स्थानकाद्यपि ॥
कष्टमात्रं त्वभव्याना, मपि नो दुर्लभं भवे ॥
जितेंद्रियस्य धीरस्य, प्रशान्तस्य स्थिरात्मनः ॥
सुखासनस्य नासाग्र, न्यस्तनेत्रस्य योगिनः ॥ ६ ॥
रुद्धबाह्य मनोवृत्ते, धीरणा धारयारयात् ॥
प्रसन्नस्या प्रमत्तस्य, चिदानंद सुधालिहः ॥ ७ ॥
साम्राज्यम प्रतिद्वंद्व, मंतरेव वितन्वतः ॥
ध्यानिनो नोपमा लोके, सदेव मनुजेऽपिहि ॥ ८ ॥

---

॥ रहस्यार्थ ॥

१. ध्याता, ध्येय, अने ध्यान ए त्रणे जेने एकताने पाम्यां छे एवा एकाग्र चित्तवाळा मुनिने कंइ पण दुःख नथी. जेटली ए बाबतमां खामी छे तेटलुंज दुःख शेष छे एम समजवुं अने जेम ते खामी जलदी दुर थइ जाय तेम सावधानपणे तेनो खप करवो.

२. थायशीपणुं तजनि अंतर दृष्टिथी आत्म-निरीक्षण करनारो अंतर-आत्मा ध्याता-ध्यान करवानो अधिकारी छे. सकल दोषने दली निर्मल स्फटिक जेवुं शुद्ध स्वरूप जेमने संपूर्ण प्रगट्युं छे, एवा परमात्मा, ध्येय-ध्यानगोचर करवा योग्य छे. आ त्रणेमां एकतानुं संलग्न भान ते ध्यान अने ए त्रणेनी अभेदता थवी ते एकता अथवा लय कहेवाय छे. एवी एकतामां हुं ध्याता छुं अने प्रभुजी ध्येय छे एवुं भान पण होतुं नथी, एटले हुं प्रभुना ध्यानमां लीन थयो छुं एवो पण भेदभाव रहेतो नथी. तेमां तो केवल एकाकार वृत्तिज बनी रहे छे.

३. जेम चंद्रकान्त विगेरे मणिमां सामी वस्तुनुं प्रतिबिंब पडी रहे छे तेम (ध्यानवडे) अंतर मलनो क्षय थये छते निर्मळ एवा अंतर-आत्मामां परमात्मानी प्रतिछाया (प्रतिबिंब) पडि रहे छे. सर्व अंतरमलनो सर्वथा क्षय थये छते ते अंतर आत्माज परमात्मारूप थइ रहेछे. पण ते पहेलां पण ध्यानना दृढ अभ्यासी मुमुक्षुने एकता थतां तेनामां परमात्म स्वरूप झलकी रहेछे.

४. ध्यान करतां प्रथम तो आत्म-अनुभव सारी रीते थायछे एटले के स्वरूप साक्षात्कार थाय छे. त्यारबाद पवित्र एवा तीर्थंकर नाम कर्मना बंधथी क्रमेकरीने ते भावनी सम्पूर्णताथी तीर्थंकर पदनी प्राप्ति थाय छे. आ वचनथी , प्रगटपणे स-

समाय छे के पवित्र ध्यानना प्रभावथी आत्मानुभव जागे छे, अने तेथी श्री तीर्थंकर नाम कर्म जेवी प्रकृष्ट पुण्य प्रकृति पण बंधाय छे.

५. आ प्रमाणे तीर्थंकर पदवीनी प्राप्ति-रूप ध्याननुं फल जेथी प्रभवे छे. एवुं वीस स्थानकादिक तप पण करवो युक्त छे. बाह्य मात्र रूप तप तो अभव्य जीवोने पण सुलभ छे. केवल संसारिक सुखने चाहनारा अभव्यने अयोग्यताथी परमार्थ-फलनी प्राप्ति थइ शकती नथी.

६-७-८. हवे ध्यान करवाने योग्य जीवनी केवी दशा होय छे, ते कंइ विशेषताथी जणावे छे. जितेन्द्रिय, धीर, प्रशान्त, स्थिरतावंत, सुखासन, अने नासिकाना अग्रभागे स्थापी छे दृष्टि जेणे, तथा ध्येय वस्तुमां चित्तने स्थिर बांधी राखवा रूप धारणाना अखंड प्रवाहथी जेणे बाह्य मनोवृत्तिनो शीघ्र रोध कर्यो छे, प्रसन्न, अप्रमत्त, अने ज्ञानानंदरूपी अमृतनो आस्वाद करनारा, तेमज अनुपम एवा आत्म-साम्राज्यनो अंतरमां अनुभव करनारा, एवा ध्यानी-योगीनी बरोबरी करे एवो कोइ पण देवलोकमां के मनुष्य लोकमां नथी. सुखासन एटले ध्यानमां विघ्न न पडे एवा अनुकूल पद्मासनादिने सेवनार जेने भववासनानो क्षय थयो छे, एटले विषय तृष्णा जेनी दूर थइ छे, अने निःस्पृहताथी जगतथी न्यारो रही शांतपणे सहज-स्वभावमां ज रही जे प्रमाद रहित परमात्म स्वरू-

पने एकाग्रपणे ध्यावे छे, एवा आत्म गुण-विश्रामी सुनसम्र धीर महापुरुषनी जगतमां कोण होड करी शके? आवा महापुरुषोने ज अनेक प्रकारनी उत्तम लब्धि, सिद्धि विगेरे संभवे छे, अने आवा ध्याता पुरुषोज अंते ध्येय रूप थाय छे.

---

## ॥ ३१ ॥ तपाष्टकम् ॥

ज्ञानमेव बुधाः प्राहुः, कर्मणां तापना त्तपः ॥
तदाभ्यंतर मेवेष्टं, बाह्यं तदुपबृंहकम् ॥ १ ॥
आनुस्रोतसिकी वृत्ति, र्बालानां सुखशीलता ॥
प्रातिस्रोतसिकी वृत्ति, र्ज्ञानिनां परमं तपः ॥ २ ॥
धनार्थिनां यथा नास्ति, शीततापादि दुस्सहं ॥
तथा भव विरक्तानां, तत्त्वज्ञानार्थिनामपि ॥ ३ ॥
सदुपाया प्रवृत्ताना, मुपेय मधुरत्वतः ॥
ज्ञानिनां नित्य मानंद, वृद्धिरेव तपस्विनां ॥ ४ ॥
इत्थं च दुःखरूपत्वात्, तपो व्यर्थ मितीच्छतां ॥
बौद्धानां निहता बुद्धि, र्बौद्धानंदा परीक्षयात् ॥ ५ ॥

यत्रब्रह्म जिनार्चा च, कषायाणां तथा हतिः ॥
सानुबंधा जिनाज्ञा च, तत्तपः शुद्धमिष्यते ॥ ६ ॥
तदेव हि तपः कार्यं, दुर्ध्यानं यत्र नो भवेत् ॥
येन योगा न हीयन्ते, क्षीयन्ते नेंद्रियाणि वा ॥७॥
मूलोत्तर गुणश्रेणि, प्राज्य साम्राज्यसिद्धये ॥
बाह्यमाभ्यंतरं चेत्थं, तपः कुर्याद् महामुनिः ॥ ८ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. कर्मने शिथिल करी नांखनार होवाथी ज्ञानज तप छे. एम तत्त्वज्ञानीओ कहे छे ते तप बे प्रकारनुं छे, एकतो बाह्य अने बीजुं अभ्यंतर तेमां कर्म मात्रनो क्षय करवा समर्थ एवो अभ्यंतर तपज श्रेष्ठ छे. प्रायश्चित, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान अने कायोत्सर्ग ए अभ्यंतर तपना भेद छे. आवा अभ्यंतर तपनी पुष्टि माटेज बाह्य तप करवानो कह्यो छे. अनशन ( उपवास विगेरे ) उनोदर्य (अल्प आहार करवो ते) वृत्ति संक्षेप ( भोगोपभोगना संबंधमां विशेष नियम पाळवा ते ) रसत्याग, कायक्लेश, अने संलीनता ( आसन जय करवा नियम विशेष ) ए बाह्य तपना छ प्रकार छे.

विवेकी आत्मा बाह्यतप साधनवडे अभ्यंतर तपनी अधिक अधिक पोषणा करतोज रहे छे.

२. इंद्रियो अने मन दोरी जाय तेम दोरावारूप बालजीवोनी अनुस्रोत-वृत्ति तो सर्वने सुखसाध्य छे, पण तेमनो जय करी सामापूरे चालवा जेवी ज्ञानी पुरुषोनी प्रतिस्रोत वृत्तिज परमतपरूप छे. प्रथमनी वृत्ति शीखवी पडती नथी अने बीजी तो खास शीखवी पडे छे.'

३. जेम धनना अर्थीने शीत ताप विगेरे सहवा कठीन पडता नथी, तेम तत्त्वज्ञानना अर्थी एवा भवत्रासथी विमुख जीवोने पण ते सहेवा सुलभ थइ पडे छे.

४. कल्याण साधवाना श्रेष्ठ उपायमां लागेला तत्त्वज्ञानी-तपस्वीने तेमां मिठाश उपजवाथी निरंतर आनंदनी वृद्धिज थती जाय छे. नित्य चढते परिणामे सदुपायद्वारा ते आत्म कल्याणने साधे छे. विवेकीने तप गुण रूपज छे.

५. आथी सिद्ध थाय छे के "दुःखरूप होवाथी तप करवो व्यर्थ छे एम इच्छनार बौद्ध लोकोनी मति मारी गइ छे" केमके तपथी तो दुःखने बदले सहज आनंदनी वृद्धि थाय छे. माटे एवा कायर अने स्वच्छंदी गुरु-शीळजनोनां वचन सांभळी महा मंगल

तप तपमां मंद-आदर न थवुं. यथाशक्ति उभय तपमां अवश्य उद्यम करवो.

६. जे तप करतां, ब्रह्मचर्यनी शुद्धि (शील संरक्षण), वीतरागनी भक्ति, तथा कषायनी शान्ति सुखे सधाय छे, तेमज जिनेश्वर प्रभुनी पवित्र आज्ञानुं प्रतिपालन थाय छे, तेनुं ज्ञापण उल्लंघन थतुं नथी तेवो तप शुद्ध-दोष रहित होवाथी अवश्य आदरवा योग्य ज छे; तपस्या करवाथी आलोकादि उत्तम फळ मेळववा उपरनी वासना तजवा योग्य छे. केमके ते प्रमाणे वर्तवाथी तपस्या लेखे थाय छे, एटले आत्मा निर्मळ थतो जाय छे, अने अंते सर्व कर्ममलनो क्षय थतां अक्षय सुख संप्राप्त थाय छे.

७. तप करतां ज्यारे दुर्ध्यान थाय नहि, स्वाध्याय ध्यानादिक संयम-योगमां व्याघात आवे नहि, तेम धर्मकार्यमां सहायभूत थनारी इंद्रियो समूळगी क्षीण थई जाय नहि, एम खास उपयोग राखीने स्वशक्ति गोपव्या विना समताभावे श्री तीर्थंकर देवे पण सेवेला तपनो दरेक मोक्षार्थीए अवश्य आदर करवो.

८. अहिंसादिक पांच महाव्रत अने आहारशुद्धि विगेरे मूळ तथा उत्तर संयम गुणोनी श्रेणिरूप श्रेष्ठ साम्राज्यनी सिद्धि करवा माटे महामुनि पण उभय प्रकारना तपनुं यथार्थ सेवन करवामां प्रमाद करे नहि. केमके संयमवडे जो के नवां कर्म रोकाय छे, पण सं-

नित कर्मनो पण गो पण खंडन थाय छे. अने त्यारेज अक्षय पदनी प्राप्ति थइ शके छे. माटे संयमनी साथे ज्ञानना पण तात्त्विक सिद्ध थाय छे.

---

## ॥ ३२ ॥ सर्वनयाश्रय—अष्टकम् ॥

धावन्तोऽपि नयाः सर्वे, स्युर्भावे कृतविश्रमाः ॥
चारित्रगुण लीन स्या, दिति सर्वनयाश्रितः ॥ १ ॥
पृथङ् नयामिथः पक्ष, प्रतिपक्ष कदर्थिनाः ॥
समवृत्ति सुखास्वादी, ज्ञानी सर्वनयाश्रितः ॥ २ ॥
नाप्रमाणं प्रमाणं वा, सर्वमप्य विशेषितं ॥
विशेषितं प्रमाणं स्या, दिति सर्वनयज्ञता ॥ ३ ॥
लोके सर्वनयज्ञानां, ताटस्थ्यं वाप्यनुग्रहः ॥
स्यात्पृथङ् नयमूढानां, स्मयार्त्तिर्वातिविग्रहः ॥ ४ ॥
श्रेयः सर्वनयज्ञानां, विपुलं धर्मवादतः ॥
शुष्क वादाद्विवादा च, परेषां तु विपर्ययः ॥ ५ ॥
प्रकाशितं जनानां यै, र्मतं सर्व नयाश्रितम् ॥

चित्ते परिणतं चेदं, येषां तेभ्यो नमोनमः ॥ ६ ॥
निश्चये व्यवहारे च, त्यक्त्वा ज्ञाने च कर्मणि ॥
एक पाक्षिक विश्लेषा, मारूढाः शुद्ध भूमिकां ॥ ७ ॥
अमूढ लक्ष्याः सर्वत्र, पक्षपात विवर्जिताः ॥
जयंति परमानंद, मयाः सर्वनयाश्रयाः ॥ ८ ॥

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१. अनंत धर्म (गुण) वाळी वस्तुना बीजा बधा धर्मनी सामान्यतः उपेक्षा करी मुख्यपणे अमुक एकज धर्मने स्थापनार नय कहेवाय छे. तेवा नय अनंता होवा घटे छे तोपण अत्र स्थूलताथी सात नयनुं कथन कर्युं छे, तेमां शेष सर्वेनो समावेश थइ जाय छे. नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ, अने एवंभूत. ए साते नयनां नाम छे. तेनुं विशेष व्याख्यान बीजा ग्रंथोथी जाणवा योग्य छे, अत्र तो फक्त समुच्चय नयोनुं स्वरूप कहेलुं छे. सर्वे नयो उतावळा छतां स्ववस्तु-धर्ममां विश्राम करनारा छे. अर्थात् वस्तु-धर्मने तजी बहार जता नथी, एम समजी चारित्र गुणमां लीन साधु सर्व नयनो समाश्रय करे छे, सर्व नयनो अभिप्राय साथे मळतांज संपूर्ण वस्तु-अनंत धर्मात्मक समजाय छे, बीजी रीते बोलिये तो

सर्व नयनो एकी साथे आश्रय करनारज चारित्र गुणमां लीन होइ शके छे, पण बीजो नहिं.

२. जूदा जूदा नयो परस्पर पक्ष अने प्रतिपक्षथी कदर्थित थाय छे. अर्थात् एकेक जूदा जूदा नयनेज अवलंबनारनी मांहोमांहे स्वपक्ष अने परपक्षथी कदर्थना थया करे छे. पण सर्व नयने सरखी रीते आदरनार तो समता सुखनोज आस्वाद करे छे. तात्पर्य एवो नीकले छे के समतारस ( शान्तरस ) ना अर्थी जने तो सर्व नयनो सरखी रीतेज आश्रय करवो योग्य छे. अर्थात् निरपेक्षपणे कोइ नयनुं खंडन मंडन करवा मरवुं नहिं.

३. सामान्य कथन मात्र, अप्रमाण पण नथी तेम प्रमाण पण नथी. तेनी तेज वात स्यात् पदथी विशेषित थाय तो ते प्रमाणभूत थाय छे. जेमके वस्तु नित्य छे, ए कथन सामान्य होवाथी अप्रमाण नथी तेम प्रमाण पण नथी. पण " स्यात् नित्यं " ए कथन विशेषित होवाथी प्रमाणरूप छे. तेमज ' स्यात् अनित्यं ' एवुं कथन पण प्रमाणभूतज छे. जेमके दीपक वस्तु द्रव्यपणे नित्य छे पण पर्यायपणे तो अनित्य छे, तेम आत्मा द्रव्यपणे नित्य छे पण मनुष्यादि पर्यायपणे अनित्य छे. एम प्रत्येक वस्तु कथंचित् नित्यानित्य होइ शके छे. ए प्रमाणेज सर्व नयनुं रहस्य समजवानुं छे. तात्पर्य के एकान्त-निरपेक्ष नय प्रमाण पण नथी तेम अप्रमाण पण नथी. पण बीजा

नयनी अपेक्षावाळो-सापेक्ष नयज प्रमाणभूत थाय छे माटेज सर्वे नयाश्रितता श्रेष्ठ छे.

४. सर्व नयना धोरणे सापेक्षदृष्टि होवाथी तत्त्व प्राप्ति थइ शके छे, अथवा तत्त्वज्ञानीनुं समाधान थइ शकवाथी उपकारी थाय छे. पण पृथक्-एकांत-निरपेक्ष नयमां आग्रहवंतने तो कदाग्रह जन्य दोष अथवा भारे हेरान पेदा थाय छे, केमके तेवा कदाग्रहथीज स्व पक्षनुं मंडन करवानो अने परपक्षनुं खंडन करवानो सहज मार्ग प्राप्त छे अने तेम करता जतां गर्वेने हेत थये छे. एवं हित परिणाम सापेक्षदृष्टि एवा सर्व नयाने कदापि आवदानो संभव नथी. स्व परहित पण एमज साधी शकाय छे. माटे सर्व नयाश्रय श्रेष्ठ छे.

५. सर्व नयाश्रित धर्मचर्चाथी घणो लाभ थइ शके छे, कारण बीजाने तो शुष्कवाद के विवादथी लाभने बदले उलटो गेरलाभ (नुक-सान) ज थाय छे.

६. जेमणे सर्व नयाश्रित धर्म प्रकाश्यो छे अने ते जेमने यथा-र्थ परिणम्यो छे तेमने अमारो वारंवार प्रणाम छे. शास्त्र-सिद्धांत श्रवण अने धारण ए उभयनी बलिहारी छे.

७-८. निश्चय अने व्यवहार तेमज ज्ञान अने क्रियामां एकां-तने पक्ष तजीने जेमणे स्याद्वादनो स्वीकार कर्यो छे एवा शुद्ध-दृष्टि, पक्षपात वर्जित, अने सर्व नयनो आश्रय करनारा परमात्मेवी

पुरुषोज जगतमां जयवंता वर्ते छे. एकान्त पक्षज सर्व कदाग्रह अने दुःखनुं मूळ छे. एम समजीनेज सर्व नयाश्रित सत्पुरुषोज एकान्त नहिं खेंचतां सर्वत्र ज्ञान अने क्रिया, उत्सर्ग अने अपवाद, तथा निश्चय अने व्यवहारनो स्वीकार करे छे. इतिशम्.

---

## ॥ उपसंहार ॥

पूर्णो मग्नः स्थिरोऽमोहो, ज्ञानी शान्तो जितेन्द्रियः ॥
त्यागी क्रियापरस्तृप्तो, निर्लेपो निस्पृहो मुनिः ॥ १ ॥
विद्याविवेक संपन्नो, मध्यस्थो भयवर्जितः ॥
अनात्म शंसकस्तत्त्व, दृष्टिः सर्वसमृद्धिमान् ॥ २ ॥
ध्याता कर्मविपाकाना, मुद्विग्नो भववारिधेः ॥
लोक संज्ञाविनिर्मुक्तः, शास्त्रदृग् निष्परिग्रहः ॥ ३ ॥
शुद्धानुभववान् योगी, नियागप्रतिपत्तिमान् ॥
भावार्चाध्यान तपसां, भूमिः सर्व नयाश्रयः ॥ ४ ॥
स्पष्टं निष्टंकितंतत्त्व, मष्टकैः प्रतिपत्तिमान् ॥
मुनिर्महोदयज्ञान, सारं समधिगच्छति ॥ ५ ॥

---

## ॥ रहस्यार्थ ॥

१–२. अक्षय अने अव्याबाध एवुं मोक्षसुख मेळवी आपनार श्रेष्ठ ज्ञानसंपन्न कोण थइ शके छे? तेनुं समाधान करे छे. जे सर्वथा उपाधि मुक्त थइ सहज गुणसंपत्तिनेज सार लेखी तेनेज ग्रहे छे, तेमांज मग्न थाय छे, तेमांज स्थिरता करे छे, इतर कोइ वस्तुमां मुंझातो नथी, बीजा संकल्प–विकल्प करतोज नथी पण शान्त चित्तथी स्वभावमांज रमे छे, मन अने इंद्रियो उपर जेणे जय मेळव्यो छे पण तेमने पराधीन थइ रहेतो नथी, बाह्यभावनो जेणे त्याग कर्यो छे, अने अंतरभाव जेने जागृत थयो छे, तेनीज पुष्टि माटे जे प्रयत्न करे छे पण बीजी नकामी बाबतमां राचतो नथी, सहज संतोषी छे, एटले जेणे विषयादि तृष्णाने छेदी छे, जे जगतथी न्यारोज रहे छे, तेमां लेपातो नथी, जे कोइनी आशा राखतो नथी, केवळ निःस्पृह थइ रहे छे, जे सारासारने सारी रीते समजे छे अने समजीने असारना परिहार पूर्वक सार मार्गने संग्रहे छे, सुख दुःखमां समदर्शी छे, तेमां हर्ष विषाद करतोज नथी, जे भय तजी निर्भयपणे स्व–इष्ट साधे छे, जे कदापि स्व–श्लाघा के परनिन्दा करतोज नथी जे तत्त्वदृष्टि होवाथी वस्तुने वस्तुगतेज जाणे–जोवे छे, जे धर्ममांज सकल समृद्धि रहेली माने छे, जे कर्मनुं स्वरूप यथार्थ समजीने शुभाशुभ कर्मना उदयमां साम्य (समता) धारे छे, पण मनमां ते संबंधी—

संकल्प-विकल्प करतो नथी, वळी जे आ भव-समुद्रथी उद्विग्न छतो तेनो वेगे पार पामवा माटे नित्य प्रमादरहित प्रयत्न कर्या करे छे, जेणे लोक संज्ञा तजी छे एटले मिथ्या लोभ लालचमां नहिं तणातां जे सामा पूरे छे, जे शास्त्र दृष्टिथी सर्वभावने प्रत्यक्षनी पेरे देखे छे, जेणे मूर्छाने तो मारी नाखी छे तेथी कोइपण पदार्थमां प्रतिबंध करतो नथी, जेने शुद्ध अनुभव जाग्यो तेथी जेणे चोथी उद्गारदशा धारी छे, अने केवळ ज्ञान पण जेने अति निकटज रहेलुं छे, जेणे [illegible] मर्थ योग जेणे साध्यो छे, वीतराग आज्ञानुं [illegible] निश्चित याग जेणे साध्यो छे, भावपूजामां जे तल्लीन थयो छे, श्रेष्ठ ध्यान जेणे साध्युं छे, तेमज समता पूर्वक [illegible] जेणे कठीन कर्मनो पण क्षय कर्यो छे, अने [illegible] जेणे समानता बुद्धि स्थापी छे, तेथी [illegible] [illegible] शके छे, एवा परमार्थदर्शी नित्यत्यागी मुनिराज अनेकांत ३२ अष्टक पदे करी एवा निश्चित [illegible], परम पद साधक 'ज्ञानसार' ने सम्यग् आराधी शके छे.

---

निर्विकारं निराबाधं, ज्ञानसारमुपेयुषां ॥
विनिवृत्तपराशानां, मोक्षोऽत्रैव महात्मनां ॥ ६ ॥

चित्तमार्द्रीकृतं ज्ञान,-सार सार स्वतोर्मिभिः ॥
नाप्नोति तीव्रमोहाग्नि, प्लोष शोष कदर्थना ॥ ७ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

६. सर्वथा विकारवर्जित (निर्दोष) अने विरोधरहित एवा आ ज्ञानसारने प्राप्त थयेला अने परभावथी मुक्त थयेला महात्माओने अहिंज मोक्ष छे, अर्थात् एवा योगीश्वरो जीवनमुक्त छे.

७. ज्ञानसारना उत्तम रहस्य वडे जेनुं मन द्रवित (ज्ञान-शीतल) थयुं छे, तेने तीव्र मोह अग्निथी दाझवानो भय नथी, अर्थात् आवुं सार-रहस्य जेने परिणम्युं छे तेने मोह परास्त करी शकतो नथी.

अचिन्त्या कापि साधूनां, ज्ञानसार गरिष्ठता ॥
गतिर्ययोर्ध्वमेव स्या, दधः पातः कदापि न ॥ ८ ॥
क्लेशक्षयो हि मंडूक, चूर्णतुल्यः क्रियाकृतः ॥
दग्धतच्चूर्णसदृशो, ज्ञानसार कृतः पुनः ॥ ९ ॥
ज्ञानपूतां परेऽप्याहुः, क्रियां हेमघटोपमां ॥

युक्तं तदपि तद्भावं, न यद्भग्नापि सोज्झति ॥१०॥
क्रियाशून्यं च यज्ज्ञानं, ज्ञानशून्या च याक्रिया ॥
अनयोरंतरं ज्ञेयं, भानु खद्योत योरिव ॥ ११ ॥
चारित्रं विरतिः पूर्णा, ज्ञानस्योत्कर्ष एव हि ॥
ज्ञानाद्वैतनये दृष्टि, र्देयानद्योग सिद्धये ॥ १२ ॥

---

॥ रहस्यार्थ ॥

८. ज्ञानसारथी गुरु (वजनवाळा) थया छतां साधुजनो उंची गतिज पामे छे. कदापि नीची गतिमां जताज नथी ए आश्चर्य छे. केमके भारे वजनवाळी वस्तु तो स्वभाविक रीते नीचेज जवी जोइये.

९. ज्ञान विना शुष्क क्रियाथी मात्र नामनोज क्लेश क्षय थाय छे अने ज्ञानसारनी सहायथी तो समूळगो क्लेशनो क्षय थइ शके छे.

१०. ज्ञानयुक्त क्रिया सोनाना घडा जेवी छे, एम वेद-व्यासादिक कहे छे ते व्याजबी छे केमके कदाच ते भांगे तोपण सोनुं जाय नहिं. फक्त घाट घडामण जाय. तेम कदाच कर्मवशात् ज्ञानी क्रियाथी पतित थइ जाय तोपण तत् क्रिया संबंधी तेनी भावना नष्ट थइ जती नथी.

११. क्रिया शून्य ज्ञानमां अने ज्ञान शून्य क्रियामां जेटलो सूर्य अने खजूवामां आंतरो छे तेटलोज आंतरो छे. अर्थात् क्रिया-रहित पण भावना-ज्ञान सूर्य समान छे अने ज्ञान शून्य शुष्क क्रिया मात्र खजूवा जेवी छे.

१२. विभावथी संपूर्ण विरमवा रूप यथार्थ चारित्र पण वि-शिष्ट ज्ञाननुंज फळ छे एम समजीने एवा उत्कृष्ट चारित्रनी सिद्धि माटे ज्ञानथी अभिन्न एवा संयममार्गमां दृष्टि देवी. जेथी संयमनी पुष्टि थाय एवो ज्ञान-योगनो अभ्यास प्रमाद रहित करवो. संपूर्ण अभ्यासथी सहज चारित्र सिद्ध थशे.

---

सिद्धिं सिद्धपुरे पुरंदरपुरस्पर्धावहे लब्धवां ॥
श्चिद्दीपोऽयमुदारसारमहसा दीपोत्सवे पर्वणि ॥
एतद् भावन भाव पावन मन श्चंचच्चमत्कारिणां ॥
तैस्तैर्दीपशतैः सुनिश्चयमतैर्नित्योऽस्तु दीपोत्सवः॥१३॥

---

१३. स्वर्गपुरी जेवा सिद्धपुरमां दीवाळी पर्व समये उदार अने सार ज्योतियुक्त आ ज्ञानसार रूप भावदीपक प्रगट थयो, अर्थात् आ ग्रंथ सिद्धपुर नगरमां दीवाळीना दिवसे पूर्ण कर्यो. आ

ग्रंथनो करेलो सुंदर मार्गथी पारित चरित मनवाला मन नीतिने आवा सौंदर्य गमे मात्र दीसतो मोह निज रिझावो मात्र ! परि आ ग्रंथकारनी अंतर आशिष छे.

---

केषांचिद्विषयज्वरातुरमहो चित्तं परेषां विषा-
वेगोदर्क कुतर्क मूर्छित मथान्येषां कुवैराग्यतः ॥
लग्नालर्क मबोध कूप पतितं चास्ते परेषामपि ॥
स्तोकानां तु विकारभार रहितं तद् ज्ञानसाराश्रितं॥१४॥

---

१४. केटलाकनुं चित्त विषय–पीडाथी विह्वल होय छे. केटलाकनुं चित्त कुत्सित ( मंद ) वैराग्यथी हडकवावाळुं होवाथी जे ते विषयमां चोतरफ दोडतुं होय छे. केटलाकनुं वळी विषय–विषना आवेगथी थता कुतर्कोमां मग्न थयेलुं होय छे, तेमज केटलाकनुं तो अज्ञानरूप अंधकूपमां डूबेलुं होय छे. फक्त थोडाकनुं चित्त ज्ञानसारमां लागेलुं होवाथी विकार विनानुं होय छे. तात्पर्य के ज्ञानसारनी प्राप्ति महा भाग्येज थइ शके छे. जेमनुं चित्त विकार रहित होवाथी अधिकारी ( योग्य ) बन्युं छे तेमनेज आ ज्ञानसार संप्राप्त थइ शके छे. बाकीना योग्यता विनाना ने तेनी प्राप्ति थइ शकती नथी.

---

जातोद्रेक विवेक तोरण ततो धावल्यमातन्वते ॥
हृद्गेहे समयोचितः प्रसरति स्फीतश्च गीतध्वनिः ॥
पूर्णानंदघनस्य किं सहजया तद्भाग्य भंग्याभवत् ॥
नैतद् ग्रंथ मिषात् करग्रहमहश्चित्रं चरित्रश्रियः ॥२५॥

---

२५. चारित्र लक्ष्मीनो थनो विवाह महोत्सव आ ग्रंथना मिषथी पूर्णानंदी आत्माना सहज तेनी भाग्य रचना वडे वृद्धि पामेला विवेकरूपी तोरणनी श्रेणिवाळा मनमंदिरमां धवलताने विस्तारे छे अने समयोचित (विवाह) मंगळ गीतनो ध्वनि पण मांहे प्रसरी रह्यो छे. तात्पर्य के चारित्र लक्ष्मीनो पूर्णानंदघन ( आत्मा ) नी साथे विवाह थाय छे त्यारे तेनुं मन उच्च प्रकारना विवेकवाळुं अने उज्वल निर्मल बने छे तेमज महा मंगळमय स्वाध्याय ध्याननो घोष चाल्यो रहे छे. लौकिकमां पण विवाह समये घरमां ऊंचा तोरण बांधवामां आवे छे. घरने धोळवामां आवे छे अने विविध वाजिंत्र तथा मंगळ गीत गावामां आवे छे, तेम अहिं चारित्र लक्ष्मीने वरनार पूर्णानंदीने सर्व परमार्थथी थयुं छे. सम्यग् ज्ञान अने चारित्रना मेळापथी सर्वत्र आवी घटना थाय छे अने थशे. एमां शुं आश्चर्य छे? अपितु कंइज नहिं.

---

भावस्तोमपवित्रगोमयरसै र्लिप्तैव भूः सर्वतः ॥
संसिक्ता समतोदकैरथपथि न्यस्ता विवेक स्रजः ॥
अध्यात्मामृतपूर्णकामकलशश्चक्रेऽत्र शास्त्रे पुरः ॥
पूर्णानन्दघने पुरं प्रविशति स्वीयंकृतं मंगलम् ॥ १६ ॥

---

१६. पूर्णानंदघन पोते अप्रमाद नगरमां प्रवेश करे छते, पवित्र भावनाओ रूपी गोमयथी भूमि लिंपेली छे, चोतरफ समतारूपी जळनो छंटकाव करेलो छे, मार्गमां विवेकरूपी पुष्पनी माळाओ पाथरेली छे, अने अध्यात्मरूपी अमृतथी भरेलो मंगल कलश आ शास्त्रद्वाराज आगळ करेलो छे. एम विविध उपचारथी निज भाव मंगल कर्युं छे.

---

गच्छे श्री विजयादिदेव सुगुरोः स्वच्छे गुणानां गणैः ॥
प्रौढिं प्रौढिम धाम्नि जीतविजयप्राज्ञाःपरामैयरुः ॥
तत्सातीर्थ्यभृतां नयादि विजय प्राज्ञोत्तमानां शिशोः ॥
श्रीमन् न्याय विशारदस्य कृतिनामेषाकृतिः प्रीतये ॥१७॥

---

१७. ज्ञानदर्शन अने चारित्रादिक गुणोना समूहथी निर्मल अने उन्नतिना स्थानरुप श्री विजयदेव सूरिना गच्छमां मान्न श्री जितविजयजी श्रेष्ठ उन्नतिने पाम्या. तेमना गुरुभाई श्री नयविजयजी पंडितमां श्रेष्ठ थया. तेमना शिष्य श्रीमन् न्याय विशारद विद्वना धरनार श्री यशोविजयजीनी आ रचना पंडित लोकोनी प्रीतिने अर्थे थाओ! विविध गुण विशाळ एवा तपगच्छमां थयेला पंडित श्री नयविजयजीना शिष्य श्री यशोविजयजीए आ ज्ञानसार सूत्रनी रचना बांधी छे. आ ग्रंथमां शान्त रसनीज प्रधानता होवाथी ते रसज्ञ पंडितोने अभीष्टज थशे. केमके सर्व रसमां प्रधानरस शान्तरसज छे अने ते रसनी सिद्धिथीज आत्मा निरुपाधिक सुख पामी शके छे. आ अपूर्व अने अतिशय गंभीर ग्रंथनु स्वरूप निरुपण करतां जे कंइ

पुण्यार्जन थयुं होय तेथी अमने तथा श्रोता जनोने पवित्र शान्तरसनी पुष्टि थाओ! तथास्तु.! शुभंभ्यात् सर्व भूतानाम्.

॥ श्री कल्याण मस्तु. ॥

# वैराग्यसारनें उपदेश रहस्य.

(१) जे पराइ निंदा विकथा करवामां मुंगो छे, परस्त्रीनुं मुख जोवामां आंधळो छे, अने परायुं धन हरवामां पांगळो छे, तेवो महापुरुष जगमां जयवंतो वर्ते छे, परनिंदा, परस्त्रीमां रति अने परद्रव्य हरण महा निंद्य छे.

(२) जे आक्रोश भरेलां वचनोथी दुभातो नथी अने खुशामतथी खुशी थइ जतो नथी, जे दुर्गन्धथी दुर्गंछा करतो नथी, अने सुगन्धथी राजी थइ जतो नथी, जे स्त्रीना रूपमां रति धारतो नथी, अने मृतश्वानथी मुख लावतो नथी, एवो समभावी उदासी योगीश्वरज सर्वत्र सुख समाधिमां रहे छे.

(३) जेने शत्रु अने मित्र बंने समान छे, जेने भोगनी लालसा तूटी गइ छे, अने तपश्चर्यामां जेने खेद थतो नथी, जेने पत्थर अने सुवर्ण (रत्नादिक) बंने समान छे, एवा शुद्ध हृदयवाळा समभावी योगीजनोज खरा योगधारी छे.

(४) कुरंगनी जेवा चंचळ नेत्रवाळी अने काळा नागनी जेवा कुटिल केशने धारवावाळी कामिनीना राग पाशमां जे नथी पडी जाता तेज खरा शूरवीर छे.

(५) स्त्रीना मध्यमां कृशता, भ्रुकुटीमां वक्रता; केशमां कुटीलता,

होठमां रक्तता, गतिमां मंदता, स्तनभागमां कठीनता, अने चक्षुमां चंचलता स्पष्ट जोइने फक्त कामाकुल मंदमति जनोज वैराग्यने भजता नथी. सुविवेकी जनोने तो ते वैराग्यनी वृद्धि माटेज थायछे.

(६) स्त्रीयो कपट करी गद्गद् वाणीथी बोले छे, तेने कामांधजनो प्रेमउत्तम करीके लेखे छे. विवेकी हंसो तेथी ठगाइ जता नथी.

(७) ज्यां सुधी आहारनी लोलुपता तजी नथी, सिद्धांतना अर्थरूपी महौषधिनुं सम्यग् सेवन कर्युं नथी, अने अध्यात्म अमृतनुं विधिवत् पान कर्युं नथी, त्यां सुधी विषय ज्वरनुं जोर जोइए तेवुं घटतुं नथी. विषय तापनी शांति माटे रसलोलुपता त्याग पूर्वक सिद्धांतसार चूर्ण तथा तत्त्वामृतनुं सम्यग् सेवन करवुंज जोइए.

(८) भरयौवन वयमां कामने जय करनार धन्य धन्य छे.

(९) जेणे नारी जोइने कामिनीने तजी छे, अने संयमथीने सेवी छे, एवा सुविवेकी साधुने कुपित थयेलो पण काम कंइ करी शकतो नथी.

(१०) स्त्रियोने देखतांज कामज्वरथी परवशतार्थी संयम-रत्न हीण थइ जाय छे, पण नरकगतिना विपाक संभारतांज तत्त्वविचार प्रगट थवाथी गमे तेवी व्हाली वल्लभा पण विरस जेवी भासे छे.

(११) जेमणे यौवन वयमां पवित्र धर्म धुराने धारी महाव्रतो

अंगीकार कर्या छे; तेवा भाग्यशाळी भव्योथीज आ पृथ्वी पावन थयेली छे.

(१२) कामदेवना बंधुभूत वसंतने पामीने सकळ वनराजी पण विविध वर्णवाळी मांजरना मिषथी रोमांचित थयेली लागे छे, तेमां सिद्धांतना सारनुं सतत सेवन करवाथी, जेमनुं मन विषयतापथी लगारे तप्त थतुं नथी, एवा संत सुसाधु जनोनेज धन्य छे.

(१३) स्वाध्यायरुपी उत्तम संगीत युक्त, संतोषरुपी श्रेष्ठ पुष्पथी मंडित, सम्यग् ज्ञान विलासरुपी उत्तम मंडपमां रही शुभ ध्यान शय्याने सेवी, तत्त्वार्थ बोधरुपी दीपकने प्रगटी, अने समतारुपी श्रेष्ठ स्त्रीनी साथे रमण करी केवल निर्वाण सुखना अभिलाषी हिंसयोज रात्रीने समाधिमां गाळे छे.

(१४) शुद्ध ध्यानरुपी महा रसायणमां जेनुं मन मग्न थयुं छे; तेने कामिनीना कटाक्ष वगेरे विविध हावभावो शुं करनार छे?

(१५) सम्यग् ज्ञानरुपी जेना उंडा मूळ छे, समकितरुपी जेनी मजबूत शाखा छे, एवा व्रत-वृक्षने जेणे श्रद्धाजळथी सिंच्युं छे तेने अवश्य मोक्षफळ आपे छे. स्वर्गादिकना सुख तो पुष्पादिकनी पेरे प्रासंगिक छे, तेतो सहजमां प्राप्त थइ शके छे.

(१६) क्रोधादिक उग्र कषायरुपी चार चरणवाळो, व्यामो-

हरूपी सूंढवाळो, राग द्वेषरूपी तीक्ष्ण दीर्घ दांतवाळो, अने दुर्वार कामथी मदोन्मत्त थयेलो, महा मिथ्यात्वरूपी दुष्ट गजने सम्यग् ज्ञान-अंकुशना प्रभावथी जेणे वश कर्यो छे, ते महानुभावेज प्रणे लोकने स्ववश कर्या छे एम जाणवुं.

(१७) यशकीर्त्तिने माटे पोतानुं सर्वस्व आपीदे एवा, अने पोताना स्वामीने माटे प्राण पण आपीदे एवा, बहु जनो मळी आवशे, पण शत्रुमित्र उपर जेनुं मन समरस ( सरखुं ) वर्ते छे एवा तो कोइ विरलाज देखाय छे.

(१८) जेनुं हृदय दयार्द्र छे, वचन सत्यभूषित छे, अने काया परमार्थ साधनारी छे, एवा विवेकवानने कलिकाळ शुं करी शकवानो छे ?

(१९) जे कदापि असत्य बोलतोज नथी, जे रणसंग्राममां पाछो पानी करतो नथी, अने याचकोनो अनादर करतो नथी, तेवा रत्नपुरुषोज आ पृथ्वी रत्नवती कहेवाय छे. केमके कहेवाय छे के-' बहुरत्ना वसुंधरा. '

(२०) सर्व आशारूपी दृशने कापवा कुहाडा जेवो काळ, जो सर्वनी पाछळ पड्यो न होत तो विविध प्रकारना विषय सुखथी कोइ कदापि विरक्त थातज नहिं.

(२१) जगतनी कल्पित मायामां फसाइ जीवो मनमान्युं मारुं मारुं कर्या करे छे, पण मूढताथी समीपवर्ती कोपेला कृतांत–काळने देखी शकता नथी. नहिं तो जगतनी मिथ्या मोह मायामां अंजाइ जइ मारुं मारुं करीने तेओ केम मरे?

(२२) छती सामग्रीनो सदुपयोग करवामां बेदरकार रहेनारने काळ समीप आव्ये छते मनमां खेद थाय छे के हाय! मे स्वाधीनपणे कांइ पण आत्म साधन न कर्युं, हवे पराधीन पडेलो हुं शुं करी शकुं? प्रमादथीज स्वाधीनपणे सद् सामग्रीने सफळ करी जाणनारने पाछळथी खेद करवो पडतोज नथी.

(२३) प्रथम प्रमादवडे तप जप व्रत पचखाण नहिं करनार कायर माणस पाछळथी व्यर्थ मात्र दैवनेज दोष देछे. खरो दोष तो पोतानोज छे के पोते छती सामग्रीए सवळा चाल्यो नहिं.

(२४) बाल्य शीघ्र यौवन वयने प्राप्त करतो अने जुवान जरा अवस्थाने प्राप्त थतो अने तेपण काळने वश थयो छतो, दृष्ट नष्ट थयो देखाय छे; एवां प्रत्यक्ष कौतुकवाळा बनाव देख्या बाद बीजा इंद्रजाळनुं शुं प्रयोजन छे? आ संसारज अनेक पात्र युक्त विचित्र नाटकरूप छे.

(२५) कर्मनुं विचित्रपणुं तो जुओ! के मोटा राजाधिराज

पण दुर्दैव योगे भीख मागतो देखाय छे; अने एक पामर भीखारी जेवो मोटुं साम्राज्य सुख पामे छे. ए पूर्वकृत कर्मनोज महिमा छे.

(२६) परलोक जतां प्राणीने पुत्रादिक संतती तेमज लक्ष्मी विगेरे कामे आवतां नथी. फक्त पुन्यने पापज तेनी साथे जाय छे.

(२७) मोहना मदथी मानवी मनमां धारे छे के, धर्म तो आगळ कराशे पण विकराळ काळ अचानक आवीने ते बापडानो कोळीयो करी जाय छे. पवित्र धर्मनुं आराधन करवामां प्रमाद सेवनार खरेखर ठगाइ जाय छे, माटेज कह्युं छे के 'काले करवुं होय ते आजे कर अने आजे करवुं होय ते अब घडीए कर.' केमके काळने काळनो भय छे.

(२८) रावण जेवा राजवी, हनुमान जेवा वीर अने रामचंद्र जेवा न्यायीनो पण काळ कोळीयो करी गयो तो बीजानुं तो कहेवुंज शुं? आथीज काळ सर्वभक्षी कहेवाय छे; ए वात सत्य छे.

(२९) सुकृत या सदाचरण विना मायामय बंधनोथी बंधायेला संसारी जीवोनी मुक्ति-मोक्ष शी रीते थइ शके वारु?

(३०) आ मनुष्य जन्मरुपी चिंतामणी रत्न पामीने, जे गफलत करे छे, ते तेने गुमावीने पाछळथी पस्तावो करे छे. काम

क्रोध, कुबोध, मत्सर, कुबुद्धि अने मोह मायावडे जीवो स्वजन्मने निष्फळ करी नांखे छे.

(३१) आ मनुष्य देहादिक शुभ सामग्रीनो सदुपयोग करवाथी निर्वाण सुख स्वाधीन थइ शके तेम छतां, रागांध बनी जीव मोहमायामां मुंझाइ मूढनी जेम कोटी मूल्यवाळुं रत्न आपी कांगणी खरीदे छे.

(३२) भयंकर नर्कादिकनो मोटो डर न होत तो कोइ कदापि पापनो त्याग करी शकत नहि; अने सद्गुणनो मार्ग सेवी शकत नहि.

(३३) जेणे निर्मल शील पाळ्युं नथी, शुभ पात्रमां दान दीधुं नथी अने सद्गुरुनुं वचन सांभळीने आदर्युं नथी, तेनो दुर्लभ मानव भव अफळ गयो जाणवो.

(३४) संयोगनुं सुख क्षणीक छे; देह व्याधिग्रस्त छे अने भयंकर काळ नजदीक आवतो जाय छे; तोपण चित्त पाप कर्मथी विरक्त केम थतुं नथी? अथवा संसारनी मायाज विलक्षण छे.

(३५) आ संसार चक्रमां जीव अनंतशः जन्म मरणना असह्य दुःख सहां छतां हजी तेथी मन उद्विग्न थतुं नथी, अने पाप क्रियामां तो ते अहोनिश मगन रहे छे.

(३६) अहो आत्मा सांढनी पेरे चित्त स्वेच्छा मुजब निंद्य मार्गमां भम्या करे छे; पण चारित्र धर्मनी धुराने अने महाव्रतना भारने वहन करतुं नथी! आथीज आत्मानी संसार चक्रमां बहु प्रकारे न्यराबी थाय छे.

(३७) पूर्व पुण्ययोगे अनुकूळ सामग्री मळ्या छतां प्रमादना वशथी जीव कंइ पण आत्म साधन करी शकतो नथी, तेथीज तेने संसार चक्रमां पुनः पुनः भमवुं पडे छे.

(३८) जेणे संसार संबंधी सर्व दुःखनां मूळ कारण भूत क्रोध, मान, माया, अने लोभरुपी चारे कषायोने हठाववा प्रयत्न कर्यो नथी, ते बापडाए हाथमां आवेलुं मनुष्य जन्मरुपी कल्पवृक्षनुं अमृत फळ चाख्युंज नथी.

(३९) बाल्यवय क्रीडा मात्रमां, यौवनवय विषयभोगमां अने वृद्ध अवस्था विविध व्याधिना दुःखमां हारी जनारने गुरुजना अभावे परलोकमां कंइ पण सुख साधन मळी शकतुं नथी.

(४०) जे द्रव्यना लोभथी जीव अनेक आकरां जोखममां उत रे छे, ते द्रव्यनुं अस्थिरपणुं विचारीने संतोष वृत्ति धारवी उचित छे.

(४१) आ मन मर्कट मोह मदिराना मदथी मत्त थयुं छतुं; अनेक प्रकारनी कुचेष्टा करवा तत्पर रहे छे, सत् समागमरुपी अंकुश

सिंचन विना मननुं ठेकाणुं पडवुं महा मुश्केल छे. सद्बोधथी केळ-वाइने लांबा अभ्यासे ते पांसरुं थाय छे.

(४२) निर्मळ शीलव्रतधारी श्रावकने, परस्त्रीथी अने उत्तम चारित्रधारी साधुजनने सर्व स्त्रीथी निरंतर चेतता रहेवानी खास जरुर छे. प्रमादथी घणा पतित थइने पायमाल थइ गया छे.

(४३) जो विषयभोगमां लिप्त जतुं मन रोकवामां आव्युं नहिं तो; भस्म चोळवाथी, धूम्र पान करवाथी, वस्त्र त्यागथी, तेमज अ-नेक बीजां कष्ट सहन करवाथी के जपमाळा फेरववाथी शुं वळ-वानुं हतुं ?

(४४) अमृत जेवां मधुर वचनथी खळ पुरुषोने जे सन्मार्गमां जोडवा इच्छे छे; ते मधना बिंदुथी खारा समुद्रने मीठो करवा वांछे छे, अने निर्मळ जळथी कोयलाने साफ करवा मांगे छे, जे बनवुं केवळ अशक्य छे.

(४५) कुमतिने सर्वथा तिलांजली दइने, सुमतिनो सर्वदा आदर करनार महामति दुर्गतिने दळीने सद्गतिनो भागी थइ शके छे.

(४६) कमळना पत्र उपर रहेला जळबिंदु समान जीवितने, चंचळ लेखीने विविध विषय भोगथी विरमीने, मोक्षार्थी जीवे दान

शील तप अने भावना रुपी पवित्र धर्मनुं सेवन करवुंज उचित छे.

(४७) सर्व संयोगिक भावोने क्षण विनाशी समजीने, गुरु कृपाथी शीघ्र स्वहित साधी लेवा यत्ननो श्रम करवो विवेकीने उचित छे.

(४८) जेमणे दुर्जननी संगति करी तेणे धर्म साधननी आ अपूर्व तक खोइ छे; एम निश्चयथी समजवुं. दुर्जन द्विजिह्व सर्पनी जेवाज झेरीला होवाथी सामाने पण विक्रिया उपजावे छे.

(४९) जो परमात्मामां पूर्ण प्रेम जाग्यो नहि यातो संपूर्ण गुणानुराग जाग्यो नहि, तो विविध शास्त्र परिश्रम मात्रथी शुं वळ्युं?

(५०) मिथ्याडंबरथी जीव परीणामे भारे दुःखी थाय छे. मिथ्या दमामथी जीव ऊंडुं वेतरवा जाय छे, जेमां निश्चे हानिज थाय छे. एवो दंभ निश्चे दुर्गतिनुंज मूळ छे. माटे सर्व प्रकारे कपटहाथि तजीने सरळ भावज धारण करवो मोक्षार्थीने युक्त छे. दंभ युक्त सर्व कष्ट करणी मिथ्या थाय छे, निर्मळ ज्ञान वैराग्य योगेज दंभनी दुष्ट धाटी उघडी थाय छे.

(५१) हे हृदय! करुणा समान बीजो कोइ अमृतरस नथी पर-द्रोह समान बीजुं हालाहल झेर नथी, सदाचरण समान बीजो क-ल्पवृक्ष नथी, क्रोध समान कोइ दावानळ नथी, संतोष उपरांत

कोइ प्रिय मित्र नथी, अने लोभ समान कोइ शत्रु नथी. आमांथी युक्तायुक्त विचारीने तुमने रुचे ते आदर! हितकारी मार्गज आदरवो ए सद्विवेक पाम्यानुं सार छे.

(५२) हे भाइ जो तुं निर्वाण सुखने वांछतो होय तो परम क्षान्तिरुपी प्रियानो आदर कर; केमके तेणी शील श्रद्धा, ध्यान विवेक, कारुण्य औचित्य, सद्बोध अने सदाचरणादिक अनेक गुण रत्नोथी अलंकृत छे. क्षान्ति-क्षमानुं सम्यग् सेवन कर्या विना कोइ कदापि मोक्षपद पामी शकेज नहि.

(५३) जे रागद्वेष अने मोहादिक दुष्ट दोषोथी सर्वथा मुक्त थइ, परमात्मपदने प्राप्त थया छे, अने जेमनुं वचन सर्व विरोधरहित छे, जे जगत् त्रयना निष्कारण बंधु छे; एवा परम कारुणिक सर्वज्ञ पुरुषज शरण करवा योग्य छे. एवा आप्त पुरुषना वचन अनुसारे वर्तनारा सत्पुरुषो पण मोक्षार्थी सज्जनोए सावधानपणे सेवन करवा योग्यज छे.

(५४) ज्यां सुधी सुकृतवडे करेलो पूण्यनो संचय पहोंचे छे, त्यां सुधीज सर्व प्रकारनी अनुकूळ सुख सामग्री मळी आवे छे, एम समजीने शुभ धर्मकरणी करवा मन सदोदित रहे तेम प्रमादरहित वर्त्तवुं.

(५५) ज्यां सुधी दुष्कृत करेलो पाप संचय पहोंचे छे त्यांसुधीज

सर्व प्रकारनी प्रतिकूलताओनुं कारण मळी आवे छे, एम समजीने पूर्वे पापनो क्षय करवा उदित दुःखने समभावे सहन करवा पूर्वक नवां पाप कर्मथी सदा निवर्तीने शुभ धर्मकरणी करवा सदा सावधान रहेवुं युक्त छे.

(५६) जेमणे आ अमूल्य मनुष्य जन्म पामीने प्रमादने परवश थइ धर्म आराध्यो नहि, तेमज छते धने कृपणतायी तेनो सदुपयोग कर्यो नहि, एवा विवेक विकळने मोक्षनी प्राप्ति दूरज छे.

(५७) आकाश मध्ये पण कदाच पर्वतशिला मंत्रतंत्रना योगे लांबो काळ लटकी रहे, दैव अनुकूळ होय तो बे हाथना बळे कदाच समुद्र पण तराय अने धोळे दहाडे पण कदाच ग्रह योगथी आकाशमां स्फुट रीते ताराओ देखाय परंतु हिंसाथी कोइनुं कदापि कंइ पण कल्याण संभवतुंज नथी.

(५८) जेम ज्योतिश्चक्र रात्री अने दिवसनुं मंडन छे, तेम अखंड शील सतीओ अने यतिओनुं खरेखरुं भूषण छे.

(५९) मायावडे वेश्या, शीलवडे कुल बालिका, न्यायवडे पृथ्वीपति, अने सदाचारवडे यति महात्मा शोभे छे.

(६०) ज्यां सुधीमां शरीर व्याधिग्रस्त थइ न जाय, ज्यां सुधीमां जरा अवस्थाथी देह जर्जरित थइ न जाय, अने ज्यां सुधीमां

इंद्रियोनुं बळ घटी न जाय, त्यां सुधीमां स्वशक्ति अने योग्यता मुजब पवित्र धर्मनुं सेवन करवुं युक्त छे, सद् उद्यमथी सकळ कार्यनी सिद्धि थाय छे; अने प्रमादाचरणथी सकळ कार्यने हानि पहोंचे छे.

(६१) मद्य ( Intoxication ) विषय ( evil propensities) कषाय ( Wrath etc. ) निद्रा ( Ilenss ) अने विकथा–कपोल कथारुप पांच प्रकारना प्रमाद जीवोने दुरंत व्यथामां पाडे छे.

(६२) जगद्गुरु जिनेश्वर प्रभुना पवित्र वचननुं उल्लंघन करीने स्वच्छंद वर्त्तन चलाववुं एज प्रमादनुं व्यापक लक्षण छे.

(६३) एवा प्रमादना जोरथी चौद पूर्वधर समान समर्थ पुरुषो पण सत्य चारित्र धर्मथी चलायमान थइ पतित थइ गया छे. तो बीजा अल्पज्ञ अने ओछा सामर्थ्यवाळाओनुं तो कहेवुंज शुं ?

(६४) थोडुं रुण थोडुं व्रण ( चांदु ) थोडो अग्नि अने थोडा कषायनो पण कदापि विश्वास करवो नहि. केमके ते सर्व थोडामांथी वधीने मोटुं भयंकर रुप धारण करे छे.

(६५) ज्यां सुधी क्रोधादि चारे कषायोनो सर्वथा क्षय थाय नहि, थोडो पण कषाय शेष रह्यो त्यां सुधी तेनो विश्वास करवो नहि. थोडा पण अवशिष्ट रहेला कषायनी उपेक्षा करवाथी क्वचित्

भारे विषम परीणाम आवे छे, माटे तेमनो सर्वथा क्षय करवा सतत् प्रयत्न करवो युक्त छे.

(६६) ज्ञानी पुरुषो क्रोधादिक चारे कषायने चंडाळचोकडी तरीके ओळखावे छे, अने तेनाथी सर्वथा अळगा रहेवा आग्रह करे छे.

(६७) राग अने द्वेष ए बंने क्रोधादिक चारे कषायनुं परिणाम छे, अथवा तो राग अने द्वेषथी उक्त क्रोधादि चारे कषायनी उत्पत्ति अने वृद्धि थाय छे. एम समजीने रागद्वेषनोज अंत करवा उजमाळ थवुं युक्त छे. ते बंनेनो अंत थये पूर्वोक्त चारे कषायनो स्वतः अंत थइ जाय छे.

(६८) रागद्वेष ए बंने मोहथकी प्रभवे छे, तेथी ते बंने मोहराज पुत्र तरीके ओळखाय छे, रागने केसरी सिंह जेवो बळवान कह्यो छे. अने द्वेषने मदोन्मत्त हाथी जेवो मस्त मान्यो छे. तेथी तेमनो जय करवा ज्ञानी पुरुषो मोटा सामर्थ्यनी जरुर जोवे छे.

(६९) राग अने द्वेष केवळ मोहराज विकारभूत होवाथी, ज्ञानी पुरुषो मोहनेज मारवानुं निशान तारे छे. मोह सर्व कर्ममां अग्रेसर छे.

(७०) मोहनो क्षय थये छते शेष सर्व परिवार पण स्वतः क्षय थाय छे. पण तेनी प्रबळता वडे सर्व शेष परिवारनुं पण प्राबल्य वधतुं जाय छे, दुनीयामां बळवानमां बळवान शत्रु मोहज छे.

(७१) काम, क्रोध, मद मत्सरादिक सर्व मोहनाज परिवार छे, एम समजीने मोह क्षयार्थीए ते सर्वथी चेतता रहेवानी खास जरूर छे.

(७२) हुं अने माहरुं एवा गुप्त मंत्रथी मोहे जगतने आंधळुं करी नांख्युं छे. अर्थात् ममताथीज मोहनी वृद्धि थती जाय छे.

(७३) नहिं हुं अने नहि मारुं ए मोहनेज मारवानो गुप्त मंत्र छे. अर्थात् निर्ममत्वज मोहने मारवानुं प्रबळ साधन छे.

(७४) आत्मानुं शुद्ध स्वरूप समजवाथी तेमज परभावने बराबर ओळखवाथी मोहनुं जोर पातळुं पडे छे.

(७५) स्फटिक रत्नोनी जेवुं निर्मळ आत्मानुं स्वरूप छे, छतां कर्मकलंकथी ते मलीनताने पामेलुं होवाथी, और तेमां मुंझावाथी मुंझाय छे.

(७६) कर्मकलंक दूर थये छते जेवुं ने तेवुं निर्मळ आत्म स्वरूप प्रगटे छे, त्यारे आत्माने तेनो साक्षात् अनुभव थाय छे.

(७७) कर्मकलंकने दूर करवा माटे सर्वज्ञ प्रभुए सम्यग् ज्ञान दर्शन अने चारित्ररुपी श्रेष्ठ साधन बतावेलुं छे.

(७८) एज साधनथी पूर्वे अनेक महाशयोए आत्म शुद्धि करी छे, वर्तमान काळे साक्षात करे छे; अने आगामी काळे करशे एम समजीने उक्त साधनमां दृढतर उद्यम करवो युक्त छे.

(७९) ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, वीर्य अने उपयोग एज आत्मानुं अनन्य लक्षण छे, एथी भिन्न विपरीत लक्षण अजीव जडनुंज छे.

(८०) स्व लक्षणांकित सद्गुणोमां रमण करवुं ते स्वभाव रमण कहेवाय छे, अने तेथी विपरीत दोषोमां विभाव प्रवृत्ति कहेवाय छे. मोक्षार्थीए विभाव प्रवृतीने तजी स्वभाव रमणज करवुं उचित छे, एम करवाथी आत्मानुं शुद्ध स्वरुप प्रगट थाय छे.

(८१) सम्यग् ज्ञान, दर्शन, अने चारित्ररुपी रत्नत्रयीनुं संसेवन करवाथी जेमने अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र अने अनंत-वीर्यरुपी अनंत चतुष्टयी प्राप्त थयेल छे; एवा परमात्मपद प्राप्त महापुरुषोज मोक्षार्थीओ ए ध्यावा योग्य छे.

(८२) एवा परमात्मानुं ध्यान करवाथी मन स्थिर थाय छे, इंद्रियो अने कषायनो जय थाय छे, अने शांत रसनी पुष्टिथी आ-

त्मा पोतेज परमात्मपदनो अधिकारी थाय छे, घनघाति कर्मनो क्षय थतांज पोते परमात्म रुप थाय छे, माटे मोक्षार्थी जनोए एवाज परमात्म प्रभुनुं ध्यान करवुं के जेथी अंते पोते पण तद्रूपज थाय.

(८३) एवा परमात्मपद प्राप्त पुरुषो पण अवशिष्ट अघाति कर्म क्षय थतां सुधी तो शरीरधारीज होय छे पण संपूर्ण कर्मथी मुक्त थये छते तेओ शरीरमुक्त–अशरीरी पूर्ण सिद्ध अवस्थाने प्राप्त थाय छे अने एकज समयमां सर्वथा सर्व बंधन मुक्त छता लोकना अग्र भागे जइ स्थितिने भजे छे.

(८४) त्यां तेओ अनंत ज्ञानादिक स्वरुप स्वभावमां स्थित छतां परमानंदमां मग्न रहे छे जन्म मरणादिक सर्व बंधनथी सर्वथा मुक्तज रहे छे एवा सिद्ध परमात्मा पण अनंत छे.

(८५) एवा सिद्ध भगवानना सद्गुणोनुं अनुकरण करीने जे तेमनुं अभेदपणे ध्यान करे छे ते रूफीतारायो पण तेवीज स्थितिने अंते भजे छे.

(८६) एवा भावी सिद्ध पुरुषो पण अनंत छे.

(८७) उत्तम प्रकारना आचार विचारमां कुशलपणे पोते प्रवर्तता छता अन्य मोक्षार्थी वर्गने प्रवर्तावनारा आचार्य महाराजा, पवित्र अंग उपांगरुप आगम सिद्धांतने संपूर्ण जाणीने अन्य विनीत

मार्गने परमार्थ दावे पढावनारा उपाध्याय महाराजा, तथा पवित्र रत्नत्रयीना पालन पूर्वक अन्य आत्मार्थी जनोने यथाशक्ति आलंबन आपनारा मुनिराज महाराजा सर्वोत्तम लोकोत्तर मार्गना सेवनथी पूर्वोक्त परमात्म पदना पूर्ण अधिकारी होवाथी अनुक्रमे परमात्मपद पामीने संपूर्ण सिद्धरूप थाय छे.

(८८) जेओ संसारीक सुख संयोगोनी अनित्यता विचारीने संसारना सर्व संबंधथी विरक्त थइ उदासीन भाव धारण करी परमात्म पंथने अनुसरता कटिबद्ध थइ स्व स्वभावमां स्थित थइ सिद्ध परमात्माने अभेद भावे ध्यावे छे तेओ सर्व दुःखबंधनने छेदीने निश्चे सिद्ध दशाने प्राप्त थाय छे.

(८९) एवा महापुरुषोनो समागम मोक्षार्थी जीवोने परम आशीर्वादरूप छे एम समजीने सर्व प्रमाद तजी सत्समागमनो बनतो लाभ लेवा चूकवुं नहिं, एवा सत्समागमथी क्षण वारमां अपूर्व लाभ संपादन थाय छे.

(९०) जेमनुं मन सत्समागम वडे ज्ञान वैराग्यमां तरबोळ रहे छे तेमनुं सुख तेओज जाणे छे. प्रियाना आलिंगनथी के चंदनना रसथी जेवी शीतळता वळती नथी एवी शीतळता वैराग्य रसनी लहेरीयोथी प्रगटे छे. जेम वैराग्य रसनी वृद्धि थाय तेम प्रयत्न करवो जरुरनो छे.

(९.१) वैराग्य रसथी अनादि काळनो रागादिकनो ताप उपशमे छे, तृष्णा शांत थाय छे, अने ममत्वभाव दूर थाय छे, यावत् मोहनुं जोर नरम पडे छे अने चारित्रमार्गनी पुष्टि थाय छे.

(९.२) वैराग्य रसनी अभिवृद्धिथी एवी तो उत्तम उदासीन दशा छाय जाय छे के तेथी सर्वत्र समानभाव वर्ते छे. निंदा-स्तुतिमां तेमज शत्रु-मित्रमां समपणुं आववाथी हर्ष शोक थता नथी. अनुकूळ के प्रतिकूळ सर्व संयोगोमां समचित्तपणुं आवे छे तेथी स्वभावनी शुद्धि विशेषे थाय छे.

(९.३) वैराग्यनी वृद्धिथी संसारवास काराग्रह जेवो भासे छे अने तेथी विरक्त थइ पारमार्थिक सुख माटे यत्न करवा मन दोराय छे.

(९.४) शांत रसनी पुष्टि थतां द्रव्य अने भाव करुणानी वृद्धि थाय छे अने शांत रसना समुद्र एवा वीतराग प्रभुना वचन उपर पूर्ण प्रतीति आवे छे जेथी गमे तेवी कसोटीना वखते पण सत्य मार्गथी चलायमान थवातुं नथी.

(९.५) प्रशम रसनी पुष्टि थवाथी अपराधी जीवनुं मनथी पण अनिष्ट-अहित चिंतवन करातुं नथी आवी रीते विवेक धर्मनी मोक्ष महेलनो मजबूत पायो नंखाय छे अने सहज धर्मकरणी मोक्ष साधक थाय छे.

(९६) चिरकाळना लांबा अभ्यासथी शांतवाहिता योगे अहिंसादिक महाव्रतोनी दृढता अने सिद्धि थाय छे जेथी समीपवर्ती हिंसक जीवो पण पोतानो क्रूर स्वभाव तजी दइने शांत भावने भजे छे अने सातिशयपणाथी देव दानवादिक पण सेवामां हाजर रहे छे. आवो अपूर्व महिमा शांत-वैराग्य रसनोज छे एम सर्व मोक्षार्थी जनोने विशेषे प्रतीत थाय छे तेथी तेमां तेओ अधिक प्रयत्न करे छे.

(९७) जेमने मन, वचन अने कायानी संपूर्ण स्थिरता प्राप्त थइ छे एवा योगीश्वरो गाममां के अरण्यमां दिवसे के रात्रीमां सरखी रीते स्व स्वभावमांज स्थित रहे छे. कदापि संयम मार्गमां अरति भजताज नथी. सुवर्णनी पेरे विषम संयोगोमां घटवाने ते वर्ते छे.

(९८) जेओ फक्त अन्यनेज शिखामण देवामां शूरा छे तेओ खरी रीते पुरुषनी गणनामांज नथी. पण जेओ पोतानेज उत्तम शिखामणो आपीने चारित्र मार्गमां स्थिर करे छे तेओज खरेखर सत्पुरुषोनी गणनामां गणावा योग्य छे.

(९९) कांचनने जेम जेम अग्निमां तपाववामां आवे छे तेम तेम तेनो वान वधतोज जाय छे. शेलडीना सांठाने जेम जेम छेदवामां के पीलवामां आवे छे तेम तेम ते सरस मिष्ट रस समर्पे छे.

तेमज चंदनने जेम जेम घसवामां के कापवामां आवे छे तेम तेम ते तेना घसनार के कापनारने उत्तम प्रकारनी सुगंध या खुशबो आपे छे. तेवीज रीते सत्पुरुषोने प्राणांत कष्ट पडये छते पण कदापि प्रकृतिनो विकार थतोज नथी. ते तो तेवे वखते उलटी अधिक उज्जळी थइ आत्म लाभ भणी थाय छे आवाज पुरुषो जगतमां खरा पुरुषनी गणनामां गणावा योग्य छे.

(१००) योगी पुरुषोने वैराग्य–पुष्टिथी जे अंतरंग सुख थाय छे तेवुं सुख इंद्रादिकने स्वप्नमां पण संभवतुं नथी. केमके इंद्रादिकनुं सुख विषयजन्य होवाथी केवळ बहिरंग–बाह्य–कल्पितज छे.

(१०१) मध्य–उदरनी दुर्बळताथी कृशोदरी–स्त्री शोभे छे, तपोनुष्ठानवडे थयेली शरीरनी दुर्बळताथी यति–मुनि शोभे छे, अने मुखनी कृशताथी घोडो शोभे छे, पण तेओ कंइ आभुषणथी शोभतां नथी. सर्व कोइ स्व स्व लक्षण लक्षित छतांज शोभे छे.

(१०२) जे स्त्रीनां मेघाळ वचन सांभळीने चंचळ–चित्त थतो नथी तेमज स्त्रीना नेत्र कटाक्षथी पण लगारे संक्षोभ पामतो नथी तेज योगीश्वर रागद्वेष विवर्जित होवाथी जगतमां जयवंतो वर्ते छे.

(१०३) अनेक दोषथी भरेली कामनी कुपित थये छते पण कामातुर जीव तेणीनो आदर करतो जाय छे. एवी कामांधताने धिक्कार पडो.

(१०९) जेम इंधनथी अग्नि शांत थतो नथी, परंतु ते वृद्धिने पामे छे तेम विषय भोगथी इंद्रियो तृप्त थती नथी परंतु तेथी तृष्णा वधती जाय छे. अने जेम जेम विशेषे विषय सेवन करवा जीव ललचाय छे तेम तेम अग्निमां आहुतिनी पेरे कामाग्निनी वृद्धि थया करे छे.

(११०) अनुभव ज्ञानीयोए युक्तज कथुं छे के ज्ञान-वैराग्यज परममित्र छे, काम भोगज परमशत्रु छे, अहिंसाज परम धर्म छे अने नारीज परम जरा छे ( केमके जग विषयलंपटीनो शीघ्र पराभव करे छे. )

(१११) वळी युक्तज कथुं छे के तृष्णा समान कोइ व्याधि नथी अने संतोष समान कोइ सुख नथी.

(११२) पवित्र ज्ञानामृत या वैराग्यरसथी आत्माने पोषवाथी तृष्णानो अंत आवे छे अने संतोष गुणनी प्राप्ति अने वृद्धि थायछे.

(११३) संतोष सर्व सुखनुं साधन होवाथी मोक्षार्थी जनोए ते अवश्य सेवन करवा योग्य छे. अने लोभ सर्व दुःखनुं मूळ होवाथी अवश्य तजवा योग्य छे. लोभ-वृत्ति तजवाथी संतोष गुण प्रगटे छे.

(११४) क्रोधादिक चारे कषाय, संसाररूपी महावृक्षनां ऊंडा मजबूत मूळ छे. संसारनो अंत करवा इच्छनार मोक्षार्थीए कषाय-

नोज अंत करवो युक्त छे. कषायनो अंत थये छते भवनो अंत थयोज समजवो.

(११५) उपशम भावथी क्रोधने टाळवो, विनयभावथी मानने टाळवो, सरलभावथी माया-कपटनो नाश करवो अने संतोषथी लोभनो नाश करवो. कषायने टाळवानो एज उपाय ज्ञानीयोए बताव्यो छे.

(११६) राग अने द्वेषथी उक्त चारे कषायने पुष्टि मळे छे माटे वीतराग प्रभुए सर्व कर्मनो जड जेवा राग अने द्वेषनेज मूळथी टाळवा वारंवार उपदेश कर्यो छे. द्वेषथी, क्रोध अने माननी तथा रागथी माया अने लोभनी वृद्धि थाय छे. राग-द्वेषनो क्षय थवाथी सर्व कषायनो स्वतः क्षय थइ जाय छे. माटे मोक्षार्थीए राग-द्वेषनो अवश्य क्षय करवो युक्त छे.

(११७) विषय भोगनो लालसाथी राग-द्वेषनी उत्पत्ति अने वृद्धि थाय छे माटे मोक्षार्थीए विषय लालसाने तजीने सहज संतोष गुण सेववो युक्त छे.

(११८) विविध विषयनी लालसावाळुं मर्कट मनज दुर्गतिनुं मूळ छे माटे एवा मननेज मारवा महाशयो भार दइने कहे छे.

(११९) मनने मारवाथी इंद्रियो स्वतः मरी जाय छे. इंद्रियोना

मरणथी विषयलालसानो अंत आववाथी रागद्वेषरुप कषायनो पण अंत आवे छे, रागद्वेष रुप कषायनो क्षय थवाथी घाति कर्मनो क्षय थाय छे अने अनंत ज्ञानादिक सहज अनंत चतुष्टयी प्रगट थाय छे. यावत् अवशिष्ट अघाति कर्मनो पण अंत थतांज अज अविनाशी मोक्ष पदवी प्राप्त थाय छे.

(१२०) मन अने इंद्रियोने वश करीने विषयलालसा तजवाथी आवो अनुपम लाभ थतो जाणीने कोण हतभाग्य कामभोगनी वांछा करीने आवा श्रेष्ट लाभ थकी चूकशे ? मुमुक्षु जनोने तो विषयवांछा हालाहल झेर जेवी छे.

(१२१) विषयलालसा हालाहल झेरथी पण आकरी छे केमके झेरतो खाधा बादज जीवनुं जोखम करे छे अने विषयनुं चिंतवन करवा मात्रथी चारित्र-प्राणनुं जोखम थाय छे. अथवा विष खाधुं छतुं एकज वखत मारे छे पण विषयवांछा तो जीवने भवोभव भटकावे छे.

(१२२) विषयसुखने वैराग्य योगे तजीने फरी वांछनार वमन-भक्षी श्वाननी उपमाने लायक छे.

(१२३) योगमार्गथी पतित थता मुमुक्षुने योग्य आलंबन आपीने पाछो मार्गमां स्थापवामां अनर्गळ लाभ रहेलो छे.

(१२४) जेम राजीमतिये रथनेमिने तथा नागिलाए भवदेव-

मुनिने तथा कोशाए सिंह गुफावासी साधुने प्रतिबोध आपीने संयम मार्गमां पुनः स्थाप्या तेम निःस्वार्थ बुद्धिथी मोक्षार्थी जीवने अवसर उचित आलंबन आपनार मोटो लाभ हांसल करी शके छे.

(१२५) मोक्षार्थी जनोए हमेशां चडताना दाखला लेवा योग्य छे पण पडताना दाखला लेवा योग्य नथी. चडताना दाखलाथी आत्मामां नूतन आवे छे, अने पडताना दाखलाथी कायरता आवे छे.

(१२६) च्हाय तो पुरुष होय के स्त्री होय पण खरो पुरुषार्थ सेववाथीज ते सद्गति साधी शके छे. पुरुष छतां पुरुषार्थहीन होय तो ते पुंगणमां नथी अने स्त्री छतां पुरुषार्थयोगे पुंगणनामां गणवा योग्यज छे. पूर्वे अनेक उत्तम स्त्रीओए पुरुषार्थना बळे परमपदनो अधिकार प्राप्त कर्यो छे. मोक्षार्थी जनोए एवा चडताना दाखला लेवा योग्य छे. तेथी स्वपुरुषार्थ जागृत थाय छे.

(१२७) केवळ पुरुषज परमपदनो अधिकारी छे, स्त्रीने तेवो अधिकार नथी एम बोलनारा पक्षपाती या मिथ्याभाषी छे खरी वात तो ए छे के जे खरो पुरुषार्थ सेवे छे ते च्हाय तो पुरुष होय यातो स्त्री होय पण अवश्य परमपदनो अधिकारी होवाथी परम-पद मोक्षसुखने साधी शके छे. पुरुषनी पेरे अनेक स्त्रीओए पूर्वे परमपद साध्युं छे.

(१२८) सम्यग् ज्ञानदर्शन अने चारित्रनुं विधिवत् पालन करवुं ते खरो पुरुषार्थ छे. पुरुषार्थहीन कायर माणसो तेम करी शकतां नथी.

(१२९) अहिंसादिक पांच महाव्रत तथा रात्रीभोजननो सर्वथा त्याग करवारूपी छठुं व्रत विवेकबुद्धिथी समजीने ग्रहण करी सिंहनी पेरे शूरवीरपणे ते सर्व व्रतोनुं यथाविधि पालन करवुं तथा अन्य योग्य–अधिकारी स्त्रीपुरुषोने शुद्ध मार्ग समजावी सन्मार्गमां स्थापी तेमने यथोचित सहाय आपवी ते खरो कल्याणनो मार्ग छे.

(१३०) सर्व जीवोने आत्म समान लेखीने कोइने कोइ रीते मनथी, वचनथी के कायाथी हणवो नहिं, हणाववो नहिं के हणनारने संमत थवुं नहिं ए प्रथम महाव्रतनुं स्वरूप छे. एम सर्वत्र समजी लेवानुं छे.

(१३१) क्रोधादिक कषायथी, भयथी के हास्यथी जूठ बोलवुं नहिं, जूठ बोलाववुं नहिं तेमज जूठ बोलनारने संमत थवुं नहिं ए बीजुं महाव्रत छे. पवित्र शास्त्रना मार्गने मूकीने स्वच्छंदे बोलनार मृषावादीज छे.

(१३२) पवित्र शास्त्रनी आज्ञा विरुद्ध कोइपण चीज स्वामीनी रजा विना लेवी नहिं, लेवडाववी नहिं, तेमज लेनारने संमत थवुं

नहिं. संयमना निर्वाह माटे जे कांइ अशन वसनादिक जरुर होय ते पण शास्त्र आज्ञा मुजब सद्‌गुरुनी संमति लइने अदीनपणे गवेषणा करतां निर्दोष मळे तोज ग्रहण करवुं ए त्रीजुं महाव्रत कह्युं छे.

(११३) देव, मनुष्य के तिर्यंच संबंधी विषयभोग मन, वचन, के कायाथी सेववा नहिं बीजाने सेवराववा नहिं अने सेवनारने संमत थवुं नहिं ए चोथुं महाव्रत जाणवुं.

(११४) कंइ पण अल्प मूल्यवाळी के बहु मूल्यवाळी वस्तु उपर मुर्छा राखवी नहिं, संयमने बाधकभूत कोइ पण वस्तुनो संग्रह करवो नहिं, कराववो नहिं, तेमज करनारने संमत थवुं नहिं. ए पांचमुं महाव्रत छे.

(११५) अशन, पाणी, खादिम के स्वादिम रात्री समये (सूर्य अस्त पछी अने सूर्य उदय पहेलां) सर्वथा वापरवां नहिं वपराववां नहिं तेमज वापरनारने संमत थवुं नहिं ए छठुं व्रत छे.

(११६) पूर्वोक्त सर्व महाव्रतोनुं यथाविधि पालन करतां जेम रागद्वेषनी हानी थाय तेम सावधानपणे प्रवृति निवृत्ति मार्ग स्वीकारी तेनो यथार्थ निर्वाह करवो, अने अन्य आत्मार्थीजनोने यथाशक्ति यथावकाश सहाय करवी ते उत्तम प्रकारनो पुरुषार्थ छे.

(११७) सद्‌गुरुनुं शरण ल्हइ तेमनी पवित्र आज्ञानुसारे वर्तनार महाशयोनो सकळ पुरुषार्थ सफळ थाय छे.

(१३८) सद्गुरुनी कृपाथी माप्त थयेला सद्बोधवडे, संयम मार्गमां आवता अपायो सहेलाइथी दूर करी शकाय छे.

(१३९) मुमुक्षुजनोए चंद्रनी पेरे शीतळ स्वभावी, सायरनी जेवा गंभीर, भारंड पंखीनी जेवा ममाद रहीत, अने कमळनी पेरे निर्लेप थवुं जोइए. यावत मेरु पर्वतनी पेरे निश्चळता धारीने सिंहनी जेम शूरवीर थइने दर्पणनी पेरे निर्मळ धर्मनी धुरा मुनिजनोए अवश्य धारवी जोइए.

(१४०) मुमुक्षुजनोए कंचन अने कामनीने दूरथीज तजवां जोइए.

(१४१) मुमुक्षुजनोए राय अने रंकने सरखा लेखवा जोइए. तथा समभावथी तेमने धर्म उपदेश आपवो जोइए.

(१४२) मुमुक्षुजनोए नारीने नागणी समान लेखी तेणीनो संग सर्वथा तजवो जोइए. नारीना संगथी निश्चे कलंक चडे छे.

(१४३) मुमुक्षुजनोए समरस भावमां झीलतां थकां शास्त्र भणाइन कर्या करवुं जोइए.

(१४४) मुमुक्षुजनोए अधिकारीनी हितमिता हृदयमां धारीने स्व शक्तिने गोपव्या विना तेनुं यत्नथी पालन करवुं जोइए. कोइ

रीते अधिकारीनी हितशिक्षानो अनादर नज करवो जोइए.

(१४५) मुमुक्षु जनोए क्षुधादिकनो उदय थये छते गुर्वादिकनी संमती लइने निर्दोष आहार पाणीनी गवेषणा करी तेवो निर्दोष आहार प्रमुख मळे तो ते अदीनपणे लइने गुर्वादिकनी समीपे आवीने तेनी आलोचना करी गुर्वादिकनी रजाथी अन्य मुमुक्षु जननी यथायोग्य भक्ति करीने लोलुपता रहीत लावेलो आहार संयमना निर्वाह माटे वापरतां मनमां समभाव राखी तेने वखाण्या के वखोडयाविना पवित्र मोक्षना मार्गमां पुनः कटि बद्ध थइने विशेषे उद्यम करवो जोइए.

(१४६) मुमुक्षु जनोनी शास्त्र आज्ञा मुजब वर्त्तीने करवामां आवती माधुकरी भिक्षाने ज्ञानी पुरुषो 'सर्व संपत् करी' कहे छे.

(१४७) मुमुक्षु जनोनी शास्त्र आज्ञा विरुद्ध वर्त्तीने करवामां आवती भिक्षाने ज्ञानी पुरुषो 'बलहरणी' कहीने बोलावे छे.

(१४८) केवळ अनाथ अशरण एवा आंधळां पांगळां विगेरे दीनमनोनी भिक्षाने ज्ञानी पुरुषो 'वृत्ति भिक्षा' कहीने बोलावे छे.

(१४९) मुमुक्षु जनोए शास्त्र विरुद्ध मार्गे वर्त्ततां थती 'बलहरणी' भिक्षाने सर्वथा तजीने शास्त्र विहित मार्गे वर्त्तीने 'सर्व संपत्करी' भिक्षानोज खप करवो युक्त छे.

(१५०) मुमुक्षु जनोए अकृत, अकारित अने असंकल्पि आहार गवेषीने ग्रहण करवो जोइए. पोते नहि करेलो नहि करा तेमज पोताने माटे खास संकल्पीने गृहस्थादिके नहि करेलो के रावेलोज आहार मुमुक्षु जनोने कल्पे छे. तेवो पण आहार गवे करतां मळी शके छे.

(१५१) यति धर्म याने मुमुक्षु मार्ग अति दुष्कर कयो छे के तेमां एवा निर्दोष आहारथीज संयम निर्वाह करवानो कयो छे.

(१५२) गृहस्थ जनो पोताने माटे अथवा पोताना कुटुं माटे अन्न पानादिक नीपजावता होय तेमां एवो शुभ विचार करे आपणे माटे करवामां आवता आ अन्न पाणीमांथी कदाच भा योगे कोइ महात्माना पात्रमां थोडुं पण अपाशे तो मोटो लाभ थ आवो शुभ विचार गृहस्थ जनोने हितकारीज छे.

(१५३) एवा शुभ विचार युक्त गृहस्थोए पोताने माटे के पो ताना कुटुंबने माटे नीपजावेला अन्न पाणी विगेरे मुमुक्षु मुनिने नि वामां आदर करवो.

(१५४) निर्दोष आहार पाणी विगेरेना ते वापरनार मुनि सं यमनी शुद्धि करी शके छे तेवी उत्तम रीते रहेतां संयमनी विरा धना थाय छे.

(१५५) मुमुक्षुजनोए शब्द, रूप, रस, गंध अने स्पर्श संबंधी सर्व विषयआसक्तिथी सावधपणे दूर रहेवुं युक्त छे.

(१५६) मुमुक्षुजनोए विषय वासनानेज हठाववा यत्न करवो जोइए.

(१५७) मुमुक्षुजनोए गृहस्थोनो परिचय तजीने ब्रह्मचर्यनी खूब पुष्टि थाय तेम पवित्र ज्ञान ध्याननो सतत अभ्यास करवो जोइए.

(१५८) मुमुक्षुजनोए स्त्री, पशु, पंडग विनानुं संयमने अनुकूळ स्थानज रहेवाने पसंद करवुं जोइए.

(१५९) मुमुक्षुजनोए कामविकार पेदा थाय एवी कोइ पण चेष्टा करवी न जोइए. स्त्री कथा, स्त्री शय्या, स्त्रीनां अंगोपांगनुं नीरीक्षण, स्त्री समीपे स्थिति, पूर्वे करेली कामक्रीडानुं स्मरण, स्निग्ध भोजन तथा प्रमाणातिरक्त भोजन, तथा शरीर विभूषादिक सर्वे तजवां जोइए.

(१६०) मुमुक्षुजनोए पूर्वे थयेला महा पुरुषोना पवित्र चारित्रने जाणीने तेमनुं यथार्थ अनुकरण करवाने सदा सावधान रहेवुं जोइए.

(१६१) मुमुक्षुजनोए गमे तेवा संयोगोमां संयमथी चलायमान थवुं न जोइए. देव, मनुष्य के तिर्यंचे करेला सर्व अनुकूळ के प्रतिकूळ उपसर्ग परीषहोने अदीनपणे आत्म कल्याणार्थे सहन करवा जोइए.

(१६२) मुमुक्षुजनोए मार्गमां चालतां धुंसरा प्रमाण भुमीने आगळ जोतां कोइ पण न्हाना के मोटा जीवने जोखम न पहोंचे तेम करुणा नजरथी तपासीने चालवुं जोइए.

(१६३) मुमुक्षु जनोए जरुर पडतुं बोलता कोइने अप्रीति न उपजे एवुं हित मित मिष्ट अने सत्य धर्मने बाधक न थाय तेवुं भाषण करवुं जोइए.

(१६४) मुमुक्षु जनोए संयमना निर्वाह माटे जरुर पडये छते ४२ दोष रहीत आहार पाणी विगेरे गुर्वादिकनी संमतिथी लावीने विधिवत् वापरवां जोइए.

(१६५) मुमुक्षु जनोए कोइपण वस्तु लेतां या मूकतां कोइ पण जीवनी विराधना थइ न जाय तेम संभाळीने ते वस्तु लेवी मूकवी जोइए.

(१६६) मुमुक्षु जनोए लघुनीति वडीनीति विगेरे शरीरना सर्व मळनो त्याग निर्जीव स्थानमां जइने विधिवत् करवो जोइए.

(१६७) मुमुक्षुजनोए मुख्यपणे मनने गोपवीने धर्म ध्यानमां जोडवुं जोइए. जेम बने तेम तेने विविध विकल्प जाळथी मुक्त राखवुं जोइए.

(१६८) मुमुक्षुजनोए मुख्यपणे तथाप्रकारना कारणविना मौनज धारण करी रहेवुंज जोइए. जरुर जणातां सत्य निर्दोषज भाषण करवुं जोइए.

(१६९) मुमुक्षुजनोए मुख्यपणे संयमार्थे जवा आववाथी जरुर न होय तो कायाने काचबानी पेरे गोपवी राखवी जोइए स्थिर आसन करीने पवित्र ज्ञान ध्याननोज अभ्यास करवो जोइए.

(१७०) मुमुक्षुजनोए चालवानी, बेसवानी, उठवानी, सुवानी, खावानी, पीवानी के बोलवानी जे जे क्रिया करवी पडे ते ते कोइ जीवने दुःख न थाय तेमज संभाळपूर्वक करवी जोइए.

(१७१) मुमुक्षुजनोए रसगृद्ध नहि पण परिमितभोजी थवुं जोइए.

(१७२) मुमुक्षुजनोए संयम अनुष्ठानने समभावपूर्वक प्रमाद रहित सेवीने अन्य मुमुक्षुजनोने यथाशक्ति संयममां सहायभूत थवुं जोइए. एक क्षण मात्र पण कल्याणार्थीए प्रमाद करवो न जोइए.

(१७३) प्रीय मनोहर अने स्वाधीन भोगने जे जाणी जोइने तजे छे, तेज खरो त्यागी कहेवाय छे.

(१७४) वस्त्र, गंध, माल्य अलंकार तथा स्त्री शय्यादिक नहि मळवा मात्रथी भोगवतो नथी. पण मनथी तो तेवा विषयमां सार मानीने मग्न रहे छे ते त्यागी कहेवाय नहीं.

(१७५) जो जळमा मच्छनी पद पंक्ति माल्म पडे के आकाशमां पंखीनी पद पंक्ति जणाय, तोज स्त्रीना गहन चरित्रनी समज पडी शके, तात्पर्य के स्त्रीना चरित्रनो पार पामवो अशक्य छे.

(१७६) प्रियालापथी कोइनी साथ वात करती कामनी कटाक्षवडे कोइ अन्यने सानमां समजावती होय तेम वळी हृदयथी तो कोइ बीजानुं ध्यान [ चिंतवन ] करती होय, एवी स्त्रीनी चंचळताने धिक्कार पडो. स्त्रीओ प्रायः कपटनीज पेटी होय छे.

(१७७) जो मन वैराग्यना रंगथी रंगायलुं न होय तो दान, शील, अने तप केवळ कष्टरुपज थाय छे. वैराग्य युक्त करेली सर्व धर्म करणी कल्याणकारी थाय छे. माटे जेम बने तेम वैराग्य भावनी वृद्धि करवी युक्त छे. ते विना अलुणा धान्यनी पेरे धर्म करणीमां लहेजत आवती नथी, वैराग्य योगे तेमां भारे मीठाश आवे छे.

(१७८) अभिनव अध्यात्मिक शास्त्रो वांचवाथी सहजे वैराग्यनी वृद्धि थाय छे.

(१७९) मैत्री, मुदिता, करुणा अने मध्यस्थ एवी चार भावनाओनुं संयमना कामीए अवश्य सेवन करवुं जोइए.

(१८०) जगतना सर्वे जंतुओ आपणा मित्र छे, कोइ पण आपणा शत्रु नथी, ते सर्वे सुखी थाओ, कोइ दुःखी न थाओ, सर्वे सुखना मार्गे चालो एवी मतिने मैत्रीभावना कहे छे.

(१८१) सद्गुणीना सद्गुणो जोइने चित्तमां राजी थवुं. जेम चंद्रने देखीने चकोर राजी थाय छे, अथवा मेघनो गर्जारव सांभळीने मोर राजी थाय छे; तेम गुणीने देखी प्रमुदित थवुं, अंतःकरणमां आनंदना उर्मीओ उठे तेनुं नाम मुदिता भावना कहेवाय छे.

(१८२) कोइ पण दुःखीने देखी दयाई दीलथी शक्ति अनुसारे तेने सहाय करवी तेमज धर्म कार्यमां सीदाता साधर्मी भाइने योग्य आलंबन आपवुं तेनुं नाम करुणा भावना कहेवाय छे.

(१८३) जेने कोइपण प्रकारे हितोपदेश असर करी शके नहिं एवा अत्यंत कठोर मनवाळा जीव उपर पण द्वेष नहि करतां तेवाथी दूरज रहेवुं तेनुं नाम मध्यस्थ भावना कहेवाय छे.

(१८४) बीजी पण अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचित्व, आश्रव, संवर, निर्जरा, लोक स्वभाव, बोधि दुर्लभ अने स्व तत्वनुं चिंतवन द्वादश अनुप्रेक्षा,-भावना कही छे.

(१८५) भावनाभवनाशिनि अर्थात् आवी उत्तम भावनाथी भव संततिनो क्षय थइ जाय छे. अने शांतरसनी वृद्धिथी चित्तनी

शांति-प्रसन्नता थाय छे. माटे मोक्षार्थी जनोए अवश्य उक्त भावनाओनो अभ्यास कर्या करवो युक्त छे.

(१८६) गमे तेटली कळा प्राप्त थाय, गमे तेवो आकरो तप तपाय, अथवा निर्मळ किर्त्ति प्रसरे परंतु अंतरमां विवेक कळा जो न प्रगटी तो ते सर्व निष्फळज छे. विवेक कळाथी ते सर्वनी सफळता छे.

(१८७) विवेक ए एक अभिनव सूर्य या अभिनव नेत्र छे. जेथी अंतरमां वस्तु तत्त्वनुं यथार्थ दर्शन थाय एवुं अजवालुं थाय छे माटे बीजी बधी जंजाळ तजीने केवळ विवेककळा माटे उद्यम करवो युक्त छे.

(१८८) सत् समागम योगे हितोपदेश सांभळवाथी या तो आप्त प्रणीत शास्त्रना चिर परिचयथी विवेक प्रगटे छे.

(१८९) विवेकवडे सत्यासत्यनो निर्णय करी शकाय छे. ते विना हिताहित कृत्याकृत्य भक्ष्याभक्ष्य पेयापेय, उचितानुचित के गुणदोषनी खात्री थइ शकती नथी. विवेक वडेज असत् वस्तुनो त्याग करीने सद् वस्तुनो स्वीकार करी शकाय छे.

(१९०) जेम निर्मळ आरिसामां सामी वस्तुनुं बराबर प्रतिबिंब पडी रहे छे, तेम निर्मळ विवेकयुक्त हृदयमां वस्तुनुं यथार्थ भान थाय छे. जेम सूक्ष्म दर्शक यंत्रथी सूक्ष्म वस्तु सहेलाइथी देखी श-

थाय छे. तेम विवेकना अधिकाधिक अभ्यासथी सुखमां सुखने दुःखमां दुःख रहेलां पदार्थनुं यथार्थ भान थइ शके छे माटेज ज्ञानी पुरुषो विवेक रहीतने पशु माने छे.

(१९१) विवेकी पुरुष आ मनुष्य भवना क्षणने पण लाखेणो (लाख मूल्य अथवा अमूल्य) लेखे छे.

(१९२) जेम राजहंस पक्षी क्षीर नीरने जुदां करीने क्षीर मात्र ग्रहे छे. तेम विवेकी पुरुष दोष मात्रने तजी गुण मात्रने ग्रहण करेछे.

(१९३) मननी क्षुद्रता ( पारकां छिद्र जोवानी बुद्धि ) मटवाथीज गुण ग्राहकता आवे छे. गुण गुणिनो योग्य आदरसत्कार करवारुप विनयगुणथी गुण ग्राहकता वधती जाय छे.

(१९४) विनय सर्व गुणोनुं वशीकरण छे. भक्ति या बाह्यसेवा, हृदय प्रेम या बहुमान सद्गुणनी स्तुति अवगुणने ढांकवा अने अवज्ञा, आशातना, हेलना, निंदा, के खिंसाथी दूर रहेवुं एवा विनयना मुख्य पांच प्रकार छे.

(१०५) जेम अणधोयेला मेला वस्त्र उपर मेल चढी शकतो नथी. अथवा विषम भूमिमां चित्र उठी शकतुं नथी. तेम विनयादि गुण हिनने सत्य धर्मनी प्राप्ती थइ शकती नथी.

(१९६) विनयादि सद्गुण संपन्नने सहेजे धर्मनी प्राप्ती थइ शके छे.

(१९७) विनयादि शून्यने विद्यादिक उलटी अनर्थकारी थाय छे. माटे प्रथम विनयादिकनोज अभ्यास करवो योग्य छे.

(१९८) धर्मनी योग्यता-पात्रता प्राप्त करवी ए प्रथम अवश्यनुं छे. दुध थकी गायने दुःख थाय छे अने दुध थकी सर्पने झेर थाय छे. ए उपरथीज पात्रापात्रनो विवेक धारवो प्रगट समजाय छे.

(१९९) धर्मनी योग्यता मेळववा माटे नीचेना २१ गुणोनो खूब अभ्यास करवो खास जरुरनो छे.

१ अक्षुद्रता-गंभीरता-गुण ग्राहकता. २ सोम्यता-रसलता. ३ निरोगता-अंग सौष्ठव-सुंदराकृति. ४ जनप्रिय-लोकप्रिय. ५ अक्रुरता-मननी कोमलता-नरमाश. ६ भीरुता पाप या अपवादथी बीवापणुं. ७ अशठता-निष्कपटीपणुं-सरलता. ८ दाक्षिण्यता मोटानी अनुजा पाळवी ते. ९ लजालुता-मर्यादा शीलपणुं-माजा. १० दयालुता-करुणा. ११ समदृष्टि-मध्यस्थता-निष्पक्षपातपणुं. १२ गुण रागीपणुं. १३ सत्यवादीपणुं-सत्यप्रियता. १४ सुपक्ष-धर्मीकुटुंब होवापणुं. १५ दीर्घ दर्शिता-लांबी नजर पहोंचाडवापणुं. १६ विशेषज्ञता-लांबी समज. १७ वृद्धानुसारीपणुं शिष्टानुसारिता. १८ विनीतता-नम्रता. १९ कृतज्ञता-कर्या गुणनुं जाणपणुं. २० परोप-

कारता-परहितें चिंता. २१ लब्धलक्षता-कार्यदक्षता-सुनिपुणता, कलाकौशल्य.

(२००) पुर्वोक्त गुणना अभ्यास रहित योग्यता विनाज धर्मनी प्राप्ती थवी वंध्यापुत्र अथवा शशशृंगनी पेरे अशक्य छे.

(२०१) योग्य जीवने पण सत्य धर्मनी प्राप्ति बहुधा श्रमण निर्ग्रंथद्वारा हितोपदेश सांभळवाथीज थाय छे. माटे योग्य जीवोने पण सत् समागमनी खास अपेक्षा रहेछेज.

(२०२) हजारो ग्रंथ वांचवाथी सार न मळे एवो सरस सार क्षण मात्रमां सत्समागमथी भाग्य योगे मळी शके छे.

(२०३) दुर्जनो छतें योगे तेवा लाभथी कमनशीबज रहेछे.

(२०४) सज्जनोने तो दुर्जनोनी ईर्षाथी अभिनव जागृति रहे छे.

(२०५) दुर्जनो सज्जनोना निष्कारण शत्रु छे, पण सज्जनो तो समस्त जगतना निष्कारण मित्र छे.

(२०६) दुर्जनोने द्विजीह सर्प जेवा कह्या छे ते यथार्थज छे. केमके ते एकांत हितकारी सज्जनने पण काटे छे.

(२०७) सज्जनो तो एवा त्यागी-वैरागी दुर्जनोने पण दुःख-थवा इच्छता नथी एम तेमनुं उदार आशयपणुं सूचवे छे.

(२०८) कागडाने के कोयलाने गमे तेटलो घोयो होय तोपण ते तेनी काळाश तजेज नहि तेम दुर्जनने पण गमे तेटलुं ज्ञान आपो पण ते कदापि कुटिलता तजवानो नहि.

(२०९) सज्जनने तो गमे तेटलुं संतापशो तोपण ते तेमनी सज्जनता कदापि तजशेज नहि.

(२१०) सज्जनज सत्य धर्मने लायक छे. माटे बीजी धमाल तजी दइने केवल सज्जनताज आदरवा प्रयत्न करो.

(२११) वीतराग समान कोइ मोक्षदाता देव नथी.

(२१२) निर्ग्रंथ साधु समान कोइ सन्मार्ग दर्शक साथी नथी.

(२१३) शुद्ध अहिंसा समान कोइ भवदुःखवारक औषध नथी.

(२१४) आत्माना सहज गुणोनो लोप करे एवा रागद्वेष अने मोहादिक दोषोने सेववा समान कोइ प्रबळ हिंसा नथी.

(२१५) आत्माना ज्ञान दर्शन अने चारित्रादिक सद्गुणोने साचवी राखवा अथवा ते सहज गुणोनुं संरक्षण करवुं तेना समान कोइ शुद्ध अहिंसा नथी.

(२१६) आत्म हिंसा तज्या विना कदापि आत्म दया पाळी शकाती नथी. रागद्वेष अने मोह–ममतादिक दुष्ट दोषोने तजीने

सहज-आत्म गुणमां मग्न रहेवुं एज खरी आत्म दया छे. बीजी औपचारिक जीवदया पाळवानो पण परमार्थ रागादि दुष्ट दोषोने भावना वारवानो अने ज्ञान दर्शन अने चारित्रादिक सद्गुणोने पोषवानोज छे.

(२२७) सत्यादिक महाव्रतो पाळवानो पण एज महान् उद्देश छे, यावत् सकळ क्रियानुष्ठाननो उंडो हेतु शुद्ध अहिंसा व्रतनी रक्षा करवानोज छे.

(२२८) एवी शुद्ध समज दीलमां धारी संयमक्रियामां सावधान रहेनारा योगीश्वरो अवश्य आत्महित साधी शके छे.

(२२९) एवी शुद्ध समज दीलमां धार्या विना केवळ अंधश्रद्धाथी क्रियाकांडने करनारा साधुओ शीघ्र स्वहित साधी शकता नथी.

(२३०) शुद्ध समजवाळा ज्ञानी पुरुषोनो पूर्ण श्रद्धाथी आश्रय करी संयम पाळनारा प्रमाद रहित साधुओ पण अवश्य आत्महित साधी शके छे. केमके तेमना नियामक ( नियंता-नायक ) श्रेष्ठ छे.

(२३१) सुविहित साधुजनो मोक्षमार्गना खरा सारथी छे एवी शुद्ध श्रद्धाथी मोक्षार्थी भव्य जनोए, तेमनुं दृढ आलंबन करवुं अने तेमनी लगारे पण अवज्ञा करवी नहि.

(२३२) ग्रहण करेलां व्रत या महाव्रतने अखंड पाळनार समान कोइ भाग्यशाळी नथी, तेनुंज जीवित सफळ छे.

(२३३) ग्रहण करेलां व्रत के महाव्रतने खंडीने जे जीवे छे तेनी समान कोइ मंदभाग्य नथी. केमके तेवा जीवित करतां तो ग्रहण करेला व्रत के महाव्रतने अखंड राखीने मरवुंज सारुं छे.

(२३४) जेने हितकारी वचनो कहेवामां आवतां छतां बिलकुल काने धारतो नथी अने नहिं सांभळ्या जेवुं करे छे तेने छते काने बेहेरोज लेखवो युक्त छे. केमके ते श्रोत्रने सफळ करी शकतो नथी.

(२३५) जे जाणी जोइने खरो रस्तो तजीने खोटे मार्गे चाले छे, ते छती आंखे आंधळो छे एम समजवुं.

(२३६) जे अवसर उचित प्रिय वचन बोली सामानुं समाधान करतो नथी ते छते मुखे मुंगो छे, एम शाणा माणसे समजवुं.

(२३७) मोक्षार्थी जनोए पगपगे आदरवा योग्य सद्गुरुनुं वचनज छे.

(२३८) जन्म मरणना दुःखनो अंत थाय एवो उपाय विचक्षण पुरुषे शीघ्र करवो युक्त छे केमके ते विना कदापि सत्यथी शांति थती नथी.

(२३९) तत्त्वज्ञान पूर्वक संयमानुष्ठान सेववाथीज भवनो अंत थाय छे.

(२४०) परभव जतां संबल मात्र धर्मनुंज छे माटे तेनो विशेष लाभ करवो ते विनाज जीव दुःखनी परंपराने पामे छे.

(२४१) जेनुं मन शुद्ध-निर्मळ छे तेज खरो पवित्र छे एम ज्ञानीयो माने छे.

(२४२) जेना अंतर-घटमां विवेक प्रगट्यो छे, तेज खरो पंडित छे एम मानवुं.

(२४३) सद्गुरुनी सुखकारी सेवाने बदले अवज्ञा करवी एज खरुं विष छे.

(२४४) सदा स्वपरहित साधवा उजमाळ रहेवुं एज मनुष्य जन्मनुं खरुं फळ छे.

(२४५) जीवने बेभान करी देनार स्नेह रागज खरी मदिरा छे एम समजवुं.

(२४६) धोळे दहाडे धाड पाडीने धर्मधनने लूंटनारा विषयोज खरा चोर छे.

(२४७) जन्म मरणनां अत्यंत कडुक फळने देनारी तृष्णाज खरी भववेली छे.

(२४८) अनेक प्रकारनी आपत्तिने आपनार प्रमाद समान कोई शत्रु नथी.

(२४९) मरण समान कोई भय नथी अने तेथी मुक्त करनार वैराग्य समान कोई मीत्र नथी, विषयवासना जेथी नाबुद थाय तेज खरो वैराग्य जाणवो.

(२५०) विषयलंपट–कामांधसमान कोई अंध नथी केमके ते विवेक शून्य होय छे.

(२५१) स्त्रीना नेत्र कटाक्षथी जे न हणे तेज खरो शूरवीर छे.

(२५२) संत पुरुषोना सदुपदेश समान बीजुं अमृत नथी. केमके तेथी भव ताप उपशांत थवाथी जन्म मरणनां अनंत दुःखोनो अंत आवे छे.

(२५३) तृष्णानो त्याग करवा समान बीजो सुखनो सीधो रस्तो नथी.

(२५४) स्त्रीनां गहन चारित्रथी न छेतराय तेना जेवो कोई चतुर नथी.

(२५५) असंतोषी समान कोई दुःखी नथी केमके ते संपन्न छेटनी जेवो दुःखी रहे छे.

(२५६) पारकी याचना करवा उपरांत कोइ मोटुं लघुतानुं कारण नथी.

(२५७) निर्दोष-निष्पाप वृत्तिसमान बीजुं सारुं जीवितनुं फळ नथी.

(२५८) बुद्धिबळ छतां विद्याभ्यास नहि करवा समान बीजी कोइ जडता नथी।

(२५९) विवेकसमान जागृति अने मूढतासमान निद्रा नथी.

(२६०) चंद्रनी पेरे भव्य लोकने खरी शीतळता करनार आ कलिकाळमां फक्त सज्जनोज छे.

(२६१) परवशता नर्कनी पेरे प्राणीओने पीडाकारी छे.

(२६२) संयम या निवृत्तिसमान कोइ सुख नथी.

(२६३) जेथी आत्माने हित थाय तेवुंज वचन वदवुं ते सत्य छे पण जेथी एथी उलटुं अहित थाय एवुं वचन विचार्या विना वदवुं ते सत्य होय तो पण असत्यज समजवुं. आथीज अंधने पण अंध कहेवानो शास्त्रमां निषेध करेलो छे.

# अध्यात्म-गीता.

प्रणमिये विश्व हित[1] जैनवाणी, महानंद तरु सींचवा अमृत पाणी;
महा मोहपुर भेदवा वज्र पाणि[2], गहन भवफंद छेदन कृपाणि[3]. १

द्रव्य अनंत प्रकाशक भासक तत्त्व स्वरूप,
आतम तत्त्व विबोधक शोधक सत् चिद् रूप;
नय निक्षेप प्रमाणे जाणे वस्तु समस्त,
त्रिकरण योगे प्रणमुं जैनागम सुप्रशस्त[4]. २

जेणे आतमा शुद्धताए पिछाण्यो, तेणे लोक अलोकनो भाव जाण्यो;
आत्मरमणी मुनि जगविदिता, उपदिशी तेणे अध्यातम गीता. ३

द्रव्य सकलना भासना आगम जाणग एह,
ज्ञाता कर्ता भोक्ता रमता परिणति गेह;
ग्राहक रक्षक व्यापक धारक धर्म समूह,
दान लाभ भोग उपभोग तणो जे व्यूह. ४

संग्रह नय आतमा नगाण्यो, जेहने अंतरंग ते प्रमाण्यो;
दुविध आवरण नय वस्तु वंदे, शब्दादि नये शुद्ध आतम भावे. ५

१ सर्वने हितकारी. २ इंद्र. ३ तलवार. ४ अति सुंदर.

एम नय भंग संगे सनूरो, साधना सिद्धता रुप पूरो;
साधक भाव त्यां लगे अधूरो, साध्य सिद्धे नहि हेतु मूरो. ११

काळ अनादि अतीत अनंते जे पर रक्त,
संगांगी परिणामे वर्ते मोहासक्त;
पुद्गल भोगे रीझ्यो धारे पुद्गळ खंध,
पर कर्ता परिणामे बांधे कर्मनो बंध. १२

बंधक वीर्य करणे उदीरे, विपाकी प्रकृति भोगवे दळ निखेरे;
कर्म उदयागता स्वगुण रोके[1], गुण विना जीव भवोभवे ढोके.[2] १३

आतमगुण आवरणे न ग्रहे आतम धर्म,
ग्राहक शक्ति प्रयोगे जोडे पुद्गळ शर्म;[3]
परलाभे परभोगने योगे थाये पर करतार,
ए अनादि प्रवर्ते वाधे पर विस्तार. १४

एम उपयोग वीर्यादि लब्धि, परभाव रंगी करे कर्म वृद्धि;
परदयादिक यदा शुभ विकल्पे, तदा पुण्य कर्म तणो बंध कल्पे. १५

वेदन हिंसादिक द्रव्याश्रव करतो चंचळ चित्त,
कटुक विपाके चेतन मेळे,[4] कर्म विचित्र;[5]

१ अटकावे. २ रखडे. ३ गुप्त. ४ एकठा करे, संचे.
५ विचित्र.

आतम सर्व समान निधान महा सुखकंद,
सिद्धतणा साधर्मी सत्ताए गुण वृंद;
जेहस्वजातिं तेहथी कोण करे वध बंध,
प्रगट्यो भाव अहिंसक जाणे शुद्ध प्रबंध. २२

ज्ञाननी तीक्ष्णता चरण तेह, ज्ञान एकत्वता ध्यान गेह;
आत्म तादात्म्यता[1] पूर्ण भावे, तदा निर्मळानंद संपूर्ण पावे. २३

चेतन अस्ति स्वभावमां जेहने भासे भाव,
तेहथी भिन्न अरोचक रोचक आतम स्वभाव;
समकित भावे भावे आतम शक्ति अनंत,
कर्म नाशनो चिंतन नाणे चिंते ते मतिमंत. २४

स्वगुण चिंतन रसे बुद्धि घाले, आत्म सत्ता भणी जे निहाळे;
शुद्ध स्याद्वाद ते संभाळे[2], परघरे[3] तेह मति केम घाले. २५

पुन्य पाप व पुद्गल दल भाखे परभाव,
परभावे परगति पामे दुःख विभाव;
ते माटे निज भोगी योगीश्वर सुप्रसन्न,
देव नरक तृण मणि सम[4] भासे जेहने मन. २६

१ तन्मयता, अभेदता—एकता. २ [illegible] (वीतराग-[illegible] आज्ञाने पाळे. ३ [illegible]. ४ [illegible].

तेह समता रस तत्त्व साधे, निश्चलानंद अनुभव आराधे,
तीव्र घनघाति[1] निज कर्म तोडे, संधि[2] पडिलेहिने[3] ते विछोडे. २७

सम्यग् रत्नत्रयी रस साचो चेतन राय,
ज्ञानक्रिया चक्रे चकचूरे सर्व अपाय,[4]
कारक[5] चक्र स्वभावे साधे पूरण साध्य,
कर्ता कारण कारज एक थया निरबाध. २८

स्वगुण आयुध थकी कर्म चूरे, असंख्यात गुण निर्जरा तेह पूरे;
टळे आवरणथी गुण विकासे, साधना शक्ति तेम तेम प्रकासे. २९

प्रगटयो आतम धर्म थया सवि साधन रीत,
बाधकभाव ग्रहणता भागी जागी नीत;
उदय उदीरणा ते पण पूरण निर्जरा काज,
अनभिसंधि बंधकता नीरसता[6] आतमराज. ३०

देशपति जब थयो निज रंगी, तदा कोण थाय कुनय चाल संगी;
यदा आतमा आत्मभावे रमाव्यो, तदा बाधक भाव दूरे गमाव्यो. ३१

१ ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनी अने अंतराय कर्म. २ भाग. ३ जोइने. ४ विघ्न. ५ कर्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अपादान, अने अधिकरणरूप षट्. ६ अनाउपयोगे बंधाता कर्मनी ओछाश.

सहज क्षमा गुण शक्तिथी छेद्यो क्रोध सुभट,
मार्दव[१] भाव प्रभावथी भेद्यो मान मरद;
माया आर्जव[२] योगे लोभ ते निःस्पृह भाव,
मोह महाभड[३] ध्वंसे ध्वंस्यो[४] सर्व विभाव. ३२

एम स्वभाविक थयो आतम वीर, भोगवे आतम संपदा सुधीर;
जे उदयागता प्रकृति वळगी, अध्यापक थयो खेरवे तेह अळगी. ३३

धर्म ध्यान एक तानमे ध्यावे अरिहा सिद्ध,
ते परिणतिथी प्रगटी तात्विक सहज समृद्ध;[५]
स्व स्वरुप एकत्वे तन्मय गुण पर्याय,
ध्याने ध्याता निरमोहीने विकल्प जाय. ३४

यदा निर्विकल्पी थयो शुद्ध ब्रह्म, तदा अनुभवे शुद्ध आनंद शर्म;
भेद रत्नत्रयी तीक्ष्णताए, अभेद रत्नत्रयी में समाए. ३५

दर्शन ज्ञान चरण गुण सम्यग एक एकना हेतु,
स्व स्व हेतु थया समकाले तेह अभेद भावेनु;
पूर्ण स्वजाति समाधि घनघाति दल छिन्न,
क्षायिक भावे प्रगटे आतम धर्म विभिन्न. ३६

---

१ नम्रता, लघुता-विनय. २ सरलता. ३ सुभट-वीर.
४ विनाश्यो. ५ समृद्धि-अनर्गल धन.

पछी योग[1] रुंधी थयो ते अयोगी, भाव शैले सिताए[2] अभंगी;
पंच लघु अक्षरे कार्यकारी, भवोपग्रही[3] कर्म संतति विदारी. ३७
समश्रेणे एक समये पहोंत्या जे लोकांत,
अफुसमाण[4] गति निर्मळ चेतन भाव महांत;
चरम त्रिभाग विहीन[5] प्रमाणे प्रभु अवगाह,
आतम भेद अरुप अखंडा नंदावाह. ३८
जीहां एक सिद्धात्म तिहां छे अनंता, अवन्ना अगंधा नहि फासमंता;[6]
आत्मगुण पूर्णतावंत संता, निराबाध अत्यंत सुखास्वाद वंता. ३९
कर्त्ता कारण कारज निज परिणामिक भाव,
ज्ञाता ज्ञायक भोग्य भोग्यता शुद्ध स्वभाव;
ग्राहक रक्षक व्यापक तन्मयताए लीन,
पूरण आतम धर्म प्रकाश रसें लयलीन. ४०
द्रव्यथी जीव चेतन अलेशी, क्षेत्रथी जे असंख्य प्रदेशी;
त्पाद व्यय नास ध्रुव काळधर्म, शुद्ध उपयोग गुण भाव शर्म. ४१
स्याद्वाद आतम सत्ता रुचि समकित तेह,
आतम धर्मनो भासन निर्मळ ज्ञानी जेह;

१ मन, वचन अने काया. २ मेरुपर्वतनी जेवी निश्चलता,
विकरण. ३ अघाति. ४ अस्पर्शमान. ५ ३. ६ वर्ण गंध
स्पर्शरहित, अरुपी शुद्ध सहज स्वरुपी.

आतम रमणी चरणी ध्यानी आतम लीन,
आतम धर्म रमो तेणे[1] भव्य सदा सुख पीन.[2] ४२

अहो भव्य तमे ओळखो जैन धर्म, जेणे पामीये शुद्ध अध्यात्ममर्म;
अल्पकाळे टळे दुष्ट कर्म, पामीये सोय आनंद शर्म. ४३

नय निक्षेप प्रमाणे जाणे जीवा जीव,
स्व पर विवेचन करतां थाये लाभ सदैव;
निश्चयने व्यवहारे विचरे जे मुनिराज,
भवसागरना तारण निर्भय तेह ज्हाज. ४४

वस्तु-तत्त्वे रम्या ते निग्रंथ, तत्त्व अभ्यास तिहां साधु पंथ;
तीणे गीतार्थ चरणे रहीजे, शुद्ध सिद्धान्त रस तो लहीजे. ४५

श्रुत अभ्यासी चोमासी वासी लींमडी ठाम,
शासन रागी सोभागी श्रावकनां बहु धाम;
खरतर गछ पाठक श्री दीपचंद सु पसाय,
देवचंद्र निज हरखे गायो आतम राय. ४६

आत्म रमण करवा अभ्यासे, शुद्ध सत्ता रसीने उल्लासे;
देवचंदे रची आत्म गीता, आत्म रमणी मुनि सुप्रतीता.[3] ४७

इति अध्यात्म गीता.

---

१ ते माटे. २ पुष्ट. ३ सुप्रसिद्ध.

## क्षमा छत्रीशी.

आदर जीव क्षमा गुण आदर, म करीश रागने द्वेषजी;
समताये शीवसुख पामीजे, क्रोधे कुगति विशेषजी. आ० १
समता संजम सार सुणीजे, कल्पसूत्रनी शाखजी;
क्रोध पूर्व क्रोडि चारित्र बाळे, भगवंत एणीपेरे भाखजी. आ० २
कुण कोण जीव तर्या उपशमथी, सांभळ तुं दृष्टांतजी;
कुण कोण जीव भम्या भवमांहि, क्रोध तणे विरतंतजी. आ० ३
सोमल ससरे शीश प्रजाळ्यो, बांधी माटीनी पाळजी;
गज सुकमाळ क्षमा मन धरतो, मुक्ति गयो तत्काळजी. आ० ४
कुळ वालुओ साधु कहातो, कीधो क्रोध अपारजी;
कोणिकनी गणिका वश पडियो, रडवडियो संसारजी. आ० ५
सोवनकार करी अति वेदन, वाधरशुं वींटयुं शीशजी;
मेतारज मुनि मुगति पहोत्यो, उपशम एह जगीशजी. आ० ६
कुरुट अकुरुट बे साधु कहाता, रह्या कुणाला खाळजी;
क्रोध करी कुगते ते पहोत्या, जनम गमायो आळजी. आ० ७
कर्म खपावी मुगते पहोता, खंधक सूरिना शिष्यजी;
पालक पापीये घाणी पील्या, नाणी मनमां रीशजी. आ० ८
अच्चंकारी नारि अचंकी, तोडयो पियुशुं नेहजी;
बरस हुआ साधो दुःख बहोळो, क्रोध तणां फळ एहजी. आ० ९

चाघणे सर्व शरीर वलूर्युं, तत्क्षण छोडयां प्राणजी;
साधु सुकोशळ शिवसुख पाम्या, एह क्षमागुण जाणजी. आ० १०
कुण चंडाळ कहिजे विहुमें, निरती नहि कहे देवजी;
रुषी चंडाळ कहीजे वदतो, टाळे वेदनी टेवजी. आ० ११
सातमी नरके गयो ते ब्रह्मदत्त, काढी ब्राह्मण आंखजी;
क्रोध तणां फळ कडवां जाणी, रागद्वेष द्यो नांखजी. आ० १२
खंधक रुषीनी खाल उतारी, सह्यो परीसह जेणजी;
गरभावासना दुःखथी छुटयो, सबळ क्षमागुण तेणजी. आ० १३
क्रोध करी खंधक आचारज, हुओ अग्नि कुमारजी;
दंडक नृपनो देश प्रजाळ्यो, भमशे भवह मझारजी. आ० १४
चंडरुद्र आचारज चळतां, मस्तक दीध प्रहारजी;
क्षमा करंतां केवळ पाम्यो, नव दिक्षीत अणगारजी. आ० १५
पांचवार रुषीने संताप्यो, आणी मनमां द्वेषजी;
पंचभव सींमद्यो नंदनादिक, क्रोधतणां फळ देसजी. आ० १६
सागरचंदनुं शीश प्रजाळ्युं, निशि नभसेन नरिंदजी;
समता भाव धरी सुरलोके, पुहुतो परमानंदजी. आ० १७
चंदना गुरुणीये घणुं निभ्रंछी, धिग् धिग् तुज आचारजी;
मृगावतीने केवळ सिरि पामी, एह क्षमा अधिकारजी. आ० १८
सांब प्रद्युम्न कुमारे संताप्यो, कृष्ण द्वैपायन साहजी;
क्रोध वशे मरनुं फळ हाथां, बाळ्यो द्वारिका दाहजी. आ० १९

भरतने मारण मुठि उपाडी, बाहुबळ बळवंतजी;
उपशम रस मनमांहिं आणी, संजम ले मतिवंतजी. आ० २०
काउसगमां चडियो अति क्रोधे, प्रसनचंद्र ऋषिरायजी;
सातमी नरकतणां दल मेळयां, कडुआ तेणे कषायजी. आ० २१
आहारमांहि क्रोधे ऋषि थूंक्यो, आण्यो अमृत भावजी;
कूरगडुए केवळ पाम्युं, क्षमातणे परभावजी. आ० २२
पार्श्वनाथने उपसर्ग कीधा, कमठ भवांतर धीठजी;
नरक तिर्यंचतणां दुःख लाधां, क्रोधतणां फळ दीठजी आ० २३
क्षमावंत दमदंत मुनिश्वर, वनमां रह्यो काउस्सग्गजी;
कौरव कटक हण्यो ईंटाळे, मोडया कर्मना वर्गजी. आ० २४
सज्या पालक काने तरुओ, नाख्यो क्रोध उदीरजी;
विहुं काने खीला ठोकाणा, नवि छूटा महावीरजी. आ० २५
चार हत्यानो कारक हुंतो, दृढ महारि अतिरेकजी;
क्षमा करीने मुक्ति पहोंत्यो, उपसर्ग सही अनेकजी. आ० २६
पोहोरमांहे उपजंतो हार्यो, क्रोधे केवळ नाणजी;
देख्यो श्रीदमसार मुनिश्वर, सूत्र गुण्यो उट्ठाणजी. आ० २७
सिंह गुफावासी ऋषि कीधो, थूलिभद्र उपर कोपजी;
वेश्या वचने गयो नेपाळे, कीधो संजम लोपजी. आ० २८
चंद्रावतंसक काउसग रहियो, क्षमातणो भंडारजी;
दासी तेल भर्यो निशि दीवो, सुर पदवी लही सारजी. आ० २९

एम अनेक तर्या त्रिभुवनमे, क्षमा गुणें भवि जीवजी;
क्रोध करी कुगते ते पहोत्या, पाडंता मुख रीवजी. आ० ३०
विष हलाहल कहीये विरुओ, ते मारे एकवारजी;
पण कषाय अनंती वेळा, आपे मरण अपारजी. आ० ३१
क्रोध करंता तप जप कीधां, न पडे कांइ ठामजी;
आप तपे परने संतापे, क्रोध शुं केहो कामजी. आ० ३२
क्षमा करंतां खरच न लागे, भांगे क्रोड कलेशजी;
अरिहंत देव आराधक थावे, व्यापे सुयश प्रदेशजी आ० ३३
नगरमांहे नागोर नगीनो, ज्यां जिनवर प्रासादजी;
श्रावक लोक वसे अति सुखीया, धर्मतणे प्रसादजी. आ० ३४
क्षमा छत्रीशी खांते कीधी, आतम पर उपकारजी;
सांभळतां श्रावक पण समज्या, उपशम धर्यो अपारजी. आ० ३५
युग प्रधान जिणचंद सुरिश्वर, सकलचंद तसु शिष्यजी;
समय सुंदर तसु शिष्य भणे एम, चतुर्विध संघ जगीशजी. आ० ३६

इति क्षमा छत्रीशी संपूर्ण.

---

## यति धर्म बत्रिशी.

### दोहा.

भाव यति तेने कहो, ज्यां दशविध यति धर्म;
कपट क्रियामां म्हालता, महीयो बांधे कर्म. १

लौकिक लोकोत्तर क्षमा, दुविध कही भगवंत;
तेहमां लोकोत्तर क्षमा, प्रथम धर्म छे संत. २
वचन धर्म नामे कह्यो, तेहना पण बहु भेद;
आगम वयणे जे क्षमा, तेह प्रथम अपखेद. ३
धर्म क्षमा निज सहजथी, चंदन गंध प्रकार;
निरतिचार ते जाणीये, प्रथम सुगुण अनिवार. ४
उपकारे अपकारथी, लौकिक वळी विपाग;
बहु अतिचार भरी क्षमा, नहि संयमने लाग. ५
चार कषाये क्षय करी, जे मुनि धर्म कहाय;
वचन धर्म नामे क्षमा, जे बहु तिहां कहाय. ६
मद्दव अज्जव मुत्ति तव, पंच भेद एम जाण;
त्यां पण भाव नियंठने, चरम भेद प्रमाण. ७
इह लोकादिक कामना, विण अणसण मुख जोग;
शुद्ध निर्जरा फळ कह्यो, तप शिवसुख संजोग. ८
आश्रव द्वारने रूंधिये, इंद्रिय दंड कषाय;
सत्तर भेद संयम कह्यो, एहिज मोक्ष उपाय. ९
सत्य सूत्र अविरुद्ध जे, वचन विवेक विशुद्ध;
आलोयण मळ शुद्धता, शौच धर्म अविरुद्ध. १०
एह उपाय मनमे धरे, धर्मोपगरण जेह;
वरजित उपधि न आदरे, भाव अकिंचन तेह. ११
दीठ विषय मन हरि जे, ब्रह्म तेह गुणगेह;
दोष अनुत्तर देवने, विषय त्यागनो जेह. १२

एम अनेक तर्या त्रिभुवनमे, क्षमा गुणें भवि जीवजी;
क्रोध करी कुगते ते पहोत्या, पाडंता मुख रीवजी. आ० ३०
विष हलाहल कहीये विरुओ, ते मारे एकवारजी;
पण कषाय अनंती वेळा, आपे मरण अपारजी. आ० ३१
*क्रोध करंता तप जप कीधां, न पडे कांइ ठामजी;*
आप तपे परने संतापे, क्रोध शुं केहो कामजी. आ० ३२
क्षमा करंतां खरच न लागे, भांगे क्रोड कलेशजी;
अरिहंत देव आराधक थावे, व्यापे सुयश प्रदेशजी आ० ३३
नगरमांहे नागोर नगीनो, ज्यां जिनवर प्रासादजी;
श्रावक लोक वसे अति सुखीया, धर्मतणे प्रसादजी. आ० ३४
क्षमा छत्रीशी खांते कीधी, आतम पर उपकारजी;
सांभळतां श्रावक पण समज्या, उपशम धर्यो अपारजी. आ० ३५
जुग प्रधान जिणचंद सुरिश्वर, सकळचंद तसु शिष्यजी;
*समय सुंदर तसु शिष्य भणे एम, चतुर्विध संघ जगीसजी.* आ० ३६
इति क्षमा छत्रीशी संपूर्ण.

## यति धर्म बत्रिशी.

दोहा.

भाव यति तेने कहो, ज्यां दशविध यति धर्म;
कपट क्रियामां मालहता, महीयां बांधे कर्म. १

लौकिक लोकोत्तर क्षमा, दुविध कही भगवंत;
तेहमां लोकोत्तर क्षमा, प्रथम धर्म छे तंत. २

वचन धर्म नामे कह्यो, तेहना पण बहु भेद;
आगम वयणे जे क्षमा, तेह प्रथम अपखेद. ३

धर्म क्षमा निज सहजथी, चंदन गंध प्रकार;
निरतिचार ते जाणीये, प्रथम सूक्ष्म अतिचार. ४

उपकारे अपकारथी, लौकिक वळी विपाग;
बहु अतिचार भरी क्षमा, नहि संयमने लाग. ५

चार कषाये क्षय करी, जे मुनि धर्म लहाय;
वचन धर्म नामे क्षमा, जे बहु निर्दा कहाय. ६

मद्दव अज्जव मुत्ति तव, पंच भेद एम जाण;
त्यां पण भाव नियंठने, चरम भेद प्रमाण. ७

इह लोकादिक कामना, विण अणसण मुख जोग;
शुद्ध निर्जरा फळ कयो, तप शिवसुख संयोग. ८

आश्रव द्वारने रुंधिये, इंद्रिय दंड कषाय;
सत्तर भेद संयम कयो, एहिज मोक्ष उपाय. ९

सत्य सूत्र अविरुद्ध जे, वचन विवेक विशुद्ध;
आलोयण जळ शुद्धता, शौच धर्म अविरुद्ध. १०

खग उपाय मनमें धरे, धर्मोपगरण जेह;
वरजित उपधि न आदरे, भाव अकिंचन तेह. ११

शील विषय मन वृत्ति जे, ब्रह्म नेह गुपवित्त;
होय अनुत्तर देवने, विषय त्यागनो चित्त. १२

ए दसविध यति धर्म जे, आराधे नित्य मेव;
मूळ उत्तर गुण यतनथी, तेहनी कीजे सेव. १३
अंतर जतना विण किस्यो, वाद्य क्रियानो लाग;
केवळ कंचुकि परिहरे, निर्विष हुए न नाग. १४
दोपरहित आहार ल्ये, मनमां गारव राखि;
ते केवळ आजीविका, सुयगडांगनी साखि. १५
नाम धरावे चरणनुं, विगर चरण गुण खाण;
पाप श्रमण ते जाणीये, उत्तराध्ययन प्रमाण. १६
शुद्ध क्रिया न करी शके, तो तुं शुद्धि भाख;
शुद्ध प्ररुपक होइ करी, जिनशासन स्थिति राख. १७
उसन्नो पण करम रज, टाळे पाळे बोध;
चरण करण अनुमोदता, गच्छाचारे सोध. १८
हीणो पण ज्ञाने अधिक, सुंदर सुरुचि विशाळ;
अल्पागम मुनि नहि भलो, बोले उपदेश माळ. १९
ज्ञानवंतने केवळी, द्रव्यादिक अहि नाण;
वृहत् कल्प भाषे वळी, सरसा भाख्या जाण. २०
ज्ञानादिक गुण मच्छरी, कष्ट करे ते फोक;
ग्रंथि भेद पण तस नहीं, मूले भोळा लोक. २१
ज्यां जोहार जवेहरी, ज्ञाने ज्ञानी तेम;
हीणाधिक जाणे चतुर, मूरख जाणे केम. २२
आदर कीधे तेहने, उन्मारग थीर होय;

बाह्य क्रिया मत राचजो, पंचाशक अवलोय. २३
जेहथी मारग पामीयो, तेहने सामो थाय;
प्रत्यनीक ते पापीयो निश्चयें नरके जाय. २४
सुंदर बुद्धि पणे कर्यो, सुंदर सरव न थाय;
ज्ञानादिक वचने करी, मारग चाल्यो जाय. २५
ज्ञानादिक वचने रह्या, साधे जे शीव पंथ;
आतम ज्ञाने उजल्यो, तेह भाव निग्रंथ. २६
निंदक निश्चें नारकी, बाह्य रुचि मति अंध;
आतम ज्ञाने जे रमे, तेहने तो नहि बंध. २७
आतम साखे धर्म जे, त्यां जनतुं शुं काम; ?
जन मन रंजन धर्मनुं, मूल्य न एक बदाम. २८
जगमां जन छे बहु सुखी, रुचि नही को एक;
निज हित होय तिम कीजीये, ग्रही प्रतिज्ञा टेक. २९
दूर रही जे विषयथी, कीजे श्रुत अभ्यास;
संगति कीजे संतनी, हुइये तेहना दास. ३०
समतासें लय लाइये, धरि अध्यातम रंग;
निंदा तजीये परतणी, भजीये संयम चंग. ३१
वाचक यश विजयें कही, ए मुनिने हित वात;
एह भाव जे मुनि धरे, ते पामे शीव सात. ३२

इति संयम बत्तीसी संपूर्ण.

"जैन कोमना हितनी खातर खास निर्माण करेली समयानुसारी बहु उपयोगी सूचनाओ."

१. विदेशी भ्रष्ट वस्तुओथी आपणे सदंतर दूर रहेवुं अने स्वदेशी पवित्र वस्तुओनोज उपयोग निश्चयपूर्वक करवो अने कराववो.

२. आपणा पवित्र तीर्थोनी रक्षा माटे आपणे विशेषे सावधान रहेवुं.

३. कोइ पण प्रकारना खोटा व्यसनथी सावधानपणे दूर रहेवुं, अने अन्य भाइ व्हेनोने दूर रहेवा प्रेरणा कर्या करवी.

४. शांत रसथी भरपूर जिन-प्रतिमाने जिनवत् लेखी तेवी शांत दशा प्रगटाववा प्रतिदिन पूजा अर्चादिक करवा कराववा पूरतुं लक्ष राखवुं तथा रखाववुं.

५. परम सुख शांतिने आपवावाळी श्री जिन वाणीनो स्वाद मेळववा दिवस रात्रीमां थोडो वखत पण जरुर श्रम लेवो, अभ्यास राखवो.

६. जैन तरीके आपणुं शुं शुं कर्तव्य छे ते पूरा तोरथी जाणी लेवा अने जाणीने ते प्रमाणे वर्तवा पूरो ख्याल राखवो.

७. शरीर सारुं होय तो धर्म साधन सारी रीते साधी शकाय छे. एवी बुद्धिथी शरुआतथीज शरीरनी संभाळ राखवा सावचेत रहेवुं. वळी बाळलग्न, वृद्धविवाह, परस्त्री तथा वेश्यागमन, कुपथ्य भोजन अने कुदरत विरुद्ध वर्तनथी नाहक वियनो नाश थवा साथे शरीर कमजोर थायज छे, एम समजी उक्त अनाचारोथी सदंतर दूर रहेवा खास लक्ष राखतां रहेवुं.

८. आवकना प्रमाणमांज खर्च करवा तेमज नकामा उडाउ खर्चो बंध करी बचेला नाणांनो सदुपयोग करवा करावता पूरतुं लक्ष राखवुं अने रखाववुं.

९. धर्मादा खाते जे रकम खर्चवा धारी होय ते विलंब कर्या विना विवेकथी खर्ची देवी. कारणके सदा काळे सरखा परिणाम रही शकता नथी. वळी लक्ष्मी पण आज छे, अने काले नथी.

१०. ज्ञान दान समान कोइ दान नथी, एम समजी सहुए तेमां यथाशक्ति सहाय करवी, तत्त्व ज्ञाननो फेलावो थवा पामे तेवो प्रबंध करवो, केमके शासननी उन्नतिनो खरो आधार तत्त्वज्ञान उपरजछे.

११. जैनी भाइ व्हेनोमां पण केटलाक भागे कळा कौशल्यनी खामीथी, प्रमादथी तथा अगमचेतीपणाना अभावथी बहुधा नात वरा विगेरे नकामा खर्चो करवाथी दुःखी हालत थवा पामेल छे. ते दूर थाय तेवी देशकाळने अनुसार उछरती प्रजाने तालीम (केळवणी) आपवी दरेक स्थळे शरु करवानी पूरी जरुर छे.

१२. वीतराग प्रभुनो उपदेश सारी आलमने उपगारी थइ शके एवो होवाथी तेनो जेम प्रसार थवा पामे तेम प्रयत्न कर्या करवो. जिनेश्वर भगवाने आपेली शिखामणोनुं सार ए छे के.

क. सर्व जीवनुं भलुं करवा करावबा बनती काळजी राखवी.

ख. सादाइ अने नरमाश राखवी.

ग. समजु अने सरल (विवेकी) बनवुं.

घ. निर्लोभी थइ संतोष वृत्तिमांज सुख मानवुं.

ङ. आळस तजी चीवट राखी यथाशक्ति आत्मसाधन करवुं.

च. मन, वचन अने कायाने काबुमां राखवा तत्पर रहेवुं.

छ. सत्यनुं स्वरुप समजीने सत्यज बोलवुं, हितमित भाषण करवुं.

ज. अंतःकरण साफ राखी शुद्ध व्यवहार सेववो कोइ रीते मलीनता आदरवी नहि.

झ. उदार दिलथी आत्मार्पण करवुं, स्वार्थता तजी परमार्थ प्रति प्रेम लगाडवो, परार्थ परायण रहेवुं.

ञ. उत्तम प्रकारनुं सद्वर्तन (आदरवुं) सेववुं.

१३. काळ मुख कुसंपने जेम तेम दाटी दइ सुखदायी संपने वधारवा शासन रसिक जनोए भगीरथ प्रयत्न सेववा तत्पर थवुं.

१४. हानिकारक रीत रीवाजोने दूर करवा कराववा पूरतुं प्रयत्न करवुं.

## जैन हितोपदेश भाग ३ जो.

| पृष्ठ. | लींटी. | अशुद्ध. | शुद्ध. |
|---|---|---|---|
| १६ | २ | आस्थिर | स्थिर |
| २३ | २ | समुद्धोत्थं | समुद्रोत्थं |
| २९ | ७ | दुःपूर | दुष्पूर |
| २९ | १९ | मिनेभ | मीनेभ |
| ७० | १२ | संज्ञिकं | संज्ञकं |
| ७० | १४ | शरीररुप | शरीररूप |
| ७३ | १६ | नीरुपे | नीरूपे |
| ७३ | १६ | रूपीणी | रूपिणी |
| ९१ | १३ | लोकसंज्ञाअे | लोकसंज्ञा ए |
| ९२ | २ | एवी | एवा |
| १०७ | ३ | परेश्वेपि | परेश्वपि |
| १०७ | ५ | भेदा | भेदाः |
| १०८ | ७ | पाछली | पाछला |
| १०८ | १५ | योग | योग. |
| १०८ | १९ | करवानां | करवानां |
| १२९ | १२ | स्द् | थद् |
| १३३ | २ | मार्दीकृतं | मार्दीहतं |
| १३६ | ८ | तद् | तन |
| १३८ | ५ | पूर्णान्दघने | पूर्णानन्दघने |
| १४४ | १९ | मोटा | मोटी |
| १८१ | ९ | धारो | धारी |